साहित्य अमृत

मासिक

वर्ष-२२ अंक-४ ❖ पृष्ठ ८४ | कार्तिक-मार्गशीर्ष, संवत्-२०७३ | नवंबर २०१६

संस्थापक संपादक

स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र

❖

पूर्व संपादक

स्व. डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

❖

संपादक

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

❖

प्रबंध संपादक

श्यामसुंदर

❖

संयुक्त संपादक

डॉ. हेमंत कुकरेती

❖

कार्यालय

४/१९, आसफ अली रोड,
नई दिल्ली-११०००२
फोन : २३२८९७७७ • फैक्स : २३२५३२३३
इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

❖

शुल्क

एक अंक —₹ ३०
वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००
वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००
विदेश में
एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$4)
वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$45)

❖

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी श्यामसुंदर द्वारा
४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२
से प्रकाशित एवं ग्राफिक वर्ल्ड, १६८६,
कूचा दखनीराय, दरियागंज, नई दिल्ली-२ द्वारा मुद्रित।

❖

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

इस अंक में

संपादकीय

उड़ी कांड और भारतीय सेना... ४

प्रतिस्मृति

आगे-बढ़ो/ *आनंद प्रकाश जैन* १०

कहानी

माटी की महक/ *देवेंद्र सत्यार्थी* १४
मृत्युभोज/ *हरदर्शन सहगल* २४
सींकवाली ताई/ *सुनीता* ३०
बरगद का पेड़/ *अशोक 'अंजुम'* ३८
जंगल की दीवाली/ *रेनू सैनी* ४८
मुफ्त की दावतें/ *सुधा विजय* ५६
चिड़िया रानी गाँव चली/ *पुष्पा खरे* ६०
कच्ची मिट्टी/ *कविता त्यागी* ६४
वैभवमणि/ *कल्पनाथ सिंह* ७२

आलेख

बाल कहानी की दुनिया.../ *प्रकाश मनु* १८
द्वारिकाप्रसाद माहेश्वरी.../ *ऊषा यादव* २६
इक्कीसवीं सदी में.../ *ओमप्रकाश कश्यप* ४२
सुशील कुमार सेन.../ *ऊषा निगम* ५८

लघुकथा

जूठन/ *नीरज कुमार नीर* २३
गलती किसकी/ *विनोद शंकर गुप्त* २९
नसीहत-३७, अनूठा न्याय-५५, चहकू व महकू-७५ / *श्यामसखा श्याम*
रोती स्पर्धा और.../ *वैशंपायन चतुर्वेदी* ३९
पाकिस्तानी दुपट्टा/ *संजय कुमार* ४७
स्थगित साक्ष्य-४९, खुशियों का पासपोर्ट-६९/ *सत्य शुचि*
परिवर्तन/ *किरण राजपुरोहित 'नितिला'* ५७
यों हुआ वृक्षारोपण/ *रुद्रदत्त चतुर्वेदी* ७१

कविता

कसरत-योग कराते दादा/ *भगवती प्रसाद गौतम* १३
मौसम के नन्हे गीत/ *राजनारायण चौधरी* १७
रिश्ता समझदारी का/ *इंदु राव* ३२
झूठ बोलना छी-छी-छी/ *घमंडीलाल अग्रवाल* ३३
कथा महाभारत के युग की/ *प्रेम किशार पटाखा* ४०
शिशु गीत/ *अरशद खान* ४१
सैर पर जाते हैं.../ *बद्री प्रसाद वर्मा 'अनजान'* ५३
चलो चलें स्कूल भाइयो/ *होड़िल सिंह 'मधुर'* ६१
आसमान में उड़ता होता/ *नरेंद्र कुमार चावला* ६६
नहीं लगाती मम्मी डाँट/ *संजीव कुमार* ६७
ईश्वर से ही आस कर.../ *बसंता* ७६

निबंध

चित्रकूट में बसत हैं रहिमन अवध नरेश/ *नर्मदा प्रसाद उपाध्याय* ३४

व्यंग्य

चंदू मैंने सपना देखा/ *अशोक गौतम* ५४
बकरी पर इल्जाम/ *सुरजीत सिंह* ७०

राम झरोखे बैठ के

दुर्घटना, सड़क और अफसर/ *गोपाल चतुर्वेदी* ५०

साहित्य का भारतीय परिपार्श्व

टावर और मानव.../ *ई.पी. ज्योति* ६२

साहित्य का विश्व परिपार्श्व

अभागा कृपण/ *केस्पर फ्रेडरिक गोट्सचलक* ६८

यात्रा-संस्मरण

भारत का.../ *अनामिका प्रकाश श्रीवास्तव* ७४

वर्ग-पहेली ७७
पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ७८
साहित्यिक गतिविधियाँ ७९

संपादकीय

उड़ी कांड और भारतीय सेना की लक्षित स्ट्राइक तथा जम्मू-कश्मीर की तत्कालीन समस्या, नेताजी को सदैव अपनों से ही मिला धोखा

भारतीय सेना के द्वारा २९ सितंबर के लक्षित (सर्जिकल) स्ट्राइक के उपरांत देश में भाँति-भाँति के विवाद उत्पन्न हो गए हैं, जो दुर्भाग्यपूर्ण हैं। यह अत्यंत संवेदनशील समय है, जब हमारी कथनी और करनी में देश की एकता ही प्रकट होनी चाहिए। सरकार की ओर से विदेश मंत्री सुषमा स्वराज कांग्रेस अध्यक्ष को इस विषय में जानकारी देने के लिए उनके निवास पर गईं। सर्वदलीय बैठक के उपरांत यही मालूम हुआ कि सरकार की इस नीति से सब सहमत हैं; सब दल सेना के समर्थन में एकमत हैं और उसकी प्रशंसा करते हैं। पाकिस्तान तो इनकार कर ही रहा था कि ऐसी कोई सर्जिकल स्ट्राइक नहीं हुई। चूँकि यह सेना द्वारा की गई कारवाई थी। हमारे डायरेक्टर जनरल ऑफ मिलिटरी ऑपरेशंस ने ही मीडिया और देश को इसकी जानकारी दी और उन्होंने इस विषय में पाकिस्तान के डी.नी.म.ओ. को भी सूचना दी। दूसरे देश के राजदूतों को भी हमारे विदेश मंत्रालय ने जानकारी दी। हमारे सैन्य अधिकारी का बयान अत्यंत संतुलित था, सुरक्षा के पहलू को ध्यान में रखते हुए अधिक सैनिक कारवाई का विवेचन नहीं था। उन्होंने नियंत्रण रेखा के आसपास कारवाई का जिक्र किया, जहाँ से घुसपैठियों को भारत में भेजने की तैयारी हो रही थी।

प्राय: विश्व की सब सरकारों ने भारत के इस दावे को स्वीकार किया। चीन, जो पाकिस्तान का बहुत नजदीकी है, उसको भी कहना पड़ा कि आतंकवाद को रोकने का हर देश को अधिकार है। यह भारत की एक चेतावनी थी पाकिस्तान को। उड़ी और उसके पहले पठानकोट में पाकिस्तानी आक्रमण से देश में व्यापक बेचैनी व्याप्त है, बहुत आक्रोश है और भारत को हर आक्रमण का उचित प्रत्युत्तर देना ही होगा। वैसे हम सब जानते हैं कि पाकिस्तान अपनी हरकतों से बाज आने वाला नहीं है। बाद की घटनाओं से भी यह पता लग ही रहा है। नरेंद्र मोदी ने पाकिस्तान के प्रधानमंत्री नवाज शरीफ को अपने शपथ समारोह में आमंत्रित किया। यही नहीं, अफगानिस्तान से भारत लौटने के पहले वे यकायक नवाज शरीफ के निवास पर उनको जन्मदिवस की बधाई और उनके यहाँ होनेवाले एक अन्य समारोह में भाग लेने गए। इस प्रकार का औपचारिक व्यवहार भारत की सद्भावना का प्रतीक था। प्रयास था कि दोनों देशों के संबंध सुधरें। पाकिस्तान इसका सही मूल्यांकन नहीं कर सका। भारत में कुछ दलों और व्यक्तियों ने प्रधानमंत्री मोदी की लाहौर यात्रा की बहुत आलोचना की और अब भी कर रहे हैं।

पाकिस्तान के अपने द्वेषपूर्ण रवैये के तीन मुख्य कारण हैं—पहला यह कि पाकिस्तान का अस्तित्व ही भारत के प्रति निरंतर विरोध पर टिका है। भारत का विभाजन जिस धर्म के आधार पर या द्विराष्ट्र के सिद्धांत (Two Nation Theory) पर हुआ, वह गलत साबित हुआ। जब जम्मू और कश्मीर ने पाकिस्तान में शामिल न होकर भारत में शामिल होना तय किया तो जम्मू-कश्मीर की अपनी संविधान सभा ने अंत में यही निर्णय किया। विभाजन के उपरांत ही पाकिस्तान ने जम्मू-कश्मीर पर आक्रमण किया, पहले छिपकर और बाद में उसके सैनिकों की हिस्सेदारी भी स्पष्ट हो गई। पाकिस्तान को पराजय का मुँह देखना पड़ा, किंतु भारत की तत्कालीन सरकार की उदारता के कारण जम्मू-कश्मीर की रियासत का करीब एक तिहाई भाग पाकिस्तान के कब्जे में रह गया और वहाँ अब चीनियों की घुसपैठ हो गई है। वे वहाँ अपनी सुविधा के लिए एक इकोनॉमिक कॉरीडोर बना रहे हैं। यही नहीं, विवादित मामले के रूप में हमने कश्मीर का मामला राष्ट्रसंघ को सौंप दिया, जो अब देश के लिए नासूर बन गया है। पाकिस्तान समय-समय पर उसी का राग अलापता है। वैसे हमारे संविधान के अनुसार जम्मू और कश्मीर भारत के अभिन्न भाग हैं। दो बार भारतीय संसद् इस विषय में प्रस्ताव भी पारित कर चुकी है। पाकिस्तान के विभाजन के उपरांत बँगलादेश का उभरना और एक निर्णायक युद्ध के बाद पूर्वी पाकिस्तान की समाप्ति आदि घटनाओं ने यह स्पष्ट कर दिया कि धर्म के आधार पर द्विराष्ट्र की जिन्ना और मुसलिम लीग की कल्पना बेमानी थी।

दूसरा कारण यह है कि बँगलादेश के उदय में पाकिस्तान अभी तक भारत की भूमिका को भूल नहीं सका है। दुर्भाग्य से शिमला पैक्ट के समय भी हमारे राजनेताओं ने वही पुरानी उदारता दिखलाई। पाकिस्तान

के नब्बे हजार सैनिक कैदी बिना शर्त के छोड़ दिए। भुट्टो ने स्वीकार किया था कि जो आज की नियंत्रण रेखा (एल.ओ.सी.) है, वही सीमारेखा होगी और इस प्रकार जम्मू-कश्मीर का विवाद भी समाप्त होगा। लेकिन किस नाटकीय ढंग से उसने यह लिखित न देने का अनुरोध किया, जिसे हमारे नेतृत्व ने मान लिया। पाकिस्तान पहुँचने के बाद वह अपने मौखिक वादों से मुकर गया। पूर्वसचिव रसगोत्रा ने भी अपने हाल ही में छपे संस्मरणों में इस बात की चर्चा की है। भुट्टो की मानसिकता जानते हुए भी उस पर विश्वास कर लिया गया। इस समय भी जम्मू और कश्मीर की समस्या को पाकिस्तान ने ही हवा दी है, जिससे घाटी में उत्तेजना फैल गई।

तीसरा कारण है कि पाकिस्तान में लोकतंत्रात्मक चुनी हुई सरकार सर्वोपरि नहीं, वरन् सेना सर्वोपरि है। सेना ही उसकी गृहनीति, विदेश नीति और भारत के संबंधों को निर्धारित करती है। पाकिस्तान की सेना का वजूद, उसकी उपादेयता इसी में है कि भारत पाकिस्तान का दुश्मन है, उसको समाप्त कर देना चाहता है, यह भावना जनता में सदा बनी रहे। इसमें सैनिक-तंत्र सफलता प्राप्त करता रहा है—समय-समय पर कुछ आतंकवादी घटनाएँ करवाकर, कभी सेना द्वारा तो कभी आतंकवादी गुटों द्वारा, जैसे जैशे मोहम्मद, लश्करे तैयबा आदि, जिन्हें वह 'नॉनस्टेट एक्टर्स' कहता है, यानी इन आतंकवादी गुटों को सरकार से कोई सरोकार नहीं। स्थिति तो यह है कि पाकिस्तानी सेना का खुफिया विभाग आई.एस.आई. अत्यंत शक्तिशाली है और इन गुटों की हर प्रकार की सहायता करता है। पाकिस्तान के रुख में तो हम फिलहाल परिवर्तन की कोई आशा नहीं देखते हैं; हमें हर स्थिति से निपटने के लिए तैयार रहना होगा। हम जानते हैं कि युद्ध से हर समस्या का हल नहीं हो सकता। इसीलिए भारत की नीति सदैव तनाव कम करने की रही है; किंतु ताली एक हाथ से नहीं बजती है।

इस समय सभी देशों में एकजुटता से यह संदेश जाना चाहिए कि अनेक मतभेद होते हुए भी जहाँ तक भारत की सुरक्षा का प्रश्न है, सभी दल, सभी पक्ष एकमत हैं, सेना के पीछे खड़े हैं और पाकिस्तान के आक्रमणों की रोकथाम के लिए सरकार जो कर रही है, उसका पूर्णतया समर्थन करते हैं। कठिनाई यह है कि दलों के ऐसा कहने के उपरांत भी कुछ आवाजें उठने लगती हैं, कुछ प्रश्न उठाते हैं, जिससे लगता है कि देश एकमत नहीं है। मुंबई कांग्रेस के अध्यक्ष निरूपम ने कहा कि सर्जिकल स्ट्राइक की बात 'फेक', यानी झूठी है, उसका प्रमाण चाहिए। 'आप' के नेता केजरीवाल ने प्रधानमंत्री को बधाई देते हुए कहा कि पाकिस्तानी प्रोपेगेंडा का मुकाबला करना चाहिए, यानी कुछ सबूत देने होंगे। इसी प्रकार के कुछ और मुद्दे कांग्रेसी नेताओं ने भी उठाए तथा सी.पी.एम. एवं सी.पी.आई. के नेताओं ने भी। पाकिस्तान नकारता है तो नकारने दें, अन्य देशों ने स्वीकार किया है कि लक्षित (सर्जिकल) स्ट्राइक भारत ने पाकिस्तानी आतंकवादियों को रोकने के लिए की है और यह उसका अधिकार है। सेना अपने स्ट्रेटेजी या कार्यान्वयन के तरीके की पूरी जानकारी देना नहीं चाहती, क्योंकि वह सुरक्षा की दृष्टि से तफसील में नहीं जाना चाहती। मोटे तौर पर वह जानकारी दे चुकी है। दिल्ली के दैनिक 'इंडियन एक्सप्रेस' में तसवीरों के साथ छपे एक आलेख में बताया गया है कि कैसे भारतीय सेना ने लक्षित आक्रमण किया और उसका क्या परिणाम हुआ। एक टी.वी. चैनल ने एक पाकिस्तानी अधिकारी का सर्जिकल स्ट्राइक के बारे में बयान प्रसारित किया और कुछ पाकिस्तानी नागरिकों तथा पुलिस या सैनिकों का भी। यह सब लाइव सुना गया। यही नहीं, इंडिया टी.वी. ने सर्जिकल स्ट्राइक कैसे और कहाँ हुई, इसे बड़े विस्तार से दिखाया। न सुरक्षा मंत्रालय ने और न सेना ने इनके बारे में कोई प्रतिक्रिया दी।

जब ये सब सबूत मीडिया द्वारा ही मिल रहे हों तो क्या आवश्यकता है भारत सरकार से सबूत माँगने की। यहाँ धैर्य रखने की आवश्यकता है। कोई ऐसी माँग नहीं होनी चाहिए, जो सेना के दावे की विश्वसनीयता पर प्रश्न उठाए। सरकार से जो शिकायत हो, उसको अलग से उठाना चाहिए। यू.पी.ए. सरकार में रक्षामंत्री रहे शरद पवार ने कहा है कि इस प्रकार कोई सबूत माँगना गैर-जिम्मेदारी और तर्कविहीन है। उन्होंने यह अवश्य कहा कि पहले भी हम पाकिस्तान को इस प्रकार प्रत्युत्तर दे चुके हैं। पूर्व गृहमंत्री चिदंबरम और कांग्रेस के नेता तथा अन्य नेताओं ने इसको तरह-तरह से पहले भी कहा। वैसे एक पूर्व डी.जी.एम.ओ. ने मीडिया को स्पष्ट किया कि पहले जो काररवाई हुई थी, वह अलग प्रकार की थी, उन्हें सर्जिकल स्ट्राइक नहीं कहा जा सकता। कई पूर्व राजनीतिकों का भी यही कहना है कि सर्जिकल स्ट्राइक के रेंज और स्कोप तथा अन्य एजेंसियों के समावेशी प्रयास के कारण यह काररवाई भिन्न प्रकार की थी। हम इस तर्क में नहीं जाना चाहते हैं। जो संभव था या जो इस समय की सरकार ने उचित समझा, किया। उसी तरह पूर्व सरकारों ने भी अपने निर्णय लिए, उन्होंने घोषणा नहीं की, यह भी शायद उस समय की परिस्थितियों में उन्होंने उचित समझा। किंतु उड़ी के आतंकी हमले के उपरांत जहाँ १९ जवान हताहत हुए, भारतीय जनमानस जितना उद्वेलित था, पहले उतना रोष देश में बहुत कम देखा गया। शायद इसीलिए इस बार सेना द्वारा कुछ जानकारी दी गई, ताकि जनता जान सके कि वह निष्क्रिय नहीं रही।

अगर सरकार इसका राजनीतिक दोहन करना चाहती है तो उस मामले में राजनीतिक दल प्रधानमंत्री और भाजपा के मंत्रियों से बात कर सकते थे। एकदम यह कहना कि यह सब पंजाब, उत्तर प्रदेश या अन्य राज्यों के आनेवाले चुनावों को देखते हुए किया गया है, उचित नहीं है। संभावित चुनावी लाभ के आरोप को सुरक्षा के मूल प्रश्न से अलग रखना जरूरी था। पाकिस्तान राजनीतिक व्यवस्था में फूट मानकर उसका फायदा उठाने की कोशिश कर रहा है। प्रधानमंत्री मोदी ने अपने सहयोगियों से यह कहा भी है कि समय-असमय अथवा बढ़ा-चढ़ाकर इस मामले को न उठाए और न छाती ठोकें। जनता को आश्वस्त करना था कि सरकार उनकी भावनाओं का आदर करती है और यह पर्याप्त

है। प्रधानमंत्री का संदेश सभी कार्यकताओं तक पहुँचेगा। सेना के मनोबल पर किसी आलोचना का अनुचित असर नहीं पड़ना चाहिए। यह सभी राजनीतिक दलों को याद रखना है।

हमारे पूर्व डी.जी.एम.ओ. के स्पष्टीकरण के होते हुए भी कि पूर्व में पाकिस्तान में जो बदले में काररवाई की गई, वह सर्जिकल स्ट्राइक नहीं कही जा सकती है, दैनिक पत्र 'हिंदू' ने दिल्ली के ९ अक्तूबर के संस्करण में अगस्त २०११ का जैसे का तैसा अथवा 'ऑपरेशन जिंजर' का खुलासा किया है और उसको सर्जिकल स्ट्राइक की संज्ञा दी है। 'हिंदू' इस विषय के सरकारी दस्तावेज और तसवीरें हासिल कर सका। हिंदू अखबार ने विस्तार से ऑपरेशन जिंजर का प्रस्तुतीकरण किया है। पूर्व मेजर जनरल एस.के चक्रवर्ती ने, जो कुपवाड़ा में स्थित २८ डिवीजन के चीफ थे, इसका कार्यान्वयन किया था। हिंदू के अनुसार, वह सर्जिकल स्ट्राइक की तरह ही था। शायद उस समय सर्जिकल स्ट्राइक शब्दावली का चलन नहीं था। एक अमरीकी टिप्पणीकार ने लिखा है कि लॉञ्चिंग पैड और सर्जिकल स्ट्राइक एटम बम से संबंध रखते हैं और उनका प्रयोग अनावश्यक है। हमारी दृष्टि में तो इन सब विवादों से ऊपर उठकर आगे की ओर देखना चाहिए और पूरे विश्व को कम-से-कम इस बात का एहसास हो कि सुरक्षा के प्रश्न पर हम सब एक हैं। भारत इस मामले को और अधिक बढ़ाना नहीं चाहता है। प्रधानमंत्री मोदी ने लखनऊ में रामलीला के अवसर पर अपने भाषण में कहा कि भारत का रास्ता युद्ध का नहीं, बुद्ध का है। युद्ध किसी के लिए लाभप्रद नहीं है।

बेशक हमारे देश में अपने विचार व्यक्त करने की स्वतंत्रता है, किंतु आवश्यक है कि समय के मिजाज को समझकर, उसकी गंभीरता को ध्यान में रखते हुए हमें अपनी बात कहनी चाहिए। जम्मू और कश्मीर के नौगाँव में जो आतंकवादी हमला हुआ है और हडवारा में जो सामान बरामद हुआ, वह पाकिस्तान और आतंकवादियों की साँठगाँठ को उजागर करता है। खैर, ऐसे हमले तो अब पुरानी बात हो चुके हैं। इस पृष्ठभूमि में यहाँ कांग्रेस की अध्यक्षा ने सर्जिकल स्ट्राइक को पूर्ण समर्थन दिया, वहीं अपनी किसान यात्रा के समापन के समय कांग्रेस उपाध्यक्ष राहुल गांधी का प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की भर्त्सना करना कि वे 'खून की दलाली' कर रहे हैं, यह न केवल तथ्यहीन बकवास लगती है बल्कि शर्मनाक भी है। उससे अधिक शर्मनाक है, कांग्रेस के बड़े-छोटे नेताओं द्वारा तरह-तरह के तर्कों से राहुल गांधी के शब्दों का औचित्य साबित करना। वे राहुल गांधी की 'भावनाओं' की बात करते भूल जाते हैं कि इस प्रकार की आलोचना हमारे सैनिकों की अवमानना है। कठिनाई एक ही है कि राहुल गांधी सत्ता का खोना पचा नहीं पा रहे हैं। प्रजातंत्र में तो सत्ता आनी-जानी है, यह किसी एक परिवार या दल की बपौती नहीं है।

पाकिस्तान के वैमनस्यता के रवैये में परिवर्तन की हम कोई ठोस आशा नहीं रखते हैं। बस देखना केवल यह है कि पाकिस्तान के दुश्मनी के रुख से किस प्रकार निबटा जाए, ताकि हालात और अधिक न बिगड़ें। पाकिस्तान के भारत के प्रति बैर के बारे में बातचीत करते हुए हमें यह ध्यान रखना है कि हमारा विद्वेष पाकिस्तान की साधारण जनता से नहीं है, वरन् पाकिस्तान की राज्य व्यवस्था, सैनिक व्यवस्था आदि से है, जो आतंकवाद को राज्य की रणनीति के तौर पर इस्तेमाल करता है। प्रधानमंत्री मोदी ने कोझीकोड़ के उद्‌बोधन में इस फर्क को स्पष्ट किया था। पाकिस्तान की जनता स्वयं आतंकवाद से त्रस्त है। पाकिस्तानी जनता तो भारत से अच्छे संबंध रखना चाहती है, पर वहाँ की राज्य व्यवस्था उनको गुमराह करती है। आखिर ७० वर्ष पहले हम एक ही देश के नागरिक थे। साधारण जनता तो अपने भारत के रिश्तेदारों से मिलने की आकांक्षा सदैव रखती है। पाकिस्तानी जनता सेना के वर्चस्व के कारण अपने को असहाय पाती है।

अलग-थलग पड़ता पाकिस्तान

करीब तीन महीने से जम्मू-कश्मीर में, खासकर कश्मीर घाटी के कुछ हिस्सों में कानून व्यवस्था चरमरा गई है। आतंकवादियों और पाकिस्तान के एजेंटों ने युवा वर्ग को उकसाया है। स्कूल-कॉलेज बंद हैं। लंबे अरसे तक कर्फ्यू भी लगा रहा। सामान्य स्थिति लाने के लिए रक्षातंत्र को चुस्त किया गया है। दिल्ली से सर्वदलीय प्रतिनिधि मंडल भी गया था, ताकि बातचीत हो सके। पता लगे कि उनकी क्या विशेष शिकायतें हैं, परंतु घाटी के अलगाववादी नेताओं ने वांछित सहयोग नहीं दिया। प्रारंभ में राज्य सरकार द्वारा शायद स्थिति का सही आकलन नहीं हो सका। धीरे-धीरे सामान्य स्थिति आती मालूम होती है, पर स्थानीय प्रशासन को सावधान रहना है। रक्षादलों की एक मुठभेड़ में कश्मीर में हिजबुल का कमांडर बुरहानवानी मारा गया। वह आतंकवादी नहीं वरन् आजादी की माँग का प्रतीक था, यह भ्रमित प्रचार किया गया। पाकिस्तान ने अपने १४ अगस्त यानी अपने स्वतंत्रता दिवस को इस वर्ष बुरहानवानी को समर्पित किया। नवाज शरीफ ने उसको एक शहीद की संज्ञा दी। पाकिस्तान में यह कुप्रचार खूब हुआ। पाकिस्तान दुनिया में यह प्रचार करने की कोशिश कर रहा है कि कश्मीर में जो स्थिति है, वह देशज है, यानी स्थानीय घाटी के लोगों के द्वारा पैदा की गई है और उसमें पाकिस्तान का कोई हाथ नहीं है। नवाज शरीफ ने राष्ट्रमंडल की जनरल असेंबली में वानी की तथाकथित शहादत का रोना रोया। हिंदुस्तान कश्मीर में मानव अधिकारों का हनन निरंतर कर रहा है, यह आरोप भी लगाया। भारत ने राष्ट्रमंडल में उसका मुँहतोड़ जवाब दिया। सुषमा स्वराज का अत्यंत तर्कपूर्ण प्रत्युत्तर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को पाकिस्तान के प्रधानमंत्री नवाज शरीफ के राष्ट्रमंडल के बयान के बारे में कहना पड़ा कि वे तो सैन्य अधिकारियों द्वारा लिखा भाषण ही जनरल एसेंबली में पढ़ रहे थे। इशारा फिर यही था कि तथाकथित चुनी हुई सरकार पर वहाँ सेना ही हावी है।

पाकिस्तान आतंकवाद का जन्मस्थान है, जहाँ से आतंकवाद दुनिया के अन्य स्थानों में फैल रहा है। जहाँ पहले तक्षशिला जैसे शिक्षा केंद्र थे और दुनिया से विद्वान् तथा जिज्ञासु आते थे, वहाँ अब आतंकवाद की शिक्षा दी जा रही है और उनको संरक्षण मिल रहा है। पाकिस्तान दुनिया में भारत के प्रति दुष्प्रचार में कामयाब नहीं हो सका, इसकी उसे और खिजाहट है। हम इससे संतोष नहीं कर सकते हैं। हमारे लिए कश्मीर घाटी एक बहुत संवेदनशील समस्या है और उसे काफी समझ-बूझ से हल करने की कोशिश निरंतर होती रहनी चाहिए। जो वादे पहले किए गए हैं, उनको समयानुसार पूरा होना चाहिए, वे चाहे किसी सरकार के रहे हों। जहाँ मरहम लगाने की जरूरत हो, वह भी करना चाहिए, ताकि युवा वर्ग सही मार्ग पर चले। प्रधानमंत्री को पुनः इस ओर शायद ध्यान देना पड़े। भारत का कहना है कि संविधान के अंतर्गत समस्या का जो भी निदान निकल सके, उसके लिए सरकार तैयार है। विशेषतया, जो-जो युवा नई पीढ़ी के हैं और जिनका हिजबुल व अन्य आतंकवादी दलों से कोई संबंध नहीं रहा है, वे क्यों नाराज हैं, इसकी जाँच-पड़ताल अच्छी तरह से होनी चाहिए और कोशिश होनी चाहिए कि वे मूलधारा से जुड़े रहें।

उड़ी के बाद पाकिस्तान से आए आतंकवादी कई अन्य स्थानों पर आक्रमण कर चुके हैं। पता चला है कि जैश-ए-मोहम्मद, लश्करे-तैयबा और हिजबुल मुजाहिदीन के करीब २५० घुसपैठिए जम्मू-कश्मीर में हैं और वारदतें फिलहाल होती रहेंगी। अंदरूनी बातचीत के जो रेडियो ट्रांसस्क्रिप्ट मिले हैं, उनसे पता चला है कि लश्करे-तैयबा के दो ठिकानों में करीब बीस आतंकी लक्षित स्ट्राइक में मारे गए हैं, वह बदला लेने के लिए व्याकुल है। पाकिस्तानी सेना के अध्यक्ष नियंत्रण रेखा (एलओसी) का निरीक्षण करने गए हैं। इससे भी पता चलता है कि पाकिस्तान तिलमिला गया है। पाकिस्तान के प्रधानमंत्री नवाज शरीफ घाटी में जो स्थिति है, वह वहाँ के स्थानीय लोगों की आजादी की लड़ाई है, यह कहते थकते नहीं हैं। अंतरराष्ट्रीय जगत् में आतंकवाद के मुद्दे को लेकर पाकिस्तान अलग-थलग पड़ गया है। 'डॉन' समाचार-पत्र में छपने के बाद इस प्रकार की खबरें आई हैं कि सेना और जो सिविलियन राज्य-व्यवस्था है, दोनों के बीच दरार पड़ गई है, पर इस पर पूरा यकीन करना मुश्किल है। 'डॉन' अखबार, जिसे स्वयं मोहम्मद अली जिन्ना ने स्थापित किया, वह अपने लिखे पर कायम है, क्योंकि पूरी तरह जाँच-पड़ताल कर समाचार छापा गया था। अलमेडा डॉन के एक वरिष्ठ पत्रकार हैं, उनको पहले देश के बाहर न जा सकनेवालों की श्रेणी में रखने के आदेश हुए, पर पाकिस्तान और अन्य देशों में इसकी कटु आलोचना होने पर आदेश को वापस ले लिया गया। यह तो पता चल रहा है कि सेना द्वारा आतंकवादियों को संरक्षण देने के कारण पाकिस्तान के अनेक क्षेत्रों में बेचैनी है।

वहाँ के एक और प्रभावशाली पत्र 'नेशन' ने भी प्रश्न उठाया है कि जिन आतंकवादियों के कारण अंतरराष्ट्रीय जगत् में पाकिस्तान बदनाम हो रहा है, उनको काबू में क्यों नहीं किया जा रहा है। जेश-ए-मोहम्मद का मुखिया तो अपने साप्ताहिक पत्र में अभी भी सरकार को खुलकर लिख रहा है कि हमें मौका दो, हम कश्मीर समस्या को हल कर लेंगे, बँगलादेश का बदला भी ले लेंगे। किंतु सेना और पाकिस्तान का खुफिया तंत्र आई.एस.आई. इतने मजबूत हैं कि नवाज शरीफ उन पर आवश्यक दवाब डाल पाएँगे, यह कहना मुश्किल है। पाकिस्तानी सेनाध्यक्ष को नवंबर के अंत में सेनानिवृत्त होना है, पर क्या ऐसा होगा? इस पर शंकाएँ हैं। उधर प्रधानमंत्री नवाज शरीफ पनामा दस्तावेज उजागर होने के कारण और भी कमजोर पड़ गए हैं। पाकिस्तान में अगले दिनों वहाँ की राजनीति में और सेना तथा सिविल संबंधों में क्या गुल खिलते हैं, यह देखना बहुत दिलचस्प होगा। वैसे एक समाचार यह भी है कि पाकिस्तान के कहने पर चीन के राष्ट्रपति जी जिनोपिंग शायद ब्रिक्स की आपसी बैठक में यह कहने की पहल करें कि पाकिस्तान भी शांति का इच्छुक है, बातचीत शुरू होनी चाहिए। प्रश्न यही है कि आज के हालात में यह संभव कैसे हो? ब्रिक्स सम्मेलन की समाप्ति के उपरांत किस प्रकार का गोवा डिक्लेरेशन सबकी सहमति से निकलता है, उसके बारे में आकलन करना होगा। चीन जाने क्या चाल खेलेगा, कहना मुश्किल है। आतंकवाद के बारे में वह पाकिस्तान का बचाव ही करना चाहेगा।

'ऊँची हवाओं में उड़ना' एक संस्मरण

कुछ समय पहले एस.के. मिश्रा, जो पहले पंजाब के और फिर हरियाणा कैडर के वरिष्ठ सदस्य रहे हैं, के संस्मरण 'फ्लाइंग इन हाई विंडस' अथवा 'ऊँची हवाओं में उड़ना' शीर्षक से रूपा प्रकाशन, दरियागंज, दिल्ली से प्रकाशित हुए हैं। मिश्रा का पूरा प्रशासनिक कॅरियर उनकी काबीलियत, सिद्धांतों पर दृढता और निष्पक्षता का एक ज्वलंत उदाहरण है। उनका दिमाग बड़ा 'क्रिएटिव' है, नई बातें सोचते हैं, नई-नई चीजें तथा कोशिशें करते हैं। उनकी सोच 'इनोवेटिव' है, वे नई बातें और रास्ते खोजने की कोशिश करते हैं। एक आम उच्चाधिकारी की तरह वे लकीर के फकीर नहीं हैं। हरियाणा में वे तीन मुख्य मंत्रियों—वंशीलाल, देवीलाल और भजनलाल के प्रधान सचिव रहे। वे मूल निवासी उत्तर प्रदेश के हैं। पहले किसी से कोई मेल-मिलाप नहीं था। एक सिविल सर्वेंट की तरह उन्होंने सभी को सही राय देने में कोताही नहीं की। चाहे वह पसंद आए या न आए। वे जी-हुजूरी वाले अधिकारी नहीं रहे। उनकी नेकनीयती पर किसी को शक नहीं रहा। आपातकाल के उपरांत वंशीलाल के साथ काम करने के कारण उनको भी घेरने की कोशिश हुई, पर वे हर तरह से बेदाग निकल आए। उन्होंने हरियाणा और भारत सरकार दोनों में बड़े उत्तरदायी पदों पर कार्य किया। वे डायरेक्टर जनरल फेस्टिवल ऑफ इंडिया रहे और कृषि मंत्रालय, टूरिज्म और सिविल एविएशन के सचिव रहे। हर जगह उन्होंने अपने काम की छाप छोड़ी। जब पंजाब और हरियाणा में रहे तो पंजाब कृषि विश्वविद्यालय और मोतीलाल नेहरू स्कूल ऑफ स्पोर्टस

के प्रारंभिक काल में उनका बड़ा अवदान रहा। नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ फैशन टेक्नोलॉजी को भी उन्होंने मार्गदर्शन प्रदान किया। हरियाणा टूरिज्म को तो उन्होंने एक समय में एक नमूने की तरह पेश किया, जिसे पहले कोई जानता भी नहीं था। हम उनकी प्रत्युत्पन्न बुद्धि और अनेकों उपलब्धियों की चर्चा करना चाहते हैं, पर उनको समझने के लिए पुस्तक पढ़ना जरूरी है। वरना उनके प्रति न्याय नहीं होगा।

मिश्रा ने संजय गांधी से अपनी एक मुठभेड़ का भी जिक्र किया है। तीनों मुख्यमंत्रियों के स्वभाव और कार्यप्रणाली का अच्छा, स्पष्ट और संतुलित प्रस्तुतीकरण किया है। वंशीलाल के कार्य करने के ढंग में बहुत से पहलू हैं, जिनकी जानकारी साधारणतया नहीं है, जैसे श्रीमती थैचर से जैगुआर खरीदने के विषय में बातचीत, जब वे रक्षामंत्री थे तथा अन्य अवसरों पर उनके सामान्य ज्ञान द्वारा फैसले करने के उदाहरण भी दिए हैं। वंशीलाल की ख्याति आपातकाल के समय से बनी थी, ये कुछ उदाहरण उसके अपवाद हैं। इस पुस्तक से हरियाणा की राजनीति पर काफी प्रकाश पड़ता है। एक सिविल सर्वेंट कठिन से कठिन परिस्थितियों में और बदलती राज्य-व्यवस्थाओं में योगदान दे सकता है, यह मिश्रा ने करके दिखाया है। उनके कार्य को देखते हुए अंत में प्रधानमंत्री चंद्रशेखर ने उन्हें अपना प्रधान सचिव नियुक्त किया। चंद्रशेखर के चरित्र-चित्रण के साथ न्याय नहीं हुआ है। अपने कार्यकाल के संदर्भ में मिश्रा ने उनके स्वभाव-चरित्र और काम करने के ढंग का बहुत अच्छा वर्णन किया है। प्रधानमंत्री के रूप में उनकी उपलब्धियों का जिक्र किया है, जो कम ही लोग जानते होंगे। सरकारी सेवा से निवृत्त होने के उपरांत मिश्रा संघ लोक सेवा आयोग में भी रहे। इन्टेक में उन्होंने अभूतपूर्व कार्य किया, उससे हमारा हेरीटेज आज भी लाभान्वित हो रहा है। उसके बाद उन्होंने 'इंडियन ट्रस्ट फॉर रूरल हेरीटेज और डवलपमेंट' की स्थापना की और उसके द्वारा गाँवों की कलाओं को विकसित करने तथा लोगों की दृष्टि में लाने में तत्पर हैं।

एस.के. मिश्रा के संस्मरण साधारण नागरिक और राजनेताओं के लिए तो उपयोगी हैं ही, खासकर राजनेता जान सकते हैं कि अधिकारियों के साथ कैसा व्यवहार होना चाहिए, ताकि जनहित की दृष्टि से वह अधिक-से-अधिक काम कर सके। उससे अधिक मिश्रा के संस्मरण सरकारी सेवाओं, विशेषतया आई.ए.एस. आदि में जाने के इच्छुक अथवा वह कार्य-सेवा प्रारंभ करनेवालों के लिए एक प्रशासनिक प्राइमर की तरह हैं। कैसे जनता के साथ व्यवहार करना चाहिए, कैसे साथियों के साथ संबंध होने चाहिए, कैसे अपने अंतर्गत काम करनेवालों का मनोबल बढ़ाया जा सकता और कैसे राजनेताओं के साथ संबंध होने चाहिए, यह सब मिश्रा के संस्मरणों में उदाहरण सहित देखा जा सकता है। वे अपने अनुभव और योग्यता का पूरा अवदान स्वाभिमान के साथ सरकारी सेवाएँ में जनहित के कार्यों में दे सकते हैं, इसको हम मिश्रा के संस्मरणों में देख सकते हैं।

अधिकारियों के सामने किस प्रकार की विचित्र समस्याएँ आ सकती हैं और उनका समाधान कैसे हो, उसका एक उदाहरण देना चाहते हैं। अपने संस्मरणों में मिश्रा ने स्वयं इसे नहीं लिखा है, पर इसकी चर्चा श्रीमती गांधी के निजी सचिव रहे डॉ. माथुर ने अपने संस्मरणों में की है। मुख्यमंत्री वंशीलाल ने प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी को सूरजकुंड में एक आयोजन के उद्घाटन के लिए आमंत्रित किया। इंदिराजी ने इसे अनिच्छा से ही इस शर्त के साथ स्वीकार किया कि उनके आने का प्रचार नहीं होना चाहिए। सरकारी कर्मचारियों को भी यह मालूम न हो सके कि कौन वहाँ आकर रुकेगा। ऐसा मुशकिल ही होता है। कौन वी.वी.आई.पी. आ रहा है। इसकी खुसफुसाहट शुरू हो गई। मिश्रा ने अपनी प्रत्युत्पन्न मति से आदेश दिया कि हर कमरे में कुरान की प्रति रख दी जाए। अब सभी कर्मचारियों ने समझा कि सऊदी अरब से या अन्य मुसलिम राज्य के कोई शासक या बड़े अधिकारी आ रहे हैं। जब श्रीमती गांधी ने अपने कमरे में कुरान देखी तो उनको आश्चर्य हुआ। डॉक्टर माथुर ने कहा कि उनके और अन्य अधिकारियों के कमरों में भी कुरान रखी हुई है। तब पूरा राज खुला कि यह सब मिश्रा का किया हुआ है। डॉ. माथुर लिखते हैं, इंदिरा गांधी भी खूब हँसीं। प्रशासन की शिक्षण संस्थाओं, कॉलेज और विश्वविद्यालयों के पुस्तकालयों में मिश्रा के संस्मरणों को उचित स्थान मिलना चाहिए।

सुभाष बोस एक इंडियन समुराई

सुभाष बोस या नेताजी पर प्रतिवर्ष नई-नई पुस्तकें आ रही हैं। यह स्वाभाविक है। जिस प्रकार का उनका करिश्माई व्यक्तित्व था और जिस प्रकार वे निडरता से सदैव ब्रिटिश सरकार से लोहा लेते रहे। १९४७ के बाद भारतीय इतिहास में नेताजी और आई.एन.ए. एक प्रकार से धीरे-धीरे लुप्त से हो गए। बहुत से बुद्धिजीवी इस प्रकार के व्यवहार से क्षुब्ध थे। अब समय ने करवट ली और नेताजी का भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में जो सही स्थान होना चाहिए, उसको लाने की चेष्टा हो रही है। पुस्तकें केवल भारत में ही नहीं, उनके जीवन के अलग-अलग पक्षों को लेकर अन्य देशों में भी प्रकाशित हो रही हैं। इंग्लैंड में उनसे संबंधित बहुत से दस्तावेज अब सबके लिए खोल दिए गए हैं। देश में जो दस्तावेज, चाहे केंद्रीय सरकार के पास हों, चाहे बंगाल सरकार के पास, वे भी धीरे-धीरे प्रकाशित हो रहे हैं। अभी एक पुस्तक 'बोस, एन इंडियन समुराई' मेजर जनरल जॉ. जी.डी. बक्शी ने लिखी है। वे सुरक्षा विषयों के प्रसिद्ध टिप्पणीकार और लेखक हैं। टी.वी. पर उनको प्राय: विचार-विमर्श में देखा जाता है। उन्होंने स्पष्ट किया है कि यह नेताजी की संपूर्ण जीवनी नहीं है, आई.एन.ए. और नेताजी का एक सैन्य दृष्टिकोण से आकलन भर है। पुस्तक बहुत परिश्रम और शोध के पश्चात् लिखी गई है। पुस्तक के. डब्ल्यू. (नॉलेज वर्ल्ड) दरियागंज से प्रकाशित है। इसके लिए जनरल बख्शी बधाई के पात्र हैं। बहुत सी नई सूचना संकलित की गई है। खेद है कि पुस्तक को कोई अच्छा एडीटर

नहीं मिला, अतएव बहुत सी बातें बार-बार दोहराई गई हैं, जो अखरती हैं। अच्छा होता, यदि पुस्तक ठीक से एडिट की जाती। लेखक ने दूसरे अध्याय में बोस को इंडियन समुराई क्यों कहा है, इसका विवेचन किया है। समुराई एक जापानी अवधारणा है, एक महान् व्यक्ति की या जिसको अपना ध्येय और सम्मान जीवन से भी अधिक महत्त्वपूर्ण हो। सुभाष बोस के जीवन का मान देश की आजादी था और उसकी प्राप्ति के लिए वे अपने जीवन की कुरबानी देने को सदैव तत्पर रहे। उनका जीवन-संघर्ष इसी का प्रमाण है। वैसे जामान में एक समुराई कोड भी था।

लेखक का मानना है कि भारतीय इतिहास लेखन को जान-बूझकर तोड़ा-मरोड़ा गया है, यह कहकर कि आजादी केवल अहिंसा से मिली है। इस प्रकार बोस और आई.एन.ए. एवं अन्य क्रांतिकारियों को नगण्य बना दिया गया। मिलिटेंट राष्ट्रीयता की भूमिका की अवहेलना जान-बूझकर की गई है। नेताजी के आखिरी दिनों के विषय में जो तरह-तरह की तुकबाजियाँ व कल्पनाएँ हैं, उनका अच्छा विश्लेषण इसमें है। इसके अतिरिक्त भारत पहुँचने के प्रयास में आई.एन.ए. का कितना और कैसा अवदान रहा, क्या मतभेद रहे जापानियों से और यद्यपि भारत की भूमि पर अपना झंडा फहरा दिया, पर वांछित सफलता प्राप्त न हो सकी। कोहिमा और इंफाल के युद्ध का सजीव वर्णन है। लेखक की मान्यता है कि यदि बोस १९४२ के अंत में अथवा १९४३ में दक्षिणपूर्व एशिया आ गए होते तो युद्ध का नतीजा दूसरा ही होता। वैसे यह इतिहास के 'अगर' और 'मगर' वाले प्रश्नों में है, पर लेखक ने जिस प्रकार तथ्य और तर्क प्रस्तुत किए हैं, वह विचारणीय है। भारतीय इतिहास में नेताजी अमर हैं।

एक दु:खद प्रकरण यह है कि प्रारंभ से ही जब सुभाष बोस घर से गायब हुए इस खोज में कि द्वितीय युद्ध में भारत को किस प्रकार स्वतंत्र कराया जाए, उनको हमेशा अपनों से ही धोखा मिला। तलवार नामक व्यक्ति जो उनको रूस ले जाने के लिए निश्चित किया गया था, वह ब्रिटिश खुफिया पुलिस के पैरोल पर था। उनका मुखबिर था। यही नहीं, वह डवल एजेंट था। वह कीर्तिपार्टी से संबंधित था, जिसकी सहानुभूति सोवियत रूस से थी। अतएव वह सोवियत रूस का भी मुखबिर था। इससे अंग्रेजों और सोवियत रूस को प्रारंभ से ही सुभाष बोस के हर कदम के बारे में जानकारी मिलती रही। जब सोवियत रूस पर जर्मनी ने आक्रमण किया और साम्यवादी जिसे पहले साम्राज्यवादियों का युद्ध कहते थे, वह यकायक पीपुल्स वार या जनता के युद्ध के रूप में परिवर्तित हो गया। तब तो सोवियत रूस और ब्रिटेन दोनों के खुफिया तंत्र में और अधिक निकटता हो गई। भारतीय कम्युनिस्ट तो सुभाष बोस के कटु आलोचक रहे और उनको पत्र-पत्रिकाओं में उस समय अत्यंत घृणित कार्टून आने लगे। जब बोस जर्मनी के लिए टर्की होकर जाना चाहते थे तो चर्चिल ने एक विशेष खुफिया बल को आदेश दे रखा था कि वहीं पर बोस का कत्ल कर दिया जाए। बोस ने रूस होकर जाना पसंद किया। तलवार ही एकल संपर्क सूत्र था, जिसके जरिए से धन आदि तथा तरह-तरह की सूचनाएँ वे जर्मनी से भी भेजते थे और बाद को दक्षिण एशिया से, वे सब सूचनाएँ अंग्रेजों और सोवियत रूस को पहले ही मिल जाती थीं। अपने परिवार को जो हिदायत सुभाष बोस भेजते, उसकी जानकारी ब्रिटिश सरकार को मिलती थी। इसीलिए उनके बड़े भाई शरत बोस और परिवार के कई और लोग नजरबंद किए गए। यही नहीं, बोस द्वारा देश में उपद्रव कराने के लिए भेजे गए एजेंट भी पकड़े गए। यही तलवार सुभाष बोस को भारत के बारे में हमेशा गलत समाचार और बड़ा-चढ़ाकर आकलन भेजा करता था। जनता बस विद्रोह के लिए तैयार है, इस प्रकार का इंप्रेशन देता रहता था। जापान जाने के बाद भी बोस जिसे विश्वसनीय मानते रहे, वह दगाबाजी करता रहा।

दूसरी ओर देखिए, जब जापान ने आत्मसमर्पण कर दिया, नेताजी गुरिल्ला युद्ध के पक्ष में थे। अपनी अस्थायी सरकार अथवा कैबिनेट की अंतिम बैठक के दबाव के पश्चात् वे कोरिया होकर रूस जाने को राजी हुए। पाठकों को हैरानी होगी कि उस बैठक में जो निर्णय लिये गए, उसकी पूरी जानकारी उसी दिन (एम.आई.आई.) ब्रिटिश की खुफिया पुलिस के पास पहुँच गई। इसका तात्पर्य यह कि उनके हाईकमांड या कैबिनेट में कोई गुप्तचर बैठा था, जो गद्दारी कर रहा था और जो ब्रिटिश खुफिया पुलिस के संपर्क में था। यही नहीं बल्कि उसके पास ऐसे साधन उपलब्ध थे, जिससे वह तुरंत अंग्रेजों को खबर पहुँचा सके। अपनों से ही सुभाष बोस धोखा खाते रहे। अब जो दस्तावेज सार्वजनिक किए गए हैं, ब्रिटिश सरकार ने उनमें से एक दस्तावेज के हाशिए पर, जहाँ ब्रिटिश गुप्तचर का नंबर लिखा है, पेंसिल से लिखा हुआ था—कर्नल भोंसले। यानी इस नंबर का गुप्तचर का नाम भोंसले है। उन्हें ही नेताजी ने अपना नंबर दो बनाया था। भोंसले जो सैंडर्स्ट में प्रशिक्षण पाए हुए थे, बाद में भारत सरकार में एक मंत्री भी बने। हमने इस प्रकरण को यहाँ पुन: लिखा है, क्योंकि अपने स्तंभ में काफी पहले भारत सरकार से इस विषय में जाँच करने के लिए अनुरोध किया था। १९४५ के बाद ही नहीं, देश के स्वतंत्र होने के वर्षों बाद तक बोस परिवार पर खुफिया पुलिस निगाह रखती रही और अपनी रिपोर्टों का आदान-प्रदान ब्रिटिश खुफिया एजेंसी से करती रही। हमने इसी कारण फिर चर्चा की है कि तलवार और भोंसले या उनके अन्य सहयोगियों की भूमिका तथा अन्य बातें पूरी तरह देश के सामने आनी चाहिए। उस समय स्पष्ट होगा कि देश की आजादी के लिए लड़ने के प्रयासों में किस प्रकार अपने ही लोगों ने नेताजी को धोखा दिया और देश के साथ विश्वासघात किया।

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

(त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी)

आगे बढ़ो

● आनंद प्रकाश जैन

अनेक ऐतिहासिक उपन्यास और कहानियों के रचयिता श्री आनंदप्रकाश जैन करीब चौदह वर्षों तक बच्चों की प्रसिद्ध पत्रिका 'पराग' के संपादक रहे। अपने कुशल व सफल संपादन के साथ-साथ अपनी बहुविध रचनाओं से बाल-साहित्य को समृद्ध किया। उन्होंने अपनी चुस्त और रसपूर्ण कहानियों, हास्य-विनोदपूर्ण नाटकों और रहस्य-कौतुक भरे घटनाक्रमों से ओतप्रोत उपन्यासों के जरिये बाल-साहित्य को यथार्थ से जोड़कर उसे एक नए रूप में ढाला। आनंदप्रकाश जैन की लोकप्रिय इतिहास-कथा 'आगे बढ़ो' राजस्थान में धीर के एक बूढ़े राजा के बड़े बेटे हिम्मत सिंह की शौर्यगाथा है। उसे कुछ विपरीत परिस्थितियों में खाली हाथ घर से निकलना पड़ा। पर फिर भी उसने हिम्मत नहीं हारी। फिर मुगलों द्वारा हथियाए बेहद मजबूत बारगढ़ के किले को पाने का इरादा कर वह आगे बढ़ा तो अनेकों कंटकों को पार करता हुआ अपनी बुद्धि, सूझबूझ, साहस व पराक्रम के बल पर सतत आगे बढ़ता ही गया। नतीजा क्या निकला, खुद पढ़िए।

२६ जनवरी का दिन।

बच्चों की उस सेना में कुछ नहीं तो कम-से-कम १००-१५० सैनिक रहे होंगे। कोई तीन बालिश्त का, तो कोई दस बालिश्त का। सब एक-दूसरे के पीछे इस तरह मार्च करते आ रहे थे, मानो पर्वत-नदी-नाले किसी की परवाह न हो। ऊपर से हाथ हवा में उछाल-उछालकर 'मार्चिंग सॉन्ग' गा रहे थे—

'आगे बढ़ो बहादुरो, आगे बढ़ो
तुम माँ के नौनिहाल हो,
तुम देश की मशाल हो,
दुश्मन के लिए काल हो,
आगे बढ़ो, आगे बढ़ो, आगे बढ़ो।'

अंत में उन्होंने हमारी ससुराल के घर में प्रवेश किया और सीधे रसोई की राह ली। फिर रसोईघर से जो स्त्रियों की चीख-चिल्लाहट, 'अरे मरो, अरे नासपीटो' सुनाई पड़ी, तो हम समझ गए कि हमारे लिए जो गरम-गरम मालपुए बन रहे थे, उनकी छबिया लुट गई।

कुछ ही देर में पूरी सेना हमारे सामने थी। मालूम हुआ कि लुटाई कई घरों की हुई थी और सबके-सब गले तक तर थे। चाणक्य ने एक गरम पुआ मुँह में डालते हुए हमसे कहा, ''आगे बढ़ो!''

''किधर आगे बढ़ें?'' हमने सवाल किया। मालपुआ हम भी खाना चाहते थे।

''यही तो एक सवाल है, जिसका उत्तर बड़े-बड़े नेता नहीं दे सके।'' बीरबल ने अपने हाथ के गोल-गोल मालपुए को निरखते हुए कहा, ''मगर आप आगे बढ़ो और एक कहानी सुनाओ।''

''हाँ।'' चाणक्य ने भी अपनी चुटिया हिलाई, ''हमने पाँच गरम-गरम मालपुए आपके लिए रख छोड़े हैं। अगर आपने उस कहानी से हमें 'आगे बढ़ो' का अर्थ समझा दिया तो पाँचों आपके।''

हमारे लिए सुरक्षित पाँचों मालपुओं के प्रति हमारे मन में काफी हद तक मोह-भावना जाग चुकी थी। आखिर हमने हिम्मत की।

''सुनो बच्चो, आज हम तुम्हें एक ऐसी कहानी सुनाते हैं, जिससे तुम्हें सचमुच पता चलेगा कि जब चारों तरफ का रास्ता खुला होता है और यह पता नहीं चलता कि किधर बढ़ा जाए तो ऐसे में किस तरह आगे बढ़ा जाता है। भारत पर मुगल सत्ता के समय राजस्थान में धीर का एक छोटा सा राज्य था। इस राज्य में बूढ़े राजा के दो बेटे थे—हिम्मतसिंह और बप्पालाल। हिम्मतसिंह की माँ बूढ़े राजा की पहली पत्नी थी, वह कभी की मर चुकी थी। बप्पालाल की माँ राजा की नई रानी थी। वह हिम्मतसिंह से जलती थी। राजा के मरने पर वह हिम्मतसिंह के स्थान पर बप्पालाल को राजगद्दी पर बिठाना चाहती थी। राज्यपाल तो अभी बच्चा ही था, मगर हिम्मतसिंह भरा-पूरा नौजवान था। वह उदार, दयावान और साहसी था। उसके हजारों मित्र थे और वह सबके साथ घुल-मिलकर रहता था। इस कारण रानी षड्यंत्र करके उसे जान से नहीं मरवा पाई। इस रानी का नाम था सूजाबाई। रामायण की कैकेयी की तरह सूजाबाई ने धीर के बूढ़े राजा की ऐसी नस दबाई कि उसने हिम्मतसिंह को देश-निकाला दे दिया।''

सब बच्चों ने गंभीरता के साथ गरदन हिलाई और मैंने कहानी आगे बढ़ाई, ''हिम्मतसिंह का विवाह हो चुका था। उसकी पत्नी बहुत सुंदर और सुशील थी। वह उसके साथ जाने के लिए आठ-आठ आँसू रोई।

किंतु राम की सीता की तरह हिम्मत सिंह उसे साथ नहीं ले गया। अपने एक हजार साथियों के साथ वह एक दिन सुबह-सुबह अपने माता-पिता को प्रणाम कर, छोटे भाई को प्यार कर किले से बाहर निकल गया। किले के फाटक उसकी पीठ पीछे बंद हो गए। अब ऊपर खुला आकाश था और चारों ओर की दिशाएँ मानो उसे चिढ़ा रही थीं, 'बड़े बहादुर बनते थे, अब कहाँ जाओगे ? किधर पग बढ़ाओगे ?' हिम्मतसिंह ने मन-ही-मन कहा, 'नीचे धरती माता है, दिशाएँ चारों एक-सी हैं। चाहे जिधर बढ़ चलो।' और इस तरह पग बढ़ाते हुए उसका घोड़ा उछला। अगले ही क्षण एक हजार घुड़सवारों की 'जय एकलिंग' से आकाश गूँजने लगा और हजार घोड़ों की टापों से धरती काँपने लगी।''

हमने देखा कि बच्चों की आँखें चमकने लगी थीं। होठों पर खुशी की मुसकान थी और उसमें मिली हुई थी कौतूहल की अदम्य भावना।

''फिर क्या हुआ, अंकल ?'' एक छोटे-से बच्चे ने सवाल किया।

''फिर चलम-चल, चलम-चल, आया बार का वह मजबूत किला बारगढ़, जिसे कुछ समय पहले मुगल सेनापति आसफखाँ ने बरसों तक लाखों की फौज का घेरा डाले रखकर जीता था। किला क्या था, पत्थर का एक ऐसा बड़ा पिंजरा था, जो मानो ऊँचे आकाश में टँगा था। सुदृढ, नुकीली-लंबी कीलोंवाले जंगी फाटक, जो एक बार बंद हो जाएँ, न बाहर से किसी को अंदर आने दें, न अंदर से किसी को बाहर जाने दें। तीन ओर की दीवारों में असंख्य छेद, जिनमें कानों पर तने तीर और आग उगलने के लिए तैयार बंदूकों की नलियाँ, जो बाहर की तरफ अपने नन्हे-नन्हे मुँह निकाले ललकार रही थीं कि आओ, हमारा वार अपनी छाती पर झेलो और राम का नाम लेते स्वर्ग सिधारो।''

''ही-ही-ही-ही!'' कुछ बच्चे हँस पड़े।

''हिम्मतसिंह और उसके हजार साथियों ने आँखों के ऊपर हाथ का छज्जा बनाते हुए, चिलचिलाती धूप में ऊपर निगाहें उठाकर बारगढ़ के उस घमंडी किले को देखा। फिर हिम्मतसिंह ने धीरे से अपने पास खड़े घुड़सवार साथी से कहा, 'वीरसिंह, यह किला हाथ लगे तो बात बने।' वीरसिंह ने अपनी सफाचट दाढ़ी पर हाथ फेरा और बोला, 'कोई बहुत मुश्किल तो है नहीं। हाँ, सामने की तीन ओर से बढ़ना कठिन है। मगर मैं जानता हूँ कि उसके पीछे की तरफ सुरक्षा का कोई प्रबंध नहीं होगा। क्योंकि उस तरफ लगभग हजार गज ऊँची खड़ी पहाड़ी दीवार है। रात के समय छिपकलियों की तरह अगर उस पर चढ़ा जाए तो किला बस हाथ में आया समझो।'''

''हिम्मतसिंह और उसके हजार साथियों ने आँखों के ऊपर हाथ का छज्जा बनाते हुए, चिलचिलाती धूप में ऊपर निगाहें उठाकर बारगढ़ के उस घमंडी किले को देखा। फिर हिम्मतसिंह ने धीरे से अपने पास खड़े घुड़सवार साथी से कहा, 'वीरसिंह, यह किला हाथ लगे तो बात बने।' वीरसिंह ने अपनी सफाचट दाढ़ी पर हाथ फेरा और बोला, 'कोई बहुत मुश्किल तो है नहीं। हाँ, सामने की तीन ओर से बढ़ना कठिन है। मगर मैं जानता हूँ कि उसके पीछे की तरफ सुरक्षा का कोई प्रबंध नहीं होगा। क्योंकि उस तरफ लगभग हजार गज ऊँची खड़ी पहाड़ी दीवार है। रात के समय छिपकलियों की तरह अगर उस पर चढ़ा जाए तो किला बस हाथ में आया समझो।'''

''हाँ हमारे घल में बी एक चिपकली है, वो ताक लगाए दीवाल पे चिपकी लहती है।'' तोतूराम ने उत्साह के साथ कहा, ''जब कोई मक्खी-मच्छल आते ऐ, तो वह ऐछी फुलती छे झपत कल उछे मुह में दबोच लेती है...।''

''अबे चुप, ओ छिपकलीवाले!'' बीरबल ने तोतूराम को डाँटा, ''यहाँ आदमियों की बात हो रही है, छिपकलियों की नहीं।''

मैंने कहानी आगे बढ़ाई। सभी बच्चे अपनी गरदन आगे बढ़ाकर सुनने लगे।

''हिम्मत सिंह और उसके कुछ साथी किले के पीछे वाली खड़ी पहाड़ी दीवार पर चढ़ सकते थे। किंतु रात के अँधेरे में उसके बहुत से साथी अधबीच से ही गिरकर परलोक सिधार सकते थे। यह उसे मंजूर नहीं था। उसने आसपास के गाँवों में खबर-सार लाने के लिए कुछ साथी भेजे। संध्या तक वे लौट आए और उन्होंने बताया कि मुगल बादशाह गुजरात की तरफ भारी सेना लेकर गया है। इस किले का सूबेदार आसफखाँ भी अपनी अधिकतर सेना के साथ बादशाह की सेना में शामिल है। इसलिए किले में केवल हजार-दो हजार मुगल सिपाही हैं। उनमें से अधिकतर एक बड़ी शिकारी मुहिम पर गए हुए थे और उसी रात को लौटने वाले थे। यह सुनते ही हिम्मत सिंह और उसके साथियों ने आपस में सलाह-मशविरा किया और एक योजना बनाई।

''संध्या समय जब किले के शिकारी सैनिक वापस लौटे और उनके लिए गढ़ के फाटक खुले तो हिम्मतसिंह और उसके हजार साथी मुगल सैनिकों के ऊपर टूट पड़े। बेचारे शिकारियों को गुमान तक नहीं था कि किले के अंदर घुसते-न-घुसते स्वयं उन्हीं का शिकार होने लगेगा। बहुत से तो वहीं कट मरे, कुछ आसपास के गाँवों की तरफ भाग खड़े हुए। संतरियों ने जब यह माजरा देखा तो उन्होंने जल्दी से किले के फाटक बंद कर दिए। मगर हिम्मतसिंह इससे हार मान जानेवाला असामी नहीं था। उसने झटपट अपने दो सौ चुने हुए साथियों को किले की दीवार के सहारे-सहारे गढ़ के तीनों तरफ फैला दिया। किले के अंदर चारों तरफ से सिमटकर मुगल सैनिक फाटक की ओर निकल आए थे, जिससे उसकी रक्षा की जा सके। उनकी इस हड़बड़ाहट का फायदा उठाकर हिम्मतसिंह के वे चुने हुए दो सौ साथी जगह-जगह से किले की प्राचीर के ऊपर जा चढ़े। जब वे सब एक जगह इकट्ठे हो गए तो उन्होंने अंदर की तरफ से किले के फाटक पर धावा बोल दिया। मुगल सैनिक फिर एक बार बेखबरी में धरे गए और फाटक एक बार फिर खुल गए। अब हिम्मतसिंह को कौन रोकनेवाला था ? थोड़ी-सी मार-काट के बाद ही बारगढ़ उसके हत्थे चढ़ गया।''

''वाह-वाह, शाबाश-शाबाश!'' के नारों से बच्चों ने सारा घर गुँजा

दिया।

''मगर बच्चो, कहानी यहीं खत्म नहीं होती।'' मैंने कहा, ''मुगल सेनापति जब गुजरात-विजय से वापस लौटा तो उसकी त्योरियाँ चढ़ गईं। उसने अपने बीसियों हजार सिपाही किले के ऊपर धकेल दिए। राजपूतों ने इस बीच आसपास के मुगल इलाके पर हमला करके काफी रसद-पानी जुटा लिया था। उन्होंने किले के अंदर से तीर-तलवार, बरछी-भालों, ईंट-पत्थरों और उबलते हुए तेल की वह बरसात की कि मुगलों के छक्के छूट गए। अब आसफखाँ के पास सिवा इसके कोई चारा नहीं था कि हाथियों की टक्कर से किले का मुख्य फाटक तोड़ डाले। मगर ऊपर जो ऊटपटाँग चीजों की बरसात शुरू हो जाती थी, उससे हाथी भी आगे बढ़ते नजर नहीं आते थे। अंत में तय यह हुआ कि मुगल छावनी से लेकर किले के फाटक तक, पेड़ों की मोटी-मोटी छालों और जानवरों की सूखी खालों का एक ऐसा मजबूत छप्पर ताना जाए, जिसके नीचे से गुजरकर हाथी फाटक तक पहुँच सकें। उन्होंने आसपास के गाँवों से इकट्ठे करके कई हजार मजदूर इस काम पर लगा दिए। वे जितना छप्पर तैयार कर लेते, उसी के नीचे होकर आगे बढ़ते जाते। देखते-ही-देखते वह छप्पर एक विशाल अजदहे की तरह मुगल छावनी से बढ़ता-बढ़ता किले के फाटक तक आ पहुँचा। अब तो हिम्मतसिंह के साथियों के सिरों पर चिंता के बादल मँडराने लगे।''

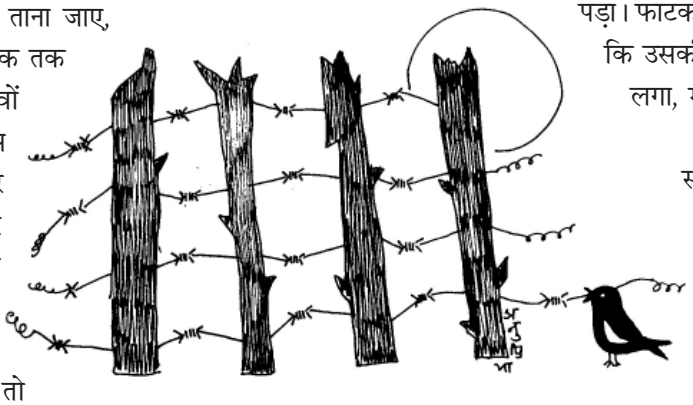

मैंने देखा कि बच्चों के माथे भी चिंता की रेखाओं से भर गए थे।

''लेकिन हिम्मतसिंह ने ताल ठोंकी।'' मैंने स्वयं अपनी जाँघ पर हाथ मारते हुए कहा। बच्चे खुश हो गए। मैंने उन्हें बताया, ''बारगढ़ के किले में एक चोर दरवाजा था, जिसका पता मुगलों को भी नहीं था। रात के समय हिम्मतसिंह अपने पाँच-सौ साथियों को साथ लेकर चुपके-चुपके उस चोर दरवाजे से गढ़ के बाहर आया। अपनी युक्ति की सफलता के सपने सँजोते मुगल सैनिक अपनी छावनी में या तो आराम से पैर फैलाकर सोए पड़े थे या मौज-मजा कर रहे थे। हिम्मतसिंह ने अपने साथियों सहित अचानक उस लंबे अजदहे जैसे छप्पर में जगह-जगह आग लगा दी और मुगल सैनिकों के ऊपर पिल पड़ा। ऐसी आग धधकी, ऐसी मार-पीट मची कि मुगल छावनी दोजख की भट्ठी नजर आने लगी। उस पर तुर्रा यह कि जब तक मुगल छावनी के सारे सैनिक सजग हों, तब तक हिम्मतसिंह और उसके साथी उसी चोर दरवाजे की राह गायब हो चुके थे। छप्पर का तो नाम-निशान भी बाकी न रहा।''

कुछ बच्चों को उछलते देखकर मैंने झट से कहा, ''लेकिन याद रखो, मुगल सेनापति भी कोई मोम का पुतला नहीं था। उसने एक ओर तो छप्पर को फिर से बनवाना शुरू किया और दूसरी तरफ अपने भतीजे कासिम को सैकड़ों सैनिकों के साथ, रात के समय चुपके-चुपके, किले की पिछली खड़ी पहाड़ी दीवार पर चढ़ने और अंदर पहुँचकर फाटक खोल देने का हुक्म दिया। छप्पर का अजदहा फिर एक बार फाटक की ओर बढ़ चला। कासिम भी अपने अनेक साथियों की जान गँवाकर किले की फसील के ऊपर रात के अँधेरे में जा चढ़ा। मगर उसका दुर्भाग्य उसके साथ था। फसील पर हिम्मतसिंह स्वयं जागकर पहरा दे रहा था। अचानक कासिम के पैर से एक पत्थर लुढ़का और उसकी आवाज होते ही कासिम की गरदन पर हिम्मतसिंह की तलवार का एक भरपूर हाथ पड़ा। टूटा हुआ पत्थर और अभागे कासिम का कटा हुआ सिर दोनों एक साथ पहाड़ी की तलहटी की तरफ लुढ़क गए। उस खड़ी दीवार पर चढ़ा हुआ एक भी मुगल सैनिक जीता-जागता वापस नहीं लौटा। हाँ, कुछ ही दिनों में छप्पर का अजदहा जरूर फाटक के साथ आ लगा। मोटे फौलादी तवे माथे पर बाँधे, नशे में धुत्त हाथी छप्पर के नीचे-ही-नीचे फाटक की तरफ दौड़ पड़ा। फाटक पर ऐसी जबरदस्त टक्करें पड़ने लगीं कि उसकी चूलों से पत्थर का बुरादा सा झड़ने लगा, मानो फाटक अब टूटा, अब टूटा!''

बीरबल ऐसे में क्या करता, यही सोचने में मग्न था, जबकि चाणक्य के नेत्रों से तो मानो अंगार बरस रहे थे। चुटिया स्थिर थी। बच्चे एकटक मेरी ओर देख रहे थे।

''एक बहुत बड़ा वजनी पत्थर राजपूतों ने ठीक फाटक के ऊपर रख छोड़ा था। जब फाटक टूटने को हुआ तो उन्होंने उसे ही ऊपर से लुढ़का दिया। वह ठीक हाथी के कंधे पर आकर पड़ा। उसका महावत मारा गया और अचानक मुसीबत से घबराकर हाथी छप्पर के मुहाने का बहुत सा हिस्सा अपने साथ लिये-दिए, अपने पीछे चिल्लाते सैनिकों को रौंदता हुआ वापस भाग चला।

''मगर।'' मैंने कहा, ''आसफ खाँ एक अड़ियल सेनापति था। हाथोहाथ छप्पर की मरम्मत की गई, पत्थर हटाया गया और दूसरा हाथी फाटक पर टक्करें मारने लगा। दूसरा बड़ा पत्थर इतनी जल्दी फाटक पर चढ़ाया नहीं जा सकता था। हाथी का महावत निश्चिंत था कि अब कोई रुकावट बाकी नहीं रह गई है। मगर उसे हिम्मतसिंह की हिम्मत का पता नहीं था। अचानक फाटक के ऊपर से एक रस्सी लहराती हुई नीचे आई। उस रस्सी का सिरा हिम्मत सिंह की कमर के साथ बँधा हुआ था। छप्पर के मुहाने पर वह ऊपर से भूत की तरह नमूदार हुआ। उसने इतनी फुरती से तलवार चलाई कि न सिर्फ महावत का सिर धड़ से अलग हुआ, बल्कि उसकी अपनी रस्सी भी कट गई। लेकिन उसे इसका पता तक न चला।

''वह तो हाथी के सिर के ऊपर बैठा, एक बहुत बड़ा कीला उसके माथे पर रखकर उसे साथ लाए एक हथौड़े से ठोंक रहा था। कीला मस्तक के अंदर घुसते ही हाथी इतनी जोर से चिंघाड़ा और उसने अपना सिर इतनी जोर से हिलाया कि हाथी के साथ-साथ हिम्मतसिंह भी भूमि पर आ रहा। सैंकड़ों मुगल सैनिक उसे निस्सहाय देखकर उसकी तरफ झपटे।

मगर उसी समय उसे अपने सिर के ऊपर वही कटी हुई रस्सी झूलती दिखाई दी। उसने तुरंत रस्सी कसकर पकड़ ली और मुगल सैनिकों के देखते-ही-देखते रस्सी से लटका हिम्मतसिंह का शरीर ऊपर उठता चला गया। कुछ ही पलों में वह दरवाजे की बुर्जी पर अपने साथियों के साथ जा मिला।''

अब तो चाणक्य और बीरबल ने तालियाँ बजानी शुरू कीं तो सब बच्चों में होड़ लग गई। बहुत देर तक कहानी उसी घपले में खोई रही। जब गड़गड़ाहट कुछ कम हुई तो चाणक्य कहानी आगे बढ़ाने के लिए हुँकारा, ''हूँ?''

''हूँ क्या? सब समस्याएँ हल हो गईं। समस्याओं का हल है, 'आगे बढ़ो' रास्ता अपने आप साफ होता चला जाएगा। हिम्मत चाहिए।'' मैंने कहा।

''लेकिन मात किसे हुई?'' बीरबल ने पूछा। उसे हर बार अंत में शतरंज याद आ जाती थी।

''मात तो मुगलों को ही मिली, लेकिन अगले ही दिन हिम्मतसिंह को चुपचाप अपने साथियों के साथ किला छोड़ देना पड़ा, चोर दरवाजे से।''

''क्यों?'' एक कोरस में आवाजें उठीं।

''क्योंकि धीरगढ़ से हिम्मतसिंह की पत्नी का संदेश आया था। हिम्मतसिंह के पिता के प्राण संकट में थे। हिम्मतसिंह जिस समय मारा-मारा वहाँ पहुँचा, नई कैकेयी सूजाबाई पुत्रशोक में अपने 'दशरथ' को मरते न देखकर उसे विष देने की तैयारी कर रही थी। हिम्मतसिंह ने गुप्त स्थान से प्रकट होकर उसका सारा भांडा फोड़ कर दिया और इस तरह पिता-पुत्र का फिर ऐसा मिलन हुआ, जैसा···''

''जैसा सबका हो।'' बीरबल चिल्लाया और गपागप मेरे पाँचों मालपुए खा गया। उसके साथ-साथ बच्चों ने ऐसा आसमान सिर पर उठाया, मानो इस बार भी बीरबल ने ही मैदान मारा हो, मगर तुम लोग तो जानते ही हो, सब बच्चे एक से होते हैं!

साअ

प्रस्तुति : मंजुरानी जैन

कसरत-योग कराते दादा

बाल-कविता

● **भगवती प्रसाद गौतम**

दादा-पापा

कभी चढ़ा उनके कंधों पर,
कभी पेट पर लेटा।
दादा के बेटे ज्यों पापा,
मैं दादा का बेटा।

दादा गाते गीत रसीले,
प्यारी कथा सुनाते।
पापा दिखलाते चिड़ियाघर,
बिग बाजार घुमाते।

कसरत-योग कराते दादा,
कहते स्वस्थ रहो जी।
पापा लाते ढेर खिलौने,
खेलो, मस्त रहो जी।

जैसे लाड़ लड़ाते दादा,
हैं वैसे ही पापा।
किसने सचमुच दोनों का यह,
चित्र अनोखा छापा।

अगड़म-बगड़म

अगड़म-बगड़म भीड़-भड़क्का,
हैं बेहाल हमारे कक्का।

टें टें-पों पों, शोर-शराबा,
हुआ कन्हैया हक्का-बक्का।

साड़ी-गाड़ी, पैंट-पजामा,
आजू-बाजू धक्कम-धक्का।

आपा-धापी, चक्कर-टक्कर,
इधर सेठजी, उधर उचक्का।

अफसर-दफतर, धंधा-पानी,
भागे खाकर कच्चा-पक्का।

चिड़कली का गीत

कड़वी कह या मिसरी घोल,
अरी चिड़कली कुछ तो बोल।

पापा घूरें, मम्मी डाँटें,
भैया छिप-छिप मारे चाँटे।

टीचर-मेम सभी ने मिलकर,
मचा रखी है पोलम-पोल।

बस्ते भारी, कठिन किताबें,
ढूँढ़ें कब तक बेल्ट-जुराबें।
प्राण खा गया होमवर्क भी,
छीन लिया बचपन अनमोल।

रंगत गई सलोने तन की,
किसे बताएँ अपने मन की।
लगता तू भी आँख चुराकर,
करती है बस टालम-टोल।

समझे अब तू क्यों बोलेगी,
खुद ही मरजी से डोलेगी।
कहीं दिखा दाना-चुग्गा तो
उड़ जाएगी पाँखें खोल।
अरी चिड़कली कुछ तो बोल!

१ त-८ अंजलि, दादाबाड़ी,
कोटा-३२४००९ (राजस्थान)
दूरभाष : ०९४६११८२५७१

बाल-कहानी

माटी की महक

● देवेंद्र सत्यार्थी

अपनी विलक्षण किस्सागोई से बाल साहित्य को समृद्ध करनेवाले दिग्गजों में देवेंद्र सत्यार्थी (१९०८-२००३) का नाम बड़े आदर के साथ लिया जाता है। वे हिंदी के ऐसे अलबेले घुमंतू साहित्यकार थे, जिनका पूरा जीवन यात्राएँ करते बीता। उनके इस फक्कड़ व्यक्तित्व की छाप उनके समूचे साहित्य में देखी जा सकती है। सत्यार्थीजी की खूबसूरत बाल कहानियाँ पढ़कर नन्हे बाल पाठक तो आनंदित होते ही हैं, बच्चों के लिए लिख रहे लेखक भी बहुत कुछ सीख सकते हैं। यहाँ बच्चों के लिए लिखी गई सत्यार्थीजी की एक बड़ी रसपूर्ण कहानी 'माटी की महक' दे रहे हैं, जिसमें उनकी किस्सागोई का निराला अंदाज है। यह छोटी सी कहानी परियों के देश में गए हंसपाल की है, जिसे धरती पर हरे-हरे खेतों का आकर्षण व्याकुल कर देता है और उसके पैर वापस धरती की ओर चल पड़ते हैं।

हंसपाल के बारे में सारी बस्ती में मशहूर था, ऐसा खब्ती आदमी दुनिया में ढूँढ़े न मिलेगा। वरना ऐसा भी क्या कि इधर साँझ हुई, उधर कदम जैसे किसी जादू में बँधे पुराने महल की ओर बढ़ जाते। खँडहर बना पुराना महल गाँव के बाहर था। महल के बीचोबीच एक बावड़ी थी। उस बावड़ी की सीढ़ियों पर बैठ जाता हंसपाल। बैठा रहता देर तक। पता नहीं क्या चीज थी, जो उसे इस बावड़ी की ओर खींच लाती।

इधर घरों में दीये जलते, उधर हंसपाल की बाँसुरी पर राग जोगिया, राग बिलावल, राग भैरवी और मल्हार नाच उठते।

…और फिर समय का कुछ होश ही नहीं रहता था। आधी-आधी रात तक हवा में काँपती रहती हंसपाल की बाँसुरी की आवाज।

''पता नहीं, लेकिन है जरूर कोई-न-कोई बात…और पिछले तीन सालों से है। तभी सुनी पहले-पहल बाँसुरी की आवाज।'' लोग हंसपाल से भी खोद-खोदकर पूछते, ''आखिर क्या रखा है उन खँडहरों में? उस सूखी बावड़ी के पास बैठने की तुम्हें क्या जरूरत है? अगर बाँसुरी बजानी ही है तो अपनी छत पर क्यों नहीं?''

लेकिन हंसपाल तो ठहरा हंसपाल। एकदम बेफिक्र, अलमस्त। हर बात हँसकर टाल देता।

वैसे भी वह क्या बताता? कैसे बताता? यह कि बाँसुरी आई कहाँ से? किसने दी? अगर वह परी से हुई विचित्र मुलाकात के बारे में बताता, तो भला कौन यकीन करता? फिर सब्जपरी ने होंठ पर उँगली रखकर कसम जो खिला दी थी उसे।

यों ही एक-एक कर दिन कटते रहे। लोग एक दिन हंसपाल के पिता नागदेव के पास भी जा पहुँचे। कहा, ''इतने बड़े जमींदार आप! और आपका लड़का…!''

नागदेव मूँछों में मंद-मंद हँसे। बोले, ''अभी उम्र ही क्या है उसकी! लड़कपन है। बड़ा होकर खुद ही सँभल जाएगा।''

इधर पिता की शह, उधर नाना-नानी का लाड़। हंसपाल के पाँव जमीन पर न थे। मगर दोस्त भला शरारत से कैसे बाज आते!

एक दिन हंसपाल शाम के समय नीला कुरता, सफेद पगड़ी पहने, ठाट से घोड़े पर बैठकर जा रहा था। अचानक दोस्तों ने आ घेरा। वे पहले से ही सोचकर बैठे थे। बहुत हुआ, अब हंसपाल को राह पर लाना ही होगा।

रलिया ने हालचाल पूछने के बहाने उसे रोका और मखना ने कोई पुराना किस्सा छेड़ दिया। बोला, ''सुनो हंसपाल, जरा ध्यान से सुनो। रात मुझे एक कहानी याद आई। अरे वही न, जिसकी शुरुआत इस तरह होती थी कि फकीरा गाँव में एक थी भूली भटियारिन और एक सोने की मेंगनी देने वाली उसकी प्यारी बकरी, और फिर…! याद है न हंसपाल? तुम्हारे नानाजी सुनाते थे यह कहानी और हम सारे दोस्त मिलकर सुनते थे। कहानी सुनते हुए इस कदर हँसते थे, इस कदर कि…हा-हा-हा!''

कुछ देर तक तो हंसपाल सुनता रहा, हँसता रहा। लेकिन जैसे ही साँझ का झुटपुटा छाने लगा, उसके चेहरे पर पसीना छलछला आया। बेचैन होकर बोला, ठहरो, कोई बुला रहा है…! और फिर घोड़े पर बैठे यह जा, वह जा।

दोस्तों को यह उम्मीद न थी। वे सबके सब एकदम हक्के-बक्के से रह गए। सोचने लगे, क्या इस कदर पागल हो गया है हंसपाल?

उधर हंसपाल थोड़ी ही देर में उसी खँडहर में पहुँचा। बावड़ी की सीढ़ियों पर बैठते ही बाँसुरी में जैसे जान पड़ गई। लेकिन आज बाँसुरी की आवाज में अजीब-सा दर्द था। हंसपाल बजाता रहा, बजाता रहा। कुछ होश न था। और जब बाँसुरी थमी, हंसपाल की आँखें भीग चुकी थीं।

सोच रहा था हंसपाल, 'आज तीन वर्ष हो गए उस घटना को। पूरे तीन वर्ष! ऐसे तो मैं पागल हो जाऊँगा।'

तभी हंसपाल को अजीब-सी भीनी गंध महसूस हुई। फिर पेड़ों के झुरमुट के बीच से किसी की मधुर हँसी की आवाज। खन-खन, खनन-खन··· ! जैसे घुँघरू बज रहे हों।

''कौन ?'' हंसपाल हैरान-परेशान।

लेकिन जवाब में फिर वही खन-खन, खन-खन।

हंसपाल चौंककर उठ खड़ा हुआ। वह चकराया हुआ सा आसपास देखने लगा।

तभी उसे बड़ी मीठी आवाज सुनाई दी, ''जिसके इंतजार में तुम बैठे हो, मैं वही हूँ, हंसपाल।'' और सब्जपरी हंसपाल के सामने थी। हंसपाल को अपनी आँखों पर यकीन नहीं आ रहा था।

अचानक तीन साल पहले का दृश्य हंसपाल की आँखों में तैरने लगा, जब यों ही घूमते-घामते वह बावड़ी पर आया था और सब्जपरी से भेंट हुई थी। तो क्या सब्जपरी को अब तक याद है उसका नाम ?

''उफ, मैंने कितनी तकलीफ झेली है इन तीन सालों में। कैसे काटा है एक-एक दिन!'' हंसपाल ने कहा, ''अब तो तुम मुझे छोड़कर नहीं जाओगी न!''

''मैं जानती हूँ तुम्हारा दुःख। हर शाम यहाँ बावड़ी पर आकर चुपचाप तुम्हारी बाँसुरी जो सुनती थी। मैंने सचमुच बहुत कड़ी परीक्षा ली तुम्हारी और तुम खरे उतरे।'' सब्ज परी के स्वर में दर्द था, ''लेकिन फिर भी धरती पर मेरा रहना नामुमकिन है।''

''तो फिर मैं परीलोक चलने को तैयार हूँ। क्या यह भी नामुमकिन है ?'' हंसपाल ने अधीरता से कहा।

''नामुमकिन तो नहीं।'' सब्जपरी ने कहा, ''तुम कल यहीं मिलना। मैं परीरानी से अनुमति लेकर आऊँगी।''

और अगले दिन सब्जपरी आई, तो उसके पास सूरज की किरणों जैसे सुनहले-सुनहले दो पंख थे। उसने वे पंख हंसपाल के कंधों पर बाँधे। दोनों एक साथ उड़ने लगे और अगले ही पल वे परीलोक में थे।

सब्जपरी हंसपाल को परीरानी देवमालिका के पास ले गई। परीलोक में नृत्य-उत्सव तो हर वक्त चलते ही रहते थे। पर हंसपाल के स्वागत में और अधिक रंगारंग कार्यक्रम हुआ।

इसके बाद परीरानी ने अपने सेवक से कहकर परीलोक की सबसे खास सुरधनुषी वाटिका से अमर फल मँगवाया। उसका रस निचोड़कर हंसपाल को दिया, ''लो, इसे पियो। जब तक यहाँ रहोगे, अमर रहोगे।''

पीते ही हंसपाल को अपने भीतर अद्‌भुत परिवर्तन महसूस हुआ। नई ताजगी, नए आनंद से भर उठा।

अब सब्जपरी और हंसपाल परीलोक में साथ-साथ घूमते। हंसपाल ने परीलोक के बारे में बस सुना ही था। पर यहाँ आया तो जैसे बुद्धि चकरा गई। पूरी एक अचरज भरी दुनिया उसके सामने थी। हर पल सुख और आनंद से बीतता। परीलोक के चप्पे-चप्पे से वह परिचित हो गया था। जीवन में कहीं कोई दुःख न था, कोई अभाव न था।

सब्जपरी और हंसपाल को साथ-साथ देखकर दूसरी परियों को ईर्ष्या हुई। वे आपस में कहतीं, ''धरती का आदमी यहाँ कैसे आ गया ? फिर तो हमारे सारे नियम धरे रह जाएँगे। हम परियों को कौन पूछेगा ?''

किसी-किसी ने कहा, ''परीरानी को अपनी बात कहनी चाहिए। ऐसी ही मनमानी होती रही तो··· ?''

बात बढ़ते-बढ़ते परीरानी देवमालिका तक पहुँची। परीरानी ने ध्यान नहीं दिया, तो सब परियाँ इकट्ठी होकर अपना विरोध प्रकट करने आईं। पहली बार किसी ने परीरानी से सवाल किया था। पर सवाल तो वाजिब था। सुवर्णा परी सबसे आगे थी। उसी ने कहा, ''आपने हंसपाल को अमर बना दिया। यह तो ठीक नहीं।''

परीरानी ने समझाया, ''जो होना था, वह तो हो चुका। अब इसे भूल जाओ।''

''नहीं परीरानी, ऐसे तो परीलोक का अनुशासन बिगड़ जाएगा।'' सब परियों ने एक साथ मिलकर कहा।

परीरानी असमंजस में थी। सोच रही थी, क्या करूँ, क्या नहीं ? उसने परियों को फिर से समझाया, ''हंसपाल को अमरता का वरदान तो दिया जा चुका है। अब उसे वापस लौटाना संभव नहीं।''

''तो ठीक है, उसे सदा युवा रहने का वरदान मत दीजिए। वह बूढ़ा होगा, तो खुद ही ऊबकर यहाँ से चला जाएगा।'' केतकी परी का सुझाव।

परीरानी बोली, ''ठीक है। आप सब मेरे पास शिकायत लेकर आई हैं। मुझे कुछ तो आपकी बात रखनी पड़ेगी।···पर हंसपाल बुरा नहीं है। कहीं ऐसा न हो कि बाद में आप लोगों को पछतावा हो ?''

''जो भी हो, परीरानी, परीलोक का अनुशासन तो रहना ही चाहिए। नहीं तो सब गुलगपाड़ा हो जाएगा।'' इस बार भी सुवर्णा और केतकी परी ही सबसे आगे थी।

आखिर परीरानी को परियों की बात पर मुहर लगानी ही पड़ गई। हंसपाल को अमरता का वरदान तो मिला, पर वह धरती के लोगों की तरह बूढ़ा भी होगा। हमेशा युवा रहने का वरदान उसे नहीं मिल पाया।

इस बात का पता हंसपाल और सब्जपरी को भी चला। पर उन्होंने कुछ परवाह नहीं की। किसी ने पूछा भी तो उन्होंने हँसते हुए कहा, ''अब कल की बात तो हम कल ही सोचेंगे। आखिर आज का सुख भी तो कम नहीं। हमेशा कल के बारे में सोचकर क्यों हम मन मैला करें ?''

हंसपाल और सब्जपरी के कुछ वर्ष बेहद आनंद से बीते। सारा दिन घूमना, पुष्प वनों की सैर, फूल चुनना, हरित उद्यान में किस्म-किस्म के खेल खेलना, एक-दूसरे को किस्से-कहानियाँ सुनाना, ढेरों बातें। साथ ही नृत्यकला का अनूठा आनंद।···लेकिन फिर अचानक कुछ बदल

गया। हंसपाल के शरीर, चेहरे और चाल में फर्क दिखाई पड़ने लगा। उसमें पहले जैसी चुस्ती न रही। वह जल्दी थक जाता। चेहरे पर भी बुढ़ापे की दो-एक रेखाएँ दिखाई देने लगीं। कई बार वह उदास हो जाता। सोचता, मैं परीलोक में आया ही क्यों?

लेकिन सब्जपरी उसे दिलासा देती, तुम यह सब मत सोचा करो। तुम मुझे अब भी उतने ही अच्छे लगते हो, जितने पहले लगते थे।

''हाँ, पर···!'' कहते-कहते हंसपाल रुक जाता। कुछ था जो उसके भीतर अटका हुआ था। उसकी आँखें रह-रहकर गीली हो जातीं।

कुछ समय बीता। हंसपाल का सारा शरीर झुर्रियों से भर गया। शरीर थका-थका रहता। बहुत धीरे-धीरे चल पाता था। लेकिन सब्ज परी अब भी युवा थी। उतनी ही सुंदर और चुस्त। हंसपाल उससे कहता, ''सब्जपरी, अब तुम मुझे अकेला छोड़ दो। मैं तुम्हें दुःख नहीं देना चाहता।''

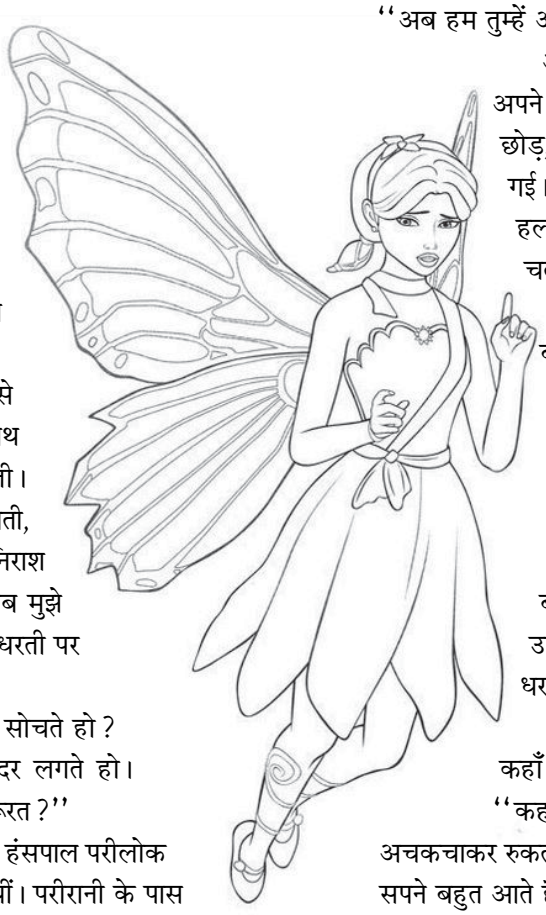

लेकिन सब्जपरी अब भी उसे उतना ही चाहती थी। उसे अपने साथ घुमाने ले जाती। खूब बातें करती। किस्से-कहानियाँ सुनाकर दिल बहलाती, दिलासा देती। हंसपाल कभी-कभी निराश हो जाता, ''परीलोक की सुंदरता अब मुझे अच्छी नहीं लगती, सब्ज परी। मुझे धरती पर जाने दो।''

सब्जपरी कहती, ''तुम बेकार सोचते हो? बुढ़ापे में तुम पहले से अधिक सुंदर लगते हो। भला तुम्हें यहाँ से जाने की क्या जरूरत?''

जो परियाँ पहले चाहती थीं कि हंसपाल परीलोक से चला जाए, अब तो वे भी दुखी थीं। परीरानी के पास जाकर कहतीं, ''क्या ऐसा नहीं हो सकता कि हंसपाल फिर से युवा हो जाए?''

लेकिन परीरानी लाचार थी। कहती, ''अब मेरे हाथ में यह नहीं है।''

एक दिन हंसपाल अकेला घूमने निकल पड़ा। जान-बूझकर वह एक अजनबी रास्ते पर बढ़ा, जो परीलोक के पिछवाड़े की ओर से जाता था। चलते-चलते एक सुनसान जंगल आ गया।

वहाँ अजीब-सी गंध थी। जाने क्या हुआ कि हंसपाल के पैर तेजी से आगे बढ़ने लगे। उसे लगा, यह गंध परीलोक की नहीं हो सकती। यह गंध कुछ ऐसी है, जिसके लिए वह वर्षों से बेचैन था।

कुछ दूर जाने पर महक तेज हो गई। और आश्चर्य! नीचे धरती नज़र आ रही थी—बहुत पास। दूर-दूर तक हरे-हरे खेत, वर्षा की बौछारों में भीगते हुए! किसान हल जोत रहे थे, स्त्रियाँ धान रोप रही थीं। धान और माटी की महक जैसे उमड़-उमड़कर चारों ओर फैल रही थी।

हंसपाल के आगे उसका बचपन तैर गया, जब पहली बार जिद करके उसने नाना के खेतों में हल चलाया था। तब भी मिट्टी की ऐसी ही मीठी-मीठी महक महसूस की थी उसने। अचानक उसे पत्तों की खड़खड़ाहट सुनाई दी। पीछे मुड़कर देखा, परियाँ एक कतार में खड़ी थीं। उनकी आँखों में आँसू थे।

''मैं तुम्हारे मन की पीड़ा समझ गई, हंसपाल।'' परीरानी ने कहा, ''अब हम तुम्हें और नहीं रोकेंगी।''

और फिर परीरानी के कहने पर सब्जपरी हंसपाल को अपने साथ धरती पर ले आई। हंसपाल को खेतों के पास छोड़, खुद हरे-हरे पत्तों पर चमकती ओस के रूप में बदल गई। हंसपाल धीरे-धीरे चलता धान के एक खेत में पहुँचा। हल जोतते किसान से कहा, ''तुम आराम करो। मैं हल चलाऊँगा।''

आसपास खड़े लोग ताज्जुब में पड़ गए। इतना बूढ़ा आदमी हल चलाएगा? लेकिन हंसपाल को अजीब-सी खुशी महसूस हो रही थी। सारे दिन उत्साह से भरकर वह हल चलाता, टप्पे और गीत सुनाता रहा। उसके भीतर से धरती के गीतों का झरना फूट पड़ा था।

अब तो रोज रात को आसपास के गाँवों के बच्चे-बड़े सभी हंसपाल के पास आकर बैठते। हंसपाल उन्हें एक से एक दिलचस्प किस्से-कहानियाँ सुनाता, धरती और परीलोक की कहानियाँ।

सुनकर सब मुग्ध हो जाते। पूछते, ''बाबा, आपने कहाँ से सुनी ये कहानियाँ?''

''कहाँ से···?'' कहते-कहते हंसपाल एक पल के लिए अचकचाकर रुकता। फिर हँसते हुए कहता, ''सपने में···! असल में मुझे सपने बहुत आते हैं और हर सपने में एक कहानी···!''

''कहानियों के सपने···?'' लोग हैरान हो जाते।

''हाँ, कहानियों के सपने···और सपनों की कहानियाँ!'' हंसपाल हँसता। हँसते-हँसते उसकी आँखों में आँसू आ जाते।

लोगों को हंसपाल की बात कुछ समझ में आती, कुछ नहीं। पर सबको लगता, हंसपाल में कुछ अलग बात है, सबसे अलग बात। उसकी बातें भी कुछ अलग ही हैं।

हंसपाल को गुजरे आज हजारों साल हो गए, लेकिन हल जोतते किसान अब भी अपने गीतों में उसे याद करते हैं।

प्रस्तुति : अलका सोई
५ सी-४६, न्यू रोहतक रोड,
नई दिल्ली-११०००५
दूरभाष : ०९८७१३३६६१६

मौसम के नन्हे गीत

बाल-गीत

● राजनारायण चौधरी

गरमी
गरमी है गुस्सैल बड़ी ही,
यों ही गुस्सा करती है;
बिना वजह ही सबके ऊपर
लू के चाँटे जड़ती है।

बरखा
बरखा रानी बिल्कुल दानी,
खूब दान करती है;
ताल-तलैया, नदी, कुआँ,
सबकी झोली भरती है।

शरद
शरद सुहानी साफ-सफाई
करती लगत बड़ी भली;
त्योहारों का लिये तोहफा
देती मन की खिला कली॥

सर्दी
सर्दी दीदी जब भी आती
ओस-कुहासा-कुहरा लाती;
थर-थर-थर-थर सभी काँपते
आकर ऐसे रोब जमाती।

शिशिर
नहीं शिशिर का काम भला
वन-उपवन पर गुर्राता है;
पल्लव-पत्तों को उजाड़
वह कहर बहुत ही ढाता है।

वसंत
राजा भैया है वसंत
फूलों पर चलकर आता है;
वन-उपवन क्यारी-क्यारी में
रौनक खूब लुटाता है।

बिल्ली
बिल्ली जाकर दिल्ली से
ले आई ढेर खिलौने
नहीं बिके तो दाम लगाया
उसने औने-पौने।

बेच खिलौने गिने रुपए
हुआ बहुत जब घाटा,
पीट लिया माथा, फिर बोली—
इस धंधे को टा-टा।

चूहा
चूहा चला उड़ाने खिल्ली,
कभी एक दिन बिल्ली की।
मगर देखते ही बिल्ली को,
राह पकड़ ली दिल्ली की।

बकरी
में-में करती भागी बकरी
बरसा जब पानी,
भला भीगने में क्यों
उसकी मरती है नानी?

मेढक तो है सदा मनाता,
बारिश हो जमकर;
भरे तलैया-ताल-कुआँ
उछले वह रह-रहकर।

इंद्रधनुष
इंद्रधनुष के रंग देख
पिंकी को आया एक विचार;
उससे रंग माँगकर मैं भी
क्यों न करूँ अपना शृंगार?

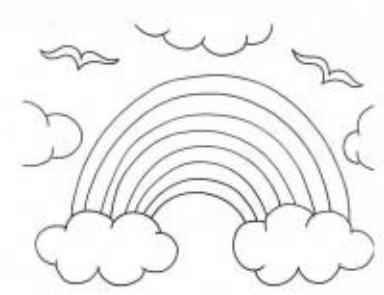

मगर पहुँच पाए वह कैसे
नभ में इंद्रधनुष के पास?
सूझा नहीं उपाय एक भी,
पिंकी को, वह हुई उदास।

जाने-माने बाल-साहित्यकार। 'दीप हमारे बच्चे सारे', 'पराग', 'झूमें-नाचें-गाएँ हम', 'अगड़म-बगड़म ना-ना-ना' (बाल काव्य-संग्रह); 'पंख किसने रँगे हैं' (बाल कथा-संग्रह) तथा और भी प्रौढ़ साहित्य। छोटे-बड़े दर्जनभर पुरस्कारों से सम्मानित।

प्रोफेसर कॉलोनी,
हाजीपुर-८४४१०१ (बिहार)
दूरभाष : ०७२०९१८९६३९

बाल-कहानियों की दुनिया, यानी सातवीं कोठरी का सच

● प्रकाश मनु

बच्चों के लिए कहानियाँ लिखने से ज्यादा आनंद मुझे किसी और चीज में नहीं आता। इन्हें लिखते समय लगता है, जैसे मैं भी मिट्टी से छोटी-छोटी मूर्तियाँ बनाता कोई बच्चा हूँ। हर मूर्ति कुछ अलग। हर मूर्ति का अलग चेहरा, अलग रंग-रूप, अलग भंगिमा। जीवन के कुछ अलग शेड्स। हर बार कहानी पूरी होने पर लगता है कि एक बार फिर मैंने अपने बचपन को जी लिया। मेरी बाल-कहानियों में भी यही बचपन की दुनिया है, जिसका रस-आनंद कभी खत्म होने में ही नहीं आता।

बाल-कहानी बेशक बच्चे की सर्वाधिक प्रिय और अपनी-सी चीज है। एक ऐसा 'जादुई खिलौना', जो बच्चों के मन में सबसे ज्यादा सपनीले रंग भरता है और उसके भीतर अनंत रूप-रंग वाली ऐसी दुनिया बसा जाता है, जिसके कमरों में से कमरे, दरवाजों में दरवाजे खुलते चले जाते हैं। और जिंदगी अपने पूरे आदमकद रूप में, पूरी खूबसूरती से उसके भीतर दस्तक देती है। यह कहानियों की दुनिया ही है, जहाँ आकर बच्चे सबसे पहले उड़ना सीखते हैं। बिना पंखों के उड़ना, बिना थके उड़ते ही जाना। और यों बेछोर उड़ते-उड़ते वे इस दुनिया के भीतर की न जाने कितनी नई, अज्ञात और रहस्यमय दुनियाओं की सैर कर आते हैं। खुली आँखों से न जाने कितने सपने देख लेते हैं और जाने-अनजाने न जाने किन-किन अजानी मंजिलों को छू लेते हैं।

दुनिया के प्राय: सभी बड़े चिंतकों और मनोविज्ञानियों ने माना है कि बचपन में पढ़ी या सुनी कहानियों का बच्चों के व्यक्तित्व पर बहुत गहरा असर पड़ता है और आगे चलकर वह क्या बनेगा, उसका व्यक्तित्व किस रूप में ढलेगा, यह बहुत कुछ इस बात से तय होता है कि उसका बचपन किस तरह की कथा-कहानियों की दुनिया के बीच गुजरा है। विश्व के कई प्रतिष्ठित लेखकों ने भी स्वीकार किया है कि उनके व्यक्तित्व-निर्माण के पीछे बचपन में सुनी कथा-कहानियों का बड़ा हाथ है। हिंदी के एक बड़े कथाकार शैलेश मटियानी का बचपन घोर गरीबी और अभावों में गुजरा। पर बचपन में सुनी कहानियाँ इस हालत में भी उन्हें चुपके-चुपके लेखक बनने की राह पर ले जा रही थीं। यहाँ तक कि बड़े होकर उन्होंने बच्चों और बड़ों के लिए जो कुछ लिखा, उसके पीछे बचपन में सुनी कहानियों का असर साफ नजर आता है। इसी तरह बहुचर्चित कहानीकार कमलेश्वर की 'राजा निरबंसिया' पढ़कर भी साफ समझ में आता है कि वे कौन से प्रभाव, कल्पनाएँ, दबाव और अत:प्रेरणाएँ थीं, जो बड़े होकर उन्हें लेखक बना रही थीं।

सच तो यह है कि मैं जब भी बाल-कहानियों के बारे में सोचना शुरू करता हूँ तो बचपन की सपनीली दुनिया में पहुँचे बगैर नहीं रह पाता। वह दुनिया जिसमें माँ और नानी द्वारा सुनाई एक से एक खूबसूरत और अचरज भरी कहानियों का अकूत खजाना था। उन्हीं में 'अधकू' की कहानी भी थी। एक हाथ, एक पैरवाला दुबला-पतला सींकिया अधकू, जो अपने कद्दावर, बलशाली भाइयों से लगातार तिरस्कृत होता है। उसे बे-काम का समझकर मारने की कोशिशें भी होती हैं। तब एक माँ है, जो उसे हर बार बचाती है। वही सींकिया अधकू बड़ा होता है तो इतना समझदार बनता है कि राजकारा में बंदी अपने भाइयों का 'मुक्तिदाता' साबित होता है। कहानी का अंत होते-होते अधकू राजदरबार में भरपूर सम्मान पाता है और अपने भाइयों को भी ढंग का काम-काज दिला देता है।

माँ जब यह कहानी सुना रही होती थी तो लगता था, वह दुबला-पतला सींकिया अधकू मैं ही हूँ। और फिर कहानी के आगे बढ़ने के साथ-साथ एक तेज झंझावात की तरह अधकू का दर्द मेरे भीतर बहने लगता था। आँखों के आगे भविष्य के सपने और उजली कामनाओं के चिराग जलने लगते थे।

बचपन में सुनी ऐसी ही एक और कहानी थी, उस भले-भोले राजकुमार की, जिसे चेतावनी दी जाती है कि वह महल की छह कोठरियाँ तो देख सकता है, पर सातवीं कोठरी में जाने की उसे मनाही है। वह राजकुमार भी अधपगला है, धुनी। वह मन-ही-मन तय करता है कि चाहे जो हो, वह सातवीं कोठरी भी देखेगा कि आखिर इसमें क्या है? और फिर एकाएक कहानी में तेज गति, बल्कि एक भूचाल-सा आ जाता है। राजकुमार के सिर पर एक के बाद एक मुसीबतें खौफनाक बिजलियों की तरह टूटने लगती हैं! इधर कहानी सुननेवाला नन्हा बालक, जो कि मैं हूँ, लगभग सम्मोहन की हालत में है। छाती में धड़-धड़, धड़-धड़ शुरू हो

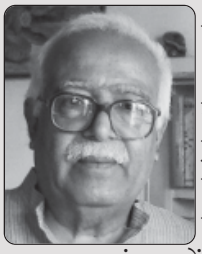

वरिष्ठ बाल-साहित्यकार। 'यह जो दिल्ली है', 'कथा सर्कस' और 'पापा के जाने के बाद' उपन्यास चर्चित हुए। 'एक और प्रार्थना', 'छूटता हुआ घर' कविता-संग्रह तथा 'अंकल को विश नहीं करोगे', 'अरुंधती उदास है' समेत ग्यारह कहानी-संग्रह। शिखर साहित्यकारों से मुलाकात, संस्मरणों और आलोचना की कई पुस्तकें। साहित्य अकादमी के पहले बाल-साहित्य पुरस्कार, उ.प्र. हिंदी संस्थान के 'बाल-साहित्य भारती' पुरस्कार तथा हिंदी अकादमी के 'साहित्यकार सम्मान' से सम्मानित।

जाती है। अजब-सा खौफ भरा मंजर! लेकिन बड़ा मजा आता है।···कहानी भागती हुई आगे बढ़ती जा रही है और एक के बाद एक तिलिस्मी दरवाजे खुलते जाते हैं। राजकुमार बड़े-से-बड़े दु:ख उठाता है, लेकिन हारता नहीं है, उफ तक नहीं करता। अंत में वह विजयी भाव से सामने आता दिखाई पड़ता है। उसका माथा गर्व से दमक रहा है।···आँखों में चमक!

याद है, बचपन में यह कहानी सुनते हुए लगता था, सातवीं कोठरी में जानेवाला वह अधपगला, दुस्साहसी राजकुमार मैं ही हूँ। बड़ा होऊँगा तो मैं भी उस सातवीं कोठरी में जाकर देखूँगा कि उसमें क्या रहस्य छिपा है। जो भी मुसीबतें आएँगी, झेलूँगा; लेकिन रुकूँगा नहीं, हारूँगा नहीं। और आज लगता है, मेरी कलम को बचपन में सुनी उन्हीं कहानियों का वरदान मिला है। हृदय में करुणा, सहृदयता और परदुखकातरता शायद उन्हीं कहानियों से आई हो, जो जाने-अनजाने मुझे इनसानियत का गहरा पाठ पढ़ा रही थीं। जाने क्या बात है कि उसके बाद सुनी-पढ़ी सैकड़ों कहानियाँ फीकी पड़ीं, मुरझा गईं, पर बचपन में सुनी कहानियों का असर आज तक कम नहीं हुआ।

□

यह है बाल कहानियों की अदम्य शक्ति या ताकत, जिस पर अकसर कम ही गौर किया जाता है। हाँ, यह बात अपनी जगह सच है कि कल की कहानी से आज की कहानी का मिजाज एकदम बदला हुआ है। बल्कि सच तो यह है कि वह लगातार बदलता गया है और बदल रहा है। आज की बाल कहानी पर आज के समय और हालात का तथा निरंतर बदलती हुई दुनिया की सच्चाइयों का इतना सीधा असर पड़ा है कि उसे नजरअंदाज करना मुमकिन नहीं है। आज के बच्चों को तिलिस्म उतना नहीं भाता, जितना अपने आसपास की दुनिया की छोटी से छोटी हलचल। या कि अपनी नन्ही-मुन्नी दुनिया की नन्ही-नन्ही मुश्किलें, सुख-दुख, सपने, आकांक्षाएँ, यहाँ तक कि शिकवे-शिकायतें भी।

साफ कहूँ तो बच्चों के लिए कहानियाँ लिखने का आकर्षण पहले-पहल 'धर्मयुग' से मन में पैदा हुआ। 'धर्मयुग' के बच्चों के पन्ने मुझे आकर्षित करते थे और एक नई दुनिया के कपाट खोलते थे। किसी पत्रिका के महज दो पन्ने कैसा गजब का आकर्षण छिपाए हो सकते हैं, यह जानना हो तो उस दौर का 'धर्मयुग' देखना चाहिए। 'धर्मयुग' के संपादक धर्मवीर भारती खुद भी बड़े समर्थ कवि-कथाकार थे। उन्होंने इन दो पृष्ठों में ही बच्चों की दुनिया को अपने पूरे आकर्षण और सर्जनात्मक ऊर्जा के साथ उतार दिया था। कला-सज्जा में एक बिल्कुल नई दृष्टि और अंदाज। और रचनाओं का चयन भी ऐसा कि उनमें छपी कविताएँ और कहानियाँ दोनों पढ़ते ही मेरे दिल पर दर्ज हो जाती थीं। वह छाप मन से कभी नहीं गई और बाद में जब कविताएँ और कहानियाँ लिखी गईं तो 'धर्मयुग' में पढ़ी हुई दिलचस्प कहानियों और कविताओं का असर मुझे ऐसा ही कुछ और सिरजने के लिए विवश करने लगा।

पहले निस्संदेह कविताएँ ही लिखी गईं, पर फिर कहानियाँ लिखने का सिलसिला शुरू हुआ, तो वह निरंतर चलता ही रहा। उसमें जीवन की अलग-अलग छवियाँ अलग-अलग रूपों में उभरने लगीं। निस्संदेह, पहले अपने जीवन में देखे-घटे प्रसंगों पर ही लिखा। धीरे-धीरे अपने जीवन की किसी घटना या आसपास देखे किसी दृश्य या प्रसंग को कैसे कहानी में बदलना है, इसकी अंत:प्रेरणा भीतर जागने लगी। नतीजा यह हुआ कि कहानी का कोई बना-बनाया ढंग अपनाने के बजाय नए-नए प्रयोग भी चलते रहे। पर कोई प्रयोग बाल कहानी के लिए भारी न हो, यह कोशिश भी बराबर रही। इसके लिए परंपरा और आधुनिकता के बीच एक सार्थक पुल बनाने की कोशिश भी निरंतर चलती रही। हाँ, इसके लिए कसौटी हमेशा एक ही थी कि बच्चे इस कहानी को पढ़ेंगे तो वे इसमें रस लेंगे या नहीं? कहानी के साथ-साथ वे बहते हैं और पात्रों के सुख-दुख से जुड़ जाते हैं, तभी कोई कहानी अच्छी बाल-कहानी कहला सकती है। बच्चों के लिए लिखते समय चूँकि मैं खुद बड़प्पन का सारा बोझ उतारकर अपने बचपन की भोली में पहुँच जाता था, इसलिए कहानी लिखने में भी खूब आनंद आता था। यह भी एक तरह से बाल-कहानी की एक कसौटी ही है। बच्चों के लिए लिखते समय जिस रचना से खुद आप आनंद में न भीगें, बच्चे उसे पढ़कर कैसे आनंदित हो सकते हैं?

बाद में 'नंदन' में आया तो जाहिर है, बाल-कहानियाँ लिखने का सिलसिला कुछ अधिक तेजी से चल पड़ा। 'नंदन' में परीकथाओं और प्राचीन कथाओं पर अधिक जोर था और हर साल छपने वाले प्राचीन कथा विशेषांक और परीकथा विशेषांक के लिए भी हमें कहानियाँ लिखनी होती थीं। पर उससे अलग लिखने की गुंजाइश बिल्कुल न हो, ऐसा भी नहीं है। परीकथाओं को अलग अंदाज में कैसे लिखा जाए, जिससे उसमें परी तत्त्व के बजाय जीवन की सहज स्थितियाँ, मनुष्य के भाव और भंगिमाएँ उभरकर आएँ, यह भी 'नंदन' में काम करते हुए ही सीखा। यही बात लोककथाओं के बारे में भी कही जा सकती है। मौजूदा दौर में एक बिल्कुल अलग अंदाज में उनकी पुनर्रचना कैसे हो, जिससे उसका वातावरण बनाए रखते हुए भी उसमें एक नई चमक और आधुनिक जीवन के मूल्य उभरें, यह कला भी 'नंदन' में रहते हुए ही सीखी।

एक अच्छी बात यह थी कि 'नंदन' में हम नए-पुराने साथी हर कहानी पर खुलकर बात करते थे। इससे खेल-खेल में एक नई बात उभर आती थी और कहानी के लिए एक सही रास्ता मिल जाता था। इस लिहाज से 'नंदन' के वरिष्ठ सहयोगी और चर्चित कथाकार देवेंद्र कुमारजी को मैं धन्यवाद दूँगा, जिन्होंने बहुत बार खुले संवादों में कहानी की बनी-बनाई लीक से अलग हटकर चलने का रास्ता सुझाया। साथ ही उस दौर में लिखी गई मेरी कई कहानियों की भी खुलकर प्रशंसा की। 'नंदन' में लीक से अलग हटकर लिखी गई कहानियों के लिए कोई गुंजाइश न हो, ऐसा कतई नहीं। बल्कि हम लोग तो कोशिश ही यही करते थे। फिर चाहे कहानियों का संपादन कर रहे हों या फिर खुद कहानी लिख रहे हों। मेरी बिल्कुल अलग अंदाज की कहानियों में 'मुनमुनलाल की घड़ी' भारतीजी के समय में ही छपी थी, जो अब भी मुझे बहुत प्रिय है।

एक अच्छी कहानी कैसी हो, यह सीख जाने-अनजाने लोक यायावर देवेंद्र सत्यार्थीजी से भी मिली। सत्यार्थीजी किस्सागोई के गुरु हैं, बल्कि महागुरु। पर उनसे कहानियाँ लिखवा लेना इतना आसान नहीं था। तो

भारतीजी ने मेरा जिम्मा लगाया कि मैं सत्यार्थीजी से कहानियाँ सुनकर आऊँ और उन्हें 'नंदन' के बाल पाठकों के लिए प्रस्तुत करूँ। मेरा यह पसंदीदा काम था, जिससे सत्यार्थीजी के पास जाकर कहानी सुनने और उनकी किस्सागोई की कला से सीखने के बहुत मौके मिले। इससे पहले सत्यार्थी ने मेरे आग्रह पर 'नंदन' के लिए एक बड़ी ही खूबसूरत कहानी लिखी थी, 'सदारंग-अदारंग'। यह इतनी ताजगी से भरी, रोचक और नाटकीय कहानी है कि पढ़कर हम सबको मजा आया। 'नंदन' के बाल पाठकों ने भी इसे बहुत सराहा। बाद में यह सिलसिला चल निकला कि मैं सत्यार्थीजी से कहानी सुनकर आता और उसे ठीक उन्हीं के अंदाज में लिखकर छपने दे देता। सत्यार्थीजी की कहानियाँ सुनते हुए समझ में आता है कि कहानी की उनकी पकड़ सबसे अलग और विलक्षण क्यों है और कैसे एक छोटी सी घटना को अपनी किस्सागोई के दम पर वे एक महान् रचना में बदल लेते हैं। यह गुर उनसे मैंने सीखा और आगे चलकर खुद मैंने जो कहानियाँ लिखीं, उनमें भी एक बड़ा फर्क आया।

सत्यार्थीजी कहा करते थे कि तुम्हारे आसपास चारों ओर कहानियाँ-ही-कहानियाँ बिखरी हुई हैं। यहाँ तक कि एक मामूली पत्थर का टुकड़ा या मिट्टी का ढेला भी खुद में एक अनोखी कहानी छिपाए हुए है। सवाल तो यह है कि तुम उसे देखते कैसे हो और लिखते कैसे हो? सत्यार्थीजी की बातें और मोहक किस्से सुनते हुए उनसे मैंने चीजों को देखना ही नहीं, उनमें आनंद लेना भी सीखा। सच तो यह है कि अपने आसपास की चीजों को जब हम एक नई आँख से देखते हैं तब उनमें छिपी भावना, करुणा और आनंद को परखते हैं तो वे खुद-ब-खुद एक यादगार कहानी में बदल जाती हैं। यह कला मैंने अपने कथागुरु सत्यार्थीजी से सीखी और जाहिर है, वह मेरे बहुत काम आई।

नवें दशक में लिखी गई अपनी एक कहानी 'जमुना दादी' को भी मैं भूल नहीं पाता। जमुना दादी अकेली रहती हैं। उनका घर एक बड़े से अहाते में है, जिसमें एक जामुन का पेड़ है। बच्चे जामुन तोड़ने के लिए पत्थर फेंकते हैं और बुरी तरह शोर मचाते हैं, तो जमुना दादी खीज उठती हैं और उन्हें पकड़ने के लिए दौड़ती हैं। पर एक दिन इसी कोशिश में जमुना दादी को बुरी तरह चोट लगी तो बच्चे बहुत दुखी हुए। उन्होंने रात-दिन उनकी सेवा की। फिर जमुना दादी और बच्चों के बीच ऐसी दोस्ती हो जाती है कि गाँव में हर कोई हैरान है। कहानी के अंत में जमुना दादी नहीं रहीं, पर बच्चे उन्हें प्यार से याद करते हुए जामुन के उस पेड़ के नीचे चबूतरे पर चुपचाप बैठे रहते हैं। यहाँ तक कि लगता है, वह जामुन का पेड़ भी जमुना दादी के चले जाने पर उदास हो गया है।

जयप्रकाश भारतीजी के बाद मृणालजी ने 'नंदन' का संपादन सँभाला, तब उसका रूप कुछ बदला। 'नंदन' के संपादन में थोड़ा लोकतांत्रिक खुलापन आया। सामूहिक दायित्व का भाव भी। क्षमाजी कार्यकारी संपादक थीं और खासी उत्साही भी। हर नए अंक की तैयारी के लिए हम सभी संपादकीय सहयोगी मिलकर बैठते, योजनाएँ बनाते और भरसक उसे पूरा करने में जुट जाते। इस दौर में बहुत लिखा भी। 'खिलौनों का मेला', 'नानी का संदूक', 'उड़न खटोला', 'लो चला पेड़ आकाश में', 'भुलक्कड़ पापा', 'मैं जीत गया पापा', 'मेले में ठिनठिनलाल', 'वह अचूक शिकारी' समेत मेरी बहुत सी पसंदीदा कहानियाँ इसी दौर में लिखी गईं। यहाँ तक कि 'नंदन' से मुक्त होने के भी लंबे अरसे बाद तक 'नंदन' के लिए कहानियाँ लिखने का सिलसिला चलता रहा। इन कहानियों में से खासकर 'शहीद हरनाम गली' तथा 'एक स्कूल मोरों वाला' मुझे आज भी अच्छी लगती हैं।

□

बच्चों के लिए कविताएँ लिखने की शुरुआत आठवें दशक के प्रारंभ में हुई तो कहानियाँ कुछ बाद, यानी आठवें दशक के उत्तरार्द्ध में पहले-पहल लिखी गईं। पर मेरी बाल-कहानियों में शुरू से ही बच्चे केंद्र में थे। हालाँकि आज पीछे मुड़कर देखता हूँ तो लगता है, मेरी प्रारंभिक बाल-कहानियों के साथ थोड़ी सीख भी जुड़ी थी और कहीं-कहीं आदर्शवाद भी हावी लगता है, पर यह कोशिश मेरी शुरू से ही रही कि कहानी के पात्र जड़ या टाइप्ड न हों और उनके चरित्र में मनोवैज्ञानिक विकास कहानी में नजर आए। संवाद जोरदार और जानदार हों। मेरा खयाल है, तभी सही मायने में उसे कहानी कहा जा सकता है और कहानी पढ़ने-लिखने का वास्तविक आनंद भी तभी आता है।

इस लिहाज से अपनी पहली बाल कहानी 'मास्टरजी' का जिक्र करना मुझे अच्छा लगता है। कहानी के नायक प्रशांत के जीवन में आदर्श या रोल मॉडल हैं मास्टर अयोध्यानाथजी, जिन्होंने उसके भीतर कुछ नया करने का सपना जगा दिया है। दीवाली पर दीये जलाने के बाद प्रशांत को मास्टरजी की याद आती है, जिनके पास हर बार दीवाली पर वह आशीर्वाद लेने जाता है। पर उसने देखा कि मास्टरजी के घर अँधेरा पसरा हुआ है। वहाँ जाने पर पता चला कि मास्टरजी घर में अकेले हैं और उनका शरीर बुखार से तप रहा है। इस हालत में प्रशांत दौड़कर डॉक्टर को बुलाकर लाता है, फिर उनके माथे पर गीली पट्टियाँ रखता है, जब तक कि उनका बुखार उतर नहीं जाता। बाद में घर लौटते हुए उसे इस बात का संतोष था कि उसने दीवाली तो अब मनाई है। कहानी में एक प्रसंग यह भी है कि जब मास्टर अयोध्यानाथजी नए-नए आए थे तो प्रशांत ने अपने दूसरे साथियों के साथ मिलकर 'खद्दर मास्टर…खद्दर मास्टर…!' कहकर उनकी खूब खिल्ली उड़ाई थी। पर बाद में अयोध्यानाथ मास्टरजी की बातों से वह बुरी तरह शरमिंदा हुआ और अब वे ही मास्टरजी केवल अध्यापक ही नहीं, उसे अपने गाइड भी लगते हैं, जिनके पास वह दौड़-दौड़कर जाता है।

शुरुआती बाल-कहानियों में मुझे अपनी एक और कहानी पसंद है, 'दोस्ती का हाथ'। यह कहानी अमीर पिता के बेटे राजू की है, जिसे घर में खूब लाड़ मिलता है। खर्चने के लिए बहुत पैसे मिलते हैं। पर इस सबके बीच वह जाने कब इस कदर बिगड़ गया कि उसे क्लास में दूसरों की चीजें चोरी करने में मजा आने लगा। पर एक दिन उसकी चोरी की बात खुल गई और सब बच्चों के सामने उसकी बुरी तरह फजीहत हुई।

फिर एक दिन वही अनुराग, जिसका कलर बॉक्स उसने चुरा लिया था, उसके घर आया। उसने कोई शिकायत न करते हुए उसकी ओर दोस्ती का हाथ बढ़ाया और यों राजू के जीवन की दिशा ही बदल गई।

नवें दशक में लिखी गई अपनी एक कहानी 'जमुना दादी' को भी मैं भूल नहीं पाता। जमुना दादी अकेली रहती हैं। उनका घर एक बड़े से अहाते में है, जिसमें एक जामुन का पेड़ है। बच्चे जामुन तोड़ने के लिए पत्थर फेंकते हैं और बुरी तरह शोर मचाते हैं, तो जमुना दादी खीज उठती हैं और उन्हें पकड़ने के लिए दौड़ती हैं। पर एक दिन इसी कोशिश में जमुना दादी को बुरी तरह चोट लगी तो बच्चे बहुत दुखी हुए। उन्होंने रात-दिन उनकी सेवा की। फिर जमुना दादी और बच्चों के बीच ऐसी दोस्ती हो जाती है कि गाँव में हर कोई हैरान है। कहानी के अंत में जमुना दादी नहीं रहीं, पर बच्चे उन्हें प्यार से याद करते हुए जामुन के उस पेड़ के नीचे चबूतरे पर चुपचाप बैठे रहते हैं। यहाँ तक कि लगता है, वह जामुन का पेड़ भी जमुना दादी के चले जाने पर उदास हो गया है।

आगे चलकर लिखी गई मेरी कहानियों में खिलंदड़ापन कुछ अधिक है। ऐसी ही एक कहानी है, 'आहा, रसगुल्ले'। इस कहानी के केंद्र में एक छोटा बच्चा ननकू है, जिसको पता है कि घर में मम्मी ने रसगुल्ले कहीं छिपाकर रख दिए हैं। मम्मी के जाने के बाद उसका मन पढ़ाई में नहीं लगता। वह रसगुल्ले ढूँढ़ता है। जब कहीं रसगुल्ले नहीं मिले तो ऊपर पड़छत्ती पर चढ़कर रसगुल्लों से भरा काँच का मर्तबान उतारने की कोशिश में, अचानक मर्तबान उसके हाथ से फिसला और नीचे गिरकर टूट गया। रसगुल्ले, शीरा, काँच सबकुछ गड्डमड्ड होकर नीचे फर्श पर बिखर जाता है। परेशान और अंदर से डरा हुआ ननकू मम्मी के आने तक पूरी तरह रसोई साफ कर देता है। फिर भी मन अशांत है। मम्मी के लौटने पर वह डरते-डरते उन्हें सबकुछ बताता है। पर आश्चर्य, मम्मी नाराज होने के बजाय इस बात के लिए ननकू की तारीफ करती हैं कि उसने खुद पूरी सफाई की। और इनाम के रूप में उसे हलवाई की दुकान से दोबारा रसगुल्ले लाकर खिलाती हैं। कहानी सीधे-सीधे वर्णनात्मक ढंग से नहीं लिखी गई और उसमें भाषा का काफी खेल है। इसीलिए यह मुझे बाल-मन की बड़ी स्वाभाविक कहानी लगती है।

मेरी कुछ कहानियों में हास्य भी है, हालाँकि यह हास्य भी बच्चों के इर्द-गिर्द ही अपने प्रभाव को बढ़ाता है। ऐसी बाल कहानियों में 'झटपट सिंह' और 'मिठाईलाल' मुझे पसंद हैं। इन कहानियों में खिलंदड़ापन है तो साथ ही हास्य के मजेदार छींटे भी, जो पढ़ते हुए आनंदित करते हैं। इनमें 'झटपट सिंह' कहानी के नायक निशीथ को हर काम झटपट कर डालने की आदत है। इस चक्कर में उसके काम बिगड़ते हैं और दोस्त 'झटपट सिंह' कहकर उसका खूब मजाक उड़ाते हैं। एक बार तो इसी चक्कर में वह एक पेड़ की ऊँची डाली से गिरा और चोटिल होकर बहुत दिनों तक घर में ही पड़ा रहा। इसी तरह झटपटपने में एक दिन झटपट सिंह की निकर फट गई तो बच्चों ने उसे 'फटफट सिंह' कहकर चिढ़ाना शुरू कर दिया। तब उसे अपनी गलती पता चली। बाद में निशीथ सुधरा, पर बच्चे बहुत दिनों तक उसे 'झटपट सिंह' कहकर चिढ़ाते रहे।

इसी तरह 'मिठाईलाल' इस कदर मिठाइयों का शौकीन है कि उसका कोई दोस्त बातों-बातों में किसी मिठाई का नाम ले, तो वह खुद को रोक ही नहीं पाता। उसी समय सीधा हलवाई की दुकान की तरफ दौड़ पड़ता है, ताकि जल्दी से वह मिठाई खा ले। एक बार उसने घर से सौ रुपए चुराए और मोटेलाल हलवाई की दुकान पर बैठकर पूरे सौ रुपए की मिठाई खा ली। पर जब मम्मी को उसकी चोरी का पता चला तो उसे इतनी शर्मिंदगी हुई कि उसने अपनी इस आदत को छोड़ा। अपने खिलंदड़ेपन वाली कहानियों में 'हवा दीदी का सर्कस' भी मुझे बहुत प्रिय है, जो खेल-खेल में आगे बढ़ती है। कहानी में हवा दीदी बच्चे को तमाम तरह के तमाशे दिखलाती है, जिन्हें पढ़ते हुए हँसी आती है और मन खुश हो जाता है। कुछ इसी तरह की बेहद खुले ढंग से लिखी गई कहानियों में 'नाचनेवाले जूते' और 'दोस्त राक्षस' मुझे आज भी अच्छी लगती हैं। इसी तरह पारंपरिक कहानियों को बिल्कुल नए ढंग से कहना-लिखना भी 'नंदन' से ही शुरू हो गया था। रामचरित मानस के एक प्रसंग को लेकर लिखी गई 'लौट आओ राम' कहानी मैंने 'नंदन' के प्राचीन कथा विशेषांक के लिए ही लिखी थी, जिसमें राम, केवट और निषादराज के चरित्र मन को जैसे करुणा की लहरों में बहाए लिये जाते हैं। 'जानकीपुर की रामलीला' एक छोटे से गाँव की रामलीला पर लिखी गई कहानी है, पर जिंदगी और जिंदादिली से भरपूर। ये कहानियाँ 'नंदन' के लिए ही लिखी गईं और 'नंदन' में छपी भीं। तो यह कैसे कहूँ कि 'नंदन' में नए ढंग की कहानियों के लिए कतई गुंजाइश ही न थी?

इसी तरह मैंने बहुत रस लेकर कुछ नए ढंग की परीकथाएँ भी लिखीं। इनमें 'किस्सा एक मोटी परी का' मुझे काफी पसंद है। इसमें एक मोटी परी है, जिसे परीलोक में सभी चिढ़ाते हैं। परियाँ घूमने के लिए जाती हैं तो उसे साथ नहीं ले जाना चाहतीं, ताकि उनका मजाक न उड़े। मोटी परी उदास है और एक दिन दुखी होकर वह अकेली घूमने निकल पड़ती है। वह धरती पर एक अनोखे स्कूल में पहुँचती है, जहाँ बच्चे मस्ती से खेल-कूद रहे हैं, कोई चित्र बना रहा है तो कोई खिलौने बना रहा है। कुछ बच्चे वेट लिफ्टिंग और व्यायाम कर रहे हैं। मोटी परी भी उनमें शामिल हो जाती है। उसे धरती पर लोगों का इतना प्यार मिलता है कि वह अपने सारे दुख भूल जाती है। वह औरों के साथ मजे में वेट लिफ्टिंग करती है, दौड़-प्रतियोगिता में हिस्सा लेती है, सुंदर चित्र और खिलौने बनाती है, नाचती-कूदती, किलकती है। धरती के लोगों का प्यार मिलने से उसका व्यक्तित्व निखर जाता है। तब परीलोक की परियाँ भी हैरानी से बाबा देवगंधार का यह अनोखा 'खेलो-खाओ स्कूल' देखने धरती पर आती हैं। परीरानी के आग्रह पर बाबा देवगंधार परीलोक में ऐसा ही एक प्यारा स्कूल खोलने जाते हैं। उनके साथ में मोटी परी भी है, जो अब बड़ी चुस्त और छरहरी हो गई है।

इसी दौर में 'चाँदनी चौक में चमचम परी', 'परी आई गुड़ियाघर में' जैसी कई और मजेदार परीकथाएँ लिखी गईं, जिनमें परियाँ धरती की अनोखी सुंदरता तथा यहाँ लोगों के प्यार और सरलता से प्रभावित होकर आखिर यहीं रहने का निर्णय करती हैं। 'धरती की सब्जपरी' और

'जानकीबाई है एक परी का नाम' जैसी कहानियों में पर्यावरण की चेतना है। कुछ कहानियों में परियाँ नहीं हैं, पर फंतासी का जादू कहानी को एक मजेदार विन्यास दे देता है। ऐसी ही एक कहानी है, 'नाचनेवाले जूते'। इसमें पिंटू को दूसरों के जूते चुराने का चस्का है। एक बार वह पंपापुर के एक मशहूर नर्तक धमाल पंपाल के जूते चुरा लेता है। जूते पहनकर सड़क पर आया तो उसे बहुत अच्छा लगता है। खुश होकर वह नाचने लगता है। पर थोड़ी देर बाद ही उसे पता चल जाता है कि नाच वह खुद नहीं रहा, बल्कि कोई और उसे नचा रहा है। आखिर नाचते-नाचते वह एकदम बेदम होकर गिर पड़ता जाता है। तब अपनी भूल उसे पता चलती है और वह आगे कभी किसी के जूते न चुराने की कसम खाता है। कहानी में घटनाएँ बहुत मजेदार ढंग से आगे बढ़ती हैं और खुद मैंने बहुत रस लेकर इसे लिखा था।

मेरी एक और प्रिय फंतासी कहानी है 'खुशी का जन्मदिन'। इसमें एक कामकाजी परिवार की बेटी है—खुशी। खुशी का जन्मदिन है, जबकि उसके मम्मी-पापा दोनों को ही काम पर जाना है। खुशी घर में उदास है। सोच रही है, यह मेरा कैसा जन्मदिन है? कितना उदासी भरा! बस, तभी टेरेस पर रखे उसके खिलौने धम-धम करके नीचे कूदते हैं। बाघ, लूमड़, खरगोश, हिरन, बारहसिंगा सभी। ये सब के सब मिलकर खुशी के साथ नाचते हैं, गाते हैं और फिर बढ़िया सी दावत का इंतजाम करते हैं और खुशी को लगता है कि ऐसा जन्मदिन तो उसका पहले कभी मना ही नहीं! खिलौनों का मेला भी परीकथा है, जिसमें खिलौने बनाने वाले सीधे-सरल रग्घू चाचा का चरित्र खूब उभरा है। खास बात यह है कि जब रग्घू चाचा बीमार पड़ते हैं तो भालू के कहने पर सारे के सारे खिलौने खुद-ब-खुद चलकर मेले में पहुँच जाते हैं। फिर वहाँ खिलौनों की बिक्री से जो पैसे आते हैं, उन्हीं से रग्घू चाचा का इलाज होता है।

यहीं परीकथाओं के बारे में दो-एक बातें कहने का मन है। परीकथाओं के विरोध में आजकल बहुत कुछ कहा जाता है। ज्यादा तर्कशील लोग राय देते हैं कि आज के आधुनिक समय में परीकथाएँ बच्चों के विकास में बाधक हो सकती हैं। इसी तरह यथार्थ के नाम पर फंतासी कथाओं को भी खारिज करने का आग्रह इन दिनों बहुत दिखाई पड़ता है। पर परीकथाएँ और फंतासी कथाएँ बच्चों को स्वाभाविक रूप से प्रिय हैं। उन्हें छीनना तो बच्चों और बचपन के साथ अत्याचार ही है। जब बड़ों की कहानियों में यथार्थ को उभारने के लिए फंतासी की इस कदर दरकार है, तो आप बच्चों की दुनिया से उसे खारिज कर दें, यह तो एक किस्म की क्रूर तानाशाही ही होगी। हाँ, आज परीकथाएँ नए शिल्प और नए अंदाज में लिखी जाएँ, इस पर हमारा जोर रहना चाहिए, जिससे उनमें एक बदले हुए समय की झाँकी भी मौजूद हो। मैंने अपनी परीकथाओं में यही कोशिश की है और बच्चों की उत्साहपूर्ण प्रतिक्रियाओं से पता चलता है कि बाल पाठकों ने भी इनका खूब आनंद लिया है। कम-से-कम मेरे लिए तो यह सार्थकता की अनुभूति ही है।

सच तो यह है कि मुझे सबसे अधिक अपनी बाल कहानियों पर ही बच्चों की उत्साहपूर्ण प्रतिक्रियाएँ मिली हैं। जब दूर-दराज के बच्चे भी फोन पर यह कहकर खुशी प्रकट करते हैं कि 'अंकल, हमारी लाइब्रेरी में आपकी बहुत सारी किताबें हैं और मुझे आपकी कहानियाँ बहुत अच्छी लगती हैं...!' तो सुनकर मन में जो खुशी और उत्साह की लहर पैदा होती है, उसे मैं किसी के साथ भी बाँट नहीं सकता। मुझे मिला दुनिया का यह सबसे बड़ा इनाम है, जिसकी तुलना किसी से नहीं हो सकती। देश-दुनिया के बड़े-से-बड़े पुरस्कार से भी नहीं।

मेरी कुछ कहानियों में बचपन की यादें ही किस्से-कहानी की शक्ल में ढल गई हैं। ऐसी कहानियों में खासकर 'भुलक्कड़ पापा' और 'चश्मे वाले मास्टरजी' कहानियों की मुझे याद आ रही है। इनमें 'भुलक्कड़ पापा' कहानी में पापा बेटी को अपने भुलक्कड़पन का मजेदार किस्सा सुनाते हैं, जिसे सुनकर बेटी खूब खुलकर हँसती है। इस कहानी में एक पात्र पापा हैं, वह मैं ही हूँ और मैंने अपने बचपन का ही भुलक्कड़पने का मजेदार किस्सा सुनाया है। इसी तरह 'चश्मे वाले मास्टरजी' कहानी में जिन मास्टरजी का मजेदार वर्णन है, वे मेरे मेरे मास्टरजी थे, जिन्होंने मुझे कच्ची कक्षा में पढ़ाया था। इतना ही नहीं, कहानी में जिस प्रसंग का वर्णन है, वह ठीक इसी तरह हुआ था और स्कूल में पहले दिन ही यह मजेदार किस्सा हुआ था। उसमें कुक्कू के साथ ही उसकी बहन का जिक्र है। वह मेरी बड़ी बहन हैं, जो मुझसे दो साल बड़ी हैं और उस समय कक्षा दो में पढ़ती थीं। मास्टरजी ने मेरे नाम 'कुक्कू' और 'चंद्रप्रकाश' दोनों का मजाक उड़ाते हुए खूब हँसी-ठिठोली की थी।

अब लगता है कि शायद इस बहाने वे क्लास में नए-नए दाखिल हुए मुझ जैसे संकोची बच्चे को हँसाकर, मेरे संकोच और झेंपूपन को कुछ कम कर रहे थे। आज हम शिक्षा की जिस मौंटेसरी पद्धति की बात करते हैं, वे मास्टरजी शायद उसे जानते न हों। पर वे जाने-अनजाने अपने खिलंदड़े अंदाज में कर वही रहे थे।

□

अपनी बाल कहानियों की पूरी विकास-यात्रा पर नजर डालता हूँ तो गरीब मजदूरों और हमारे समाज में तलछट का जीवन जीते अभावग्रस्त लोगों पर लिखी गई बाल कहानियाँ कुछ अलग ही तमक और बड़ी करुण अंत:धारा के साथ उपस्थित नजर आती हैं। 'मैं जीत गया पापा', 'बुद्धू का रिक्शा कमाल', 'बब्बूजी की पूरी-भाजी', 'चमके थाल-कटोरे', 'रद्दी बेचनेवाला लड़का', 'फूल तोड़ने वाला लड़का', 'मिल्दू की हँसी', 'तुम भी पढ़ोगे जस्सू', 'सरस्वती बाबू', 'मेघना गाँव का चित्रकार', 'दीवाली के नन्हे मेहमान' और 'चमके थाल-कटोरे' ऐसी ही कहानियाँ हैं। 'मैं जीत गया पापा' में एक चपरासी का बेटा फुटबॉल का गजब का खिलाड़ी है, पर वह चपरासी का बेटा है, इसलिए उसके रास्ते में जो तकलीफें आती हैं, उन्हें लिखते हुए खुद मैं रोया हूँ। मगर अंत में वह जीतता है, हर बाधा हर मुश्किल के बावजूद जीतता है, और जब बच्चे उसे कंधे पर उठाकर जुलूस निकाल रहे हैं, तो एक तरफ खड़े होकर देख रहे उसके संकोची पिता की आँखों में खुशी की जो झिलमिलाहट है, दुनिया की

कौन सी भाषा है, जो उसे बयान कर सके?

'बुद्धू का रिक्शा कमाल' का बुद्धू और 'बब्बूजी की पूरी-भाजी' का बब्बू भी दिल की गहरी संवेदना से जनमे हैं और मेरे सर्वाधिक प्रिय पात्र हैं। 'रद्दी बेचनेवाला लड़का', 'फूल तोड़नेवाला लड़का', 'मिल्दू की हँसी', 'तुम भी पढ़ोगे जस्सू', 'सरस्वती बाबू', 'मेघना गाँव का कलाकार', 'दीवाली के नन्हे मेहमान' और 'चमके थाल-कटोरे' भी इसी तरह की कहानियाँ हैं, जिन्हें पढ़ते हुए गरबीली गरीबी के दर्द के साथ-साथ, उसमें छिपी अपार प्रतिभा और संभावनाओं के अक्स भी आँखों के आगे झिलमिल करने लगते हैं। इसी तरह विकलांग लोगों पर लिखी गई 'अंधा गायक', 'मैं चित्र कैसे बनाऊँगा पापा' और 'वे झिलमिल दीये' मेरी बालकथा-यात्रा में एक अलग ही दर्द, कचोट, लेकिन साथ ही कुछ कर गुजरने का गहरा सा आत्मविश्वास लिये कहानियाँ हैं।

सच तो यह है कि मुझे सबसे अधिक अपनी बाल कहानियों पर ही बच्चों की उत्साहपूर्ण प्रतिक्रियाएँ मिली हैं। जब दूर-दराज के बच्चे भी फोन पर यह कहकर खुशी प्रकट करते हैं कि 'अंकल, हमारी लाइब्रेरी में आपकी बहुत सारी किताबें हैं और मुझे आपकी कहानियाँ बहुत अच्छी लगती है···!' तो सुनकर मन में जो खुशी और उत्साह की लहर पैदा होती है, उसे मैं किसी के साथ भी बाँट नहीं सकता। मुझे मिला दुनिया का यह सबसे बड़ा इनाम है, जिसकी तुलना किसी से नहीं हो सकती। देश-दुनिया के बड़े-से-बड़े पुरस्कार से भी नहीं।

अपनी इस लंबी रचना-यात्रा के बाद मैं पूरे आत्मविश्वास के साथ कह सकता हूँ कि आज भी कहानियाँ बच्चों को सबसे अधिक रिझाती हैं और उन्हें अपने साथ-साथ एक अलग दुनिया की सैर कराने ले जाती हैं। वहाँ बहुत कुछ अलग होकर भी मन और भावों की दुनिया तो एक ही होती है। इसीलिए हर कहानी बाल पाठकों को अपने साथ एक अलग यात्रा पर ले जाती है, जिसका अलग रस, अलग आनंद और अलग रोमांच होता है।

एक बात और। बाल कहानियाँ सिर्फ बच्चों के लिए ही नहीं हैं। बड़े इन कहानियों को पढ़ते हैं, तो उन्हें अहसास होता है, जैसे उनका बचपन जाग गया है। इनके जरिए वे फिर से एक नए और निश्छल आनंद के साथ अपने बचपन को जीते हैं। और बाल पाठक तो इन कहानियों को पढ़ते हुए किस्म-किस्म के चरित्रों के साथ ही जीवन के उन अद्भुत रंगों से परचते ही हैं, जिससे यह दुनिया कहीं ज्यादा प्यारी और खूबसूरत लगने लगती है। मजे की बात यह है कि बाल कहानियों का यह जादू समय के साथ निरंतर बढ़ा ही है, और यही उनकी ताकत भी है।

५४५, सेक्टर-२९,
फरीदाबाद-१२१००८ (हरियाणा)
दूरभाष : ०९८१०६०२३२७

जूठन

लघुकथा

● **नीरज कुमार नीर**

माँझी बाबू अन्न बरबाद करने के सख्त खिलाफ थे। खाने की थाली में से एक-एक अन्न का दाना उठाकर खाते। कहते कि उन्होंने बचपन में बहुत गरीबी देखी है। घर में दो वक्त का खाना मुहाल था। गाँव में जब कभी बड़े आदमी के यहाँ भोज होता तो पत्तल पर बचा जूठन तक उठाकर खाना पड़ता था। किसी तरह पढ़-लिख गए तो सरकारी कार्यालय में नौकरी लग गई। बचपन की यादों की कटुता उनके मन में बसी थी, जो गाहे-बेगाहे जाहिर होती रहती थी। वह अकसर अपने सहकर्मियों को पुरानी बातें बताते एवं उसको लेकर अपना रोषपूर्ण भाव प्रकट करते।

एक दिन कार्यालय में एक मीटिंग के दौरान खाना बाहर से मँगाया गया। सारे अधिकारी सभास्थल पर बैठकर खा रहे थे। कार्यालय का चपरासी मंगतू सबको खाना खिला रहा था। मंगतू माँझी बाबू को बहुत प्रिय था, क्योंकि एक तो वह उन्हीं के इलाके का था और उन्हीं के समाज से भी था। जैसा ऐसे कार्यालय के कार्यक्रमों में होता है, खाना जरूरत से अधिक मँगा लिया गया था।

खाते-खाते माँझी बाबू को लगा कि जितना खाना प्लेट में परोस दिया गया है, उतना खाना वह खा नहीं पाएँगे। उन्होंने कुछ रोटियाँ और सब्जी अलग कर दी।

जब मंगतू प्लेटें साफ करने आया तो माँझी बाबू ने उसे कहा कि यह रोटियाँ और सब्जी देखो बच गई हैं, इसे खा लेना और हाँ, ध्यान रहे कि फेंकना नहीं।

इतना कहकर माँझी बाबू ने गर्व से अपने सहकर्मियों की ओर देखा और फिर मुसकराते हुए बोलने लगे, ''गरीब आदमी है, पेट भर जाएगा।'' उनके चेहरे पर एक आत्मतुष्टि एवं स्वाभिमान का मिश्रित भाव साफ-साफ देखा जा सकता था। माँझी बाबू खुश थे कि उनकी जूठन से एक आदमी का पेट भरेगा। कार्यक्रम के उपरांत जब सभी लोग सभा-स्थल से निकलने लगे तो माँझी बाबू ने देखा कि एक कुत्ता एल्युमिनियम फॉइल में लिपटा हुआ कुछ खींच रहा है। देखते-ही-देखते उसने उसे फाड़ दिया। उन्होंने देखा कि उस एल्युमिनियम फॉइल से वही रोटियाँ निकलकर बाहर आ गईं, जो उन्होंने मंगतू को खाने के लिए दी थीं।

कुत्ता नान और मिस्सी रोटी का भोग लगा रहा था। खिड़की से मंगतू की आवाज आ रही थी, किसी से कह रहा था, 'गरीब हैं तो जूठन खिलाना चाहते हैं, इतने सहृदय हैं तो खाने के पूर्व ही रोटियाँ निकालकर रख देते।' माँझी बाबू तेज कदमों से अपने कमरे की ओर चले गए।

राँची
दूरभाष : ०८७९७७७७५९८

बाल-कहानी

मृत्युभोज

● हरदर्शन सहगल

मदन और सुबोध पक्के दोस्त थे। एक दिन मदन को पता चला कि सुबोध को पागलपन का दौरा पड़ा है। उसे अस्पताल ले जाया गया है। डॉक्टरों ने उसे इलेक्ट्रिक शॉक (बिजली के झटके) भी लगाए हैं।

मदन अस्पताल नहीं गया। दूसरे सारे छात्र अस्पताल जाकर सुबोध को देख आए थे। वे सब मदन पर हँस रहे थे। एक-दूसरे से कहते, 'देखो तो, मुसीबत की घड़ी में मदन कैसे पीछे हट गया। वैसे हर वक्त सुबोध की दोस्ती का दम भरता था। कहा भी गया है, सब सुख के साथी होते हैं।'

मदन यह सब सुनता रहा, तब भी वह अस्पताल नहीं गया।

सुबोध की माँ की हालत पहले से ही खराब चल रही थी। वह रह-रहकर बेहोश हो जाती थीं। इसका कारण था, सुबोध के पिता की मृत्यु होना। सुबोध के पापा निरंजन दासजी एक बड़े कारखाने में लोहे की चादरों को काटने का काम करते थे। अचानक एक दिन छत से एक लोहे का गार्डर उनके सिर पर आ गिरा। इससे तुरंत उनका देहांत हो गया।

चारों ओर यही चर्चा थी कि देखो, कैसे एक सुखी परिवार, देखते-ही-देखते बरबाद हो गया।

परिवार में कुल तीन ही तो प्राणी थे—सुबोध, सुबोध के पिता निरंजन दासजी और सुबोध की माँ गंगा।

निरंजन दासजी बहुत भोले और सरल स्वभाव के ईमानदार कर्मचारी थे। माँ भगवान् की भगतिन थी। सुबह-शाम मंदिर जाती। पूजा-पाठ करती। सुबोध मन लगाकर पढ़ता, परंतु उसकी एक खराब आदत थी कि वह अंट-शंट चीजों पर पैसा खर्च कर देता।

इकलौता बेटा होने के कारण सुबोध को माँ-बाप का भरपूर लाड़-प्यार मिलता। यहाँ तक कि घर का खर्चा चलाने के लिए लगभग सारा पैसा उसी के पास रहता।

निरंजन दासजी उसे समझाते रहते। पैसे को बचाकर रखना चाहिए। जरूरत के वक्त पैसा ही काम आता है।

सुबोध जानता था कि उसके पापा साधारण नौकरी करते हैं। तो भी सोचता कि इतना पैसा हम तीन सदस्यों के लिए बहुत है। पापा से कहता कि पैसा होता किसलिए है। हमें ठाट-बाट से रहना चाहिए।

वह आए दिन नए फैशन के कपड़े सिलवाता। अमीर सहपाठियों की तरह शॉपिंग करता। महँगे शो-पीस व खिलौने लाता। नए डिजाइन के पंखे, कूलर भी खरीद लेता, जबकि ये सारी चीजें पहले से घर में पड़ी होतीं।

अब एकाएक इस सुखी परिवार पर मुसीबतों का पहाड़ टूट पड़ा था। घर में थोड़ा-बहुत खाने का सामान था। नकद केवल एक सौ रुपया। माँ-बेटे को आगे की चिंता सताने लगी।

जाने-माने बाल साहित्यकार। 'डगर डगर पर मगर' (आत्मकथा); बच्चों की सौ बाल कहानियों का संकलन तथा कई कहानियों का अन्य भाषाओं में अनुवाद; उपन्यास 'टूटी हुई जमीन' का गुजराती में अनुवाद प्रकाशित।

माँ का रो-रोकर बुरा हाल था। सुबोध के कुछ साथी आए। दिलासा दी, फिर वह फैक्टरी मालिक के पास चले गए।

फैक्टरी के मालिक ने सुबोध को दाह-संस्कार के लिए चार सौ रुपए दिए। मुआवजा तथा दूसरे पैसे बाद में देने का वायदा किया था।

तीन सौ रुपए दाह-संस्कार में खर्च हो गए थे। रह गए मात्र दो सौ रुपए। एक सौ पहले के। एक सौ अब वाले। यह भला कितने रोज चलते।

उस वक्त मदन सुबोध के पास आया था। उसे दो सौ रुपए देने लगा। सुबोध ने मना कर दिया। बोला, 'जब जरूरत होगी, तुमसे माँग लूँगा।'

सुबोध सोचता कि अब हमें सँभल-सँभलकर कम-से-कम खर्चा करने की आदत डालनी होगी। उसे दिन-रात पैसों की चिंता सताने लगी, परंतु माँ सुबोध को मृत्युभोज का प्रबंध करने को कह रही थी।

सुबोध ने कहा, 'माँ, इसकी क्या जरूरत है।'

माँ बोली, 'यह हमारे विधान में लिखा है।'

सुबोध ने कहा, 'माँ, जब हमारे पास पैसा नहीं है तो क्या करें।'

माँ बोली, 'लोग क्या कहेंगे। सुबोध अपने पिता की इज्जत नहीं करता था।'

सुबोध ने कहा, 'सब ठीक है। मैं अपने घर की सजावट का सारा सामान बेच दूँगा।'

सुबोध ने आस-पास के लोगों से पूछा। साथ ही बाजार जाकर कई दुकानदारों के चक्कर लगा आया, लेकिन उसका आठ हजार का सामान चार सौ में भी बिकने में नहीं आ रहा था।

इधर माँ की जिद थी कि मृत्युभोज तो देना ही देना है। पंडितों को दक्षिणा देनी भी जरूरी है सुबोध, तभी तुम्हारे पिता की आत्मा को शांति मिलेगी, ऐसा लिखा है।

सुबोध परेशान हो उठा। धीरे से बोला, 'मैंने ऐसा नहीं पढ़ा।'

माँ रोते हुए बोली, 'ऐसी चीजें तू कहाँ से पढ़ेगा। जिन्हें हमारे पूर्वज करते आए हैं। उन्हें लिखा हुआ ही माना जाता है। यह ले मेरे गहने, इन्हें बेच दे।'

सुबोध ने कहा, 'माँ, पहले फिजूल खर्च करके मैंने गलती की थी। अब आप गलती कर रही हैं।'

एक करारा थप्पड़ सुबोध के गाल पर पड़ा। इससे पहले माँ ने सुबोध को कभी नहीं मारा था। सुबोध समझ गया। माँ, पापा के कारण दु:खी हैं। तभी ठीक से सोच नहीं पातीं। इन्हें और दु:खी करना ठीक नहीं।

सुबोध को स्वयं रोना आ रहा था। माँ से मार खाकर भी उसने आँसू नहीं बहाए। बहुत देर तक वहीं बैठा-बैठा मन-ही-मन घुटता रहा। सोचता रहा। करे तो क्या करे?

थोड़ी देर बाद बोला, 'माँ, ये गहने पिताजी की निशानी हैं। इन्हें नहीं बेचो। मैं कोई दूसरा तरीका देखता हूँ।'

सुबोध फैक्टरी मालिक के पास गया। उनके सामने अपनी समस्या रखी। कहा, 'आप हमें तीन हजार दे दें। बाकी हिसाब बाद में करवा लें।'

मालिक ने कहा, 'हिसाब पहले, पैसा बाद में। तुम्हें प्रतीक्षा करनी होगी।'

सुबोध ने कहा, 'आप मुझे दिहाड़ी पर रख लें। मुझे ही घर का खर्चा चलाना होगा।'

मालिक बोला, 'हम तुम्हें नहीं रख सकते। बाल-मजदूरी अपराध है। पंद्रह दिन में तुम्हारी रकम भिजवा देंगे। तुम अपनी पढ़ाई करो।'

परंतु सुबोध का मन पढ़ाई में नहीं लगता। वह माँ को खुश रखना चाहता था। एक दिन उसने मदन से तीन हजार रुपए माँगे। बताया कि मृत्युभोज देना है।

मदन ने कहा, 'मृत्युभोज एक कुप्रथा है। इसे बंद होना चाहिए।'

सुबोध ने कहा, 'हाँ, मैंने भी देखा है। लोग मृत्युभोज मजे ले-लेकर खाते हैं, हँसते हैं। इससे मेरे मन को बहुत कष्ट होता है। परंतु क्या करूँ, माँ को भी दु:खी नहीं देख सकता। पंद्रह दिन में फैक्टरी से पैसा मिल जाएगा। तब तुम्हें लौटा दूँगा।'

मदन के पास इतनी बड़ी रकम नहीं थी। उसने बड़ी मुश्किल से अपने पापा को राजी किया। पापा ने सिर्फ पंद्रह दिन के लिए तीन हजार दे दिए।

सुबोध ने तीन हजार रुपए लाकर माँ को दे दिए। माँ ने सारे रुपए पंडितजी को दे दिए।

पंडितजी ने कहा, 'ठीक है, सारी व्यवस्था मैं कर दूँगा। पर जरा रुकना पड़ेगा। मृत्युभोज के लिए अभी शुभ मुर्हूत नहीं है।'

पंद्रह रोज बीत गए। बीस रोज बीत गए, लेकिन फैक्टरी मालिक ने रुपए नहीं दिए। इधर पंडितजी न जाने कहाँ चले गए थे।

सुबोध के सामने, आगे आनेवाले दिनों को लेकर भयंकर चिंता खड़ी थी। अगले महीने की फीस कहाँ से देगा। सबसे बड़ी बात, वह अपने वचन के अनुसार मदन के रुपए नहीं लौटा पा रहा था। इन्हीं विचारों का सामना करते-करते उसकी भूख जाती रही। नींद आनी बिल्कुल बंद हो गई। बार-बार सोचता, वह मदन को कैसे मुँह दिखाएगा।

इन्हीं विचारों के दबाव में सुबोध को पागलपन का दौरा पड़ा था। सभी संगी-साथी सुबोध को देखने अस्पताल जाते, किंतु मदन नहीं जाता।

□

एक दिन मदन के पापा दफ्तर से लौटे तो मदन को गुमसुम व परेशान बैठे देखा। पापा ने पूछा, ''क्या रुपए वापस न मिलने के कारण तुम परेशान हो।''

मदन ने धीरे कहा, ''यह एक कारण हो सकता है। पर यह असली कारण नहीं।''

''अब असली कारण बताओ।''

''मेरे प्यारे दोस्त सुबोध को पागलपन के दौरे पड़ने लगे हैं। वह अस्पताल में भरती है।'' कहते-कहते मदन के आँसू गिरने लगे।

पापा ने मदन के सिर पर हाथ फेरा और कहा, ''क्या तुम उससे मिले।''

मदन ने गरदन हिला दी, ''नहीं।''

''क्यों?''

''मुझे देखते ही कहीं उसे रुपयों की याद न आ जाए।'' यह बात चल ही रही थी कि चार-पाँच मित्र आ पहुँचे।

नीरज ने पूछा, ''मदन, क्या तुमने सुबोध को तीन हजार रुपए दिए थे।''

''हाँ।'' मदन ने धीरे से गरदन हिला दी।

''तो यह पकड़ो अपने रुपए, नीलकंठ ने रुपए दे दिए। जब-जब सुबोध को थोड़ा होश आता है तो दो बातें बोलता है। मेरे दोस्त के रुपए दो। पर दोस्त का नाम नहीं बता पाता। फिर कहता है, मृत्युभोज।''

कमल ने बताया, ''सुबोध की माँ ने निर्णय ले लिया है कि मृत्युभोज नहीं करना। इसी ने तो मेरे बच्चे की यह हालत कर दी है। वैसे हमने गाँव जाकर पंडित से रुपए वसूल कर लिये हैं।''

पापा बोले, ''ये रुपए अभी तुम लोग अपने पास रखो, काम आएँगे।''

नीलकंठ ने कहा, ''नहीं। हम सुबोध की तसल्ली के लिए झूठ-मूठ कह देते हैं कि तुम्हारे दोस्त को रुपए दे दिए। हम और झूठ नहीं बोलेंगे।''

नीरज ने बताया, ''हम फैक्टरी मालिक के चक्कर भी काट रहे हैं। टालता है। खैर, अभी दो हजार दे दिए हैं।''

पापा ने कहा, ''हम लेबर इंस्पैक्टर को साथ लेकर फैक्टरी जाएँगे। पर पहले तुम लोगों के साथ चलकर सुबोध से मिलेंगे। कहाँ तो लोग उधार न चुकाने के लिए पागल बन जाते हैं और कहाँ यह सुबोध··· ।''

सब लोग अस्पताल पहुँचे। मदन को देखकर सुबोध के चेहरे पर मुसकान लौट आई। धीरे से बोला, ''मदन, तुम आ गए। अब मैं अच्छा हो जाऊँगा।''

दोनों मित्रों को गले मिलते देख सबकी आँखें नम हो आईं।

५ ई ९ 'संवाद', डुप्लेक्स कॉलोनी, बीकानेर-३३४००३
दूरभाष : ०१५१-२५२९०६७

द्वारिकाप्रसाद माहेश्वरी की मूल्यपरक बाल-कविता

● ऊषा यादव

आज भूमंडलीकरण के युग की सबसे बड़ी त्रासदी यह है कि हम अंधे होकर भौतिक सुखों के पीछे दौड़ रहे हैं। अपनी पाँच हजार साल पुरानी सांस्कृतिक विरासत को विस्मृत कर, शाश्वत जीवन-मूल्यों को दरकिनार कर 'बाजार' की गिरफ्त में इस कदर जकड़ गए हैं कि 'क्रेता' और 'विक्रेता' के दो शब्दों में हमारी सारी संवेदनाएँ सिमटकर रह गई हैं। अपनत्व की ऊष्मा का तिरोभाव हो चुका है। संयुक्त परिवार की टूटन और एकल परिवार के अति व्यस्त जीवन-क्रम के चलते माता-पिता के पास बच्चों के लिए समय नहीं है। ऐसे में बच्चों का मार्गदर्शन करने के लिए साहित्य की ओर सबकी निगाह उठनी स्वाभाविक है। हर्ष की बात है कि बाल-साहित्य अपनी इस महत्त्वपूर्ण भूमिका के निर्वहन में कभी पीछे नहीं रहा। पुरानी पीढ़ी के चुनिंदा बाल-साहित्यकारों की पंक्ति में ऐसा ही एक सशक्त नाम द्वारिकाप्रसाद माहेश्वरी का है।

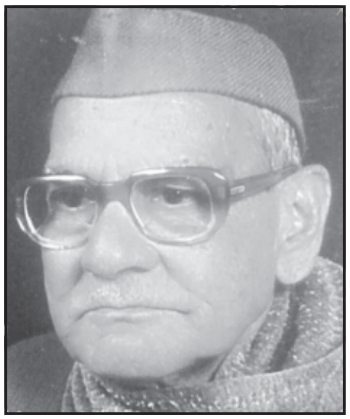

स्व. द्वारिकाप्रसाद माहेश्वरी

माहेश्वरीजी की प्रातिभ लेखनी ने बच्चों व बड़ों के लिए समान कौशल से साहित्य-सर्जना की। पर उनकी अक्षय कीर्ति का आधार वे बाल कविताएँ हैं, जिन्हें अपनी पाठ्य-पुस्तकों में साल-दर-साल पढ़कर और गाकर-गुनगुनाकर कई पीढ़ियाँ वयस्क हुई हैं। 'यदि होता किन्नर नरेश में', 'मुन्नी-मुन्नी ओढ़े चुन्नी', 'चल मेरी ढोलकी', 'लाठी लेकर भालू आया', 'झूम झूमता हाथी आया' तथा 'हम सब सुमन एक उपवन के' जैसी कविताओं के रस और माधुर्य को क्या कभी भूला जा सकता है? यही नहीं, भारतीय संस्कृति के प्रति अनन्य अनुराग, राष्ट्रीयता एवं मानववाद के उदात्त स्वर, आशावादिता, शाश्वत जीवन-मूल्यों में अटूट आस्था और देश के नवनिर्माण की गहरी ललक ने माहेश्वरीजी की मूल्यपरक बाल कविताओं को भी हिंदी बाल-साहित्य की मूल्यवान निधि बना दिया है।

आगरा के निकट रोहता ग्राम में १ दिसंबर, १९१६ को जनमे द्वारिकाप्रसाद माहेश्वरी का निधन २९ अगस्त, १९९८ को लगभग बयासी वर्ष की अवस्था में हो गया। बाल-जीवन, बाल-मन, देशप्रेम, पशु-पक्षी जगत्, ऋतु वर्णन, पर्व-त्योहार, प्रकृति और जीवन-मूल्यों को लेकर लिखी गई बाल-कविताओं की निस्सीम पूँजी उनके खाते में है। यदि केवल बच्चों के चरित्र-गठन की ही बात करें तो बाल-काव्य के इस अथाह परिवार में विद्यमान रत्न-राजि को देखकर हम चकित-विस्मित रह जाते हैं। बच्चों के लिए सरल-सुबोध भाषा में एक उदात्त चिंतन को व्यक्त करना कोई छोटी बात नहीं है। इसके लिए जिस अनूठे कवि-हृदय और विलक्षण रचना-कौशल की अपेक्षा थी, वे दोनों चीजें माहेश्वरीजी के पास थीं। वे जानते थे कि बच्चों को विनयी बनाने के लिए अलौकिक सत्ता के प्रति श्रद्धावनत करना जरूरी है। इसीलिए ईश वंदना के इन स्वरों में डूबकर कह सके हैं—

जिसने सूरज-चाँद बनाया
जिसने धरती-गगन बनाया
जिसने तारों को चमकाया
जिसने फूलों को महकाया
जिसने सर-सर हवा चलाई
जिसने जल की नदी बहाई
उस प्रभु को हम सीस नवाते
उस प्रभु को हम सीस झुकाते।

एक अन्य बाल कविता 'हमें दो यह वरदान' में कवि के चिंतन का धरातल जब व्यष्टि से समष्टि की ओर बढ़ता है तो एक आदर्श समाज के निर्माण का स्वप्न साकार होने लगता है—

ईश हमें दो यह वरदान/पढ़ें-लिखें हम बनें महान्।
सबसे हिल-मिल रहना सीखें/दु:ख-दर्दों को सहना सीखें
कष्ट पड़ें चाहे जितने ही/पर अधरों पर हो मुसकान।
सच्चे पथ पर सदा बढ़ें हम/सच्चे प्रण पर सदा अड़ें हम
झुके सीस अपना न कभी यह/चाहे टूट गिरें चट्टान।

शक्ति, शील और सौंदर्य, मनुष्य के व्यक्तित्व को तेजोपम बनानेवाले गुण हैं। देश की भावी पीढ़ी को इन गुणों से ओत-प्रोत करना कवि का अभीष्ट है। पुष्प में सुवास की भाँति वह इन गुणों को बालकों में भरना चाहता है। विद्या के साथ विनय के संयुक्त होने की बात कहकर कवि ने सद्विचार की एक अनमोल सौगात बच्चों को सौंपी है—

शक्ति दो कर्तव्य के पथ/पर अडिग होकर चलूँ मैं
स्नेह दो तूफान में भी/दीप-सा अविचल जलूँ मैं।
दो मुझे सौंदर्य सुमनों/का सुरभि-सिंचित मनोरम
दो विनय के साथ विद्या/का मुझे वरदान अनुपम।
इस तरह व्यक्तित्व मेरा/हो सृजित स्नेहिल कणों से
शील दो औ शक्ति दो/सौंदर्य के दैवी गुणों से।

वर्ष १९४९ में माहेश्वरीजी का पहला बाल-कविता-संग्रह 'कातो और गाओ' प्रकाशित हुआ। इसके बाद वर्ष १९९० तक वे निरंतर सृजनरत रहे और दो दर्जन से अधिक बाल कविता-संग्रह बच्चों को सौंपे। उनके

कोष में शिशुगीत, बाल कविताएँ, किशोर कविताएँ और पद्य कथाएँ मौजूद हैं। आज से चालीस-पचास वर्ष पूर्व लिखी ये बाल कविताएँ आज अपने सृजन-काल से भी ज्यादा प्रासंगिक इसलिए हैं, क्योंकि बच्चों को अच्छे संस्कार देने की जरूरत शिद्दत से महसूस की जा रही है। कवि ने प्रकृति और पशु-पक्षी जगत् के प्रति शैशव का नैसर्गिक लगाव जानने के कारण बच्चों के जाने-पहचाने विषयों का ही वस्तु-विधान किया है। उन्हें पता है कि कुत्ता-बिल्ली-चूहा-हाथी-गाय जैसे पशुओं और चिड़िया-कौआ-कबूतर-कोयल जैसे पक्षियों से परिचय प्राप्त करने में बच्चों को देर नहीं लगती। उन्हें यह भी पता है कि आकाश में नित्य उदय-अस्त होनेवाले सूरज, चाँद, सितारों को भी बच्चा जल्दी ही पहचान जाता है। नदी का बहता हुआ जल, बगीचे के हँसते-मुसकराते फूल यदि बच्चे को आकृष्ट करते हैं तो बादलों की गरज और बिजली की कड़क सुनकर वह सहमकर माँ के वक्ष से चिपक जाता है। बालक और प्रकृति के इस सहज तादात्म्य को जानने के कारण ही कवि माहेश्वरीजी ने उन्हें बिंब-प्रतिबिंब भाव से प्रस्तुत किया है। आज किसी बच्चे से पूछिए कि तुम्हें क्या चाहिए तो वह तत्काल महँगे मोबाइल, कीमती लैपटॉप या बेशकीमती बाइक-कार की माँग कर बैठेगा। पर 'मेरी अभिलाषा है' कविता में माहेश्वरीजी ने एक बालक की कितनी मधुर संगृहणीय चाहत जतलाई है, देखिए—

सूरज-सा चमकूँ मैं/चंदा-सा चमकूँ मैं
झलमल-झलमल उज्ज्वल/तारों-सा दमकूँ मैं
मेरी अभिलाषा है।

बच्चे की अभिलाषा सिर्फ यहीं तक सीमित नहीं रहती। वह फूलों सा महकना, विहग सा चहकना और कोयल सा कुहकना चाहता है। वह आकाश जैसी निर्मलता, चाँदी जैसी शीतलता, धरती जैसी सहिष्णुता और पर्वत जैसी अविचलता भी चाहता है। उसकी अभिलाषा में परोपकार का यह गहरा रंग कितना चिंताकर्षक है, देखिए—

मेघों-सा मिट जाऊँ/सागर-सा लहराऊँ
सेवा के पथ पर मैं/सुमनों-सा बिछ जाऊँ
मेरी अभिलाषा है।

यह त्याग और बलिदान का भाव यदि शैशव से ही हमारे देश के बच्चों में जाग उठेगा तो राष्ट्र-रक्षा हेतु वे प्राणपण से क्यों न सन्नद्ध होंगे? वृक्ष, विहग, फूल, आकाश, सूर्य, चंद्रमा, मेघ, सरिता, सागर जैसे प्राकृतिक उपादान बच्चों में उदात्त भावों का बीज-वपन करने में कितने समर्थ हैं, इसे माहेश्वरीजी का कवि-हृदय अच्छी तरह जानता है। उनकी कविता में वृक्ष स्वयं बच्चों को बताता है कि जग के लिए जीवन धारण करने में ही सच्चा सुख है—

इसलिए फलते न हम अपने लिए
हैं न कुछ रखते कभी अपने लिए
जो हुई फल-फूल की पूँजी, उसे
दे दिया, हो मुक्त जगती के लिए।

पंख फैलाकर उन्मुक्त गगन में उड़ते हुए पक्षियों के माध्यम से कवि ने बच्चों को आजादी का मूल्य समझाया है—

वरिष्ठ कथाकार तथा जानी-मानी बाल साहित्यकार। उषा जी की बाल कहानियाँ और उपन्यास पाठकों को अपने साथ बहा ले जाते हैं। 'हीरे का मोल' तथा 'सोना की आँखें' बाल-उपन्यास बहुत चर्चित हुए। उन्होंने बच्चों के लिए नाटक और कथात्मक शैली में जीवनियाँ भी लिखी हैं। उ.प्र. हिंदी संस्थान के 'बाल साहित्य भारती' पुरस्कार से सम्मानित।

जो जिया होकर स्वतंत्र? वही जिया
गीत उसके हैं गगन में गूँजते
शेष का जीना-न-जीना एक-सा
व्यर्थ जीवन भार ढोते घूमते।

प्रभात वेला में ओस से नहाई हुई घास कितनी सुंदर लगती है, हम सब जानते हैं। बड़ी-बड़ी आँधियाँ भी उसका कुछ नहीं बिगाड़ पातीं। इन आँधियों से विशालकाय वृक्ष भले ही धराशायी हो जाएँ, नन्हीं-सी घास अपनी जगह पर जमी खड़ी रहती है। इस जादू के मूल में है घास की विनम्रता और विनयशीलता, जिसे वह चुपके से बच्चों के कान में बता देती है—

जो विनम्र, न शक्ति में भूला कभी
पंथ औरों का किया जिसने सरल
वक्ष से उसको लगाती माँ धरा
वारता मोती गगन उज्ज्वल-सजल।

फूलों का संदेश भी कुछ कम नहीं है। काँटों में मुसकराते रहना यदि फूलों से बच्चों ने सीख लिया तो वे सुख-दुःख को समभाव से ग्रहण करने लगेंगे और उनकी जीवन-यात्रा निश्चय ही सरल हो जाएगी—

ग्रीष्म-वर्षा-शीत की चिंता नहीं
हम निरंतर कंटकों में ही खिले
जो मिला, जैसे मिला, जब-जब मिला
हम हमेशा मुसकराकर ही मिले।

अपने दैनंदिन जीवन में हम देखते हैं कि जीवन-संघर्ष की जटिलता से उपजे तनाव के चलते आम आदमी मुसकराना भूल गया है। पर यदि शैशव से ही हर स्थिति में हँसने-मुसकराने का स्वभाव बन जाए तो जीवन के दाह-ताप से विचलित होने की नौबत कभी नहीं आएगी। खुद कष्टित होकर भी दूसरों को उल्लसित करना कोई छोटी बात नहीं है। नन्हा-सा फूल यदि अपने जैसे ही नन्हे बच्चे को यह शिक्षा दे रहा हो तो उसकी मूल्यवत्ता में संदेह कैसा?

बात यदि धरती, आकाश, सूर्य और चंद्रमा की करें तो पता चलेगा कि बच्चों का मार्गदर्शन करने में ये प्राकृतिक उपादान भी पीछे नहीं हैं। धरती अपनी धुरी पर रात-दिन घूमती है, कभी थकती नहीं। उसकी देह पर दावाग्नि का प्रकोप टूटे, प्रलय आए, हिमपात हो या वज्रपात हो, धैर्य की प्रतिमूर्ति बनी सबकुछ सहती रहती है। यदि कभी रंचमात्र भी हिल जाए तो उस भूकंप से न जाने कितना विनाश हो जाता है। इसलिए वह

बच्चों को सिखाती है—

भार जिन पर है समूचे विश्व का
शांत औ संतुलित रहना है उन्हें।

इसी तरह असीम-अनंत नीलाकाश भी अपने भीतर एक गुरु-गंभीर संदेश छिपाए हुए है। उसके वक्ष पर तेजोद्दीप्त सूरज, हिमशीतल रश्मियों से मुक्त चाँद और उज्ज्वल प्रकाश से भरे असंख्य तारागण झिलमिलाते रहते हैं। ये सूरज, चाँद, सितारे इतने उदार हैं कि उनका प्रकाश धरती पर हर प्राणधारी के लिए है, हर महल-झोंपड़ी के लिए है और हर अंधकार के उच्छेदन के लिए है। प्रकाश देने में कहीं कोई संकीर्णता नहीं। कहीं कोई कृपणता नहीं। छोटे-बड़े के प्रति यही समदृष्टि यदि संसार के हर मनुष्य में उत्पन्न हो जाए तो विश्व के उत्थान में देर नहीं लगेगी। बच्चों को मन की संकीर्णता से बचाने के लिए माहेश्वरीजी की सुंदर बाल कविता 'मैं असीम अनंत नभ आकाश हूँ' को देखा जा सकता है। इसी प्रकार 'सूर्य मैं, मेरे उदय के साथ ही' कविता में बच्चे को तेजोमय बनने की बात कही गई है। 'चाँद मैं, आकाशवासी' में बच्चों को रोती आँखों में उल्लास भर देने की बात सिखाई गई है। 'मेघ हम, सावन सुहाने मास के' कविता में लोकमंगल और लोकरंजन का संदेश देनेवाले मेघों का वैशिष्ट्य दर्शनीय है—

बच्चों में राष्ट्रीयता का उदात्त भाव भरने में भी माहेश्वरीजी पीछे नहीं रहे हैं। वे बताते हैं, कितनी मूल्यवान है हमारी धरती, जिसके सिर पर हिमालय का मुकुट सुशोभित है, जिसके चरणों को सागर पखारता है और गंगा-यमुना की धारा निरंतर प्रवहमान रहती है। कितना मूल्यवान है हमारा यह देश, जिस पर राम-कृष्ण-गौतम-नानक और गांधी जनमे हैं। जहाँ ज्ञान, भक्ति, कर्म की धारा बही है। जहाँ सीता-सावित्री-पार्वती-अनसूया जैसे नारी-रत्न झिलमिला रहे हैं।

हम बरसते हैं कि जीवन ही स्वयं
है बरसता, लहलहा उठता जगत्
लोकमंगल, लोकरंजन के लिए
कर रहे जीवन निछावर हम सतत।

उत्तुंग गिरि-शृंग बच्चों को स्वाभिमान से मस्तक ऊँचा उठाए रहना सिखाते हैं—

जो झुका न कभी असत् के सामने
विश्व उसके सामने झुकता गया।

'मैं सरित कल-कल मधुर बहती हुई' कविता में सरिता की लहरें बच्चों को अबाध गति से आगे बढ़ते रहना सिखाती हैं। 'सिंधु मैं, विस्तार मेरा है बृहत्' में बच्चों को सागर की भाँति धीर-गंभीर होना और किसी भी स्थिति में अपनी मर्यादा न छोड़ना सिखाया गया है।

माहेश्वरीजी की जीवन-मूल्यों से जुड़ी बाल-कविताएँ इस अर्थ में विलक्षण हैं, क्योंकि इनमें बच्चों को जीवन-निर्माण और सत्पथ पर बढ़ने का संदेश दिया गया है। आज से चालीस-पचास वर्ष पूर्व लिखी होने पर भी आज के मूल्य संक्रमण के दौर में ये अपनी चमक-दमक बरकरार रखे हुए हैं। जीवन-संघर्षों में अविचलित रहने का संदेश देनेवाली ये पंक्तियाँ देखिए—

कष्ट पड़ें चिंता न करो तुम/ये यों ही आते-जाते हैं
फूल सदा काँटों में खिलते/सेजों पर मुरझा जाते हैं।
दुःख सहन करते जो वे ही/औरों को सुख पहुँचाते हैं
दीपक जलते स्वयं, तभी वे/पथ के तम को हर पाते हैं।

मधुर वाणी, परोपकार और विनम्रता ऐसे गुण हैं, जो व्यक्ति को महान् बनाते हैं। 'कौआ किसका' शीर्षक कविता में प्रकृति के माध्यम से, पखेरू के माध्यम से कवि ने बच्चों में इन सद्गुणों के बीज-वपन का प्रयास किया है—

कौआ किसका धन हर लेता/कोयल किसको दे देती है
केवल मीठे बोल सुनाकर/बस में सबको कर लेती है।
हम उन फलवाले पेड़ों को/पत्थर से मारा करते हैं
लेकिन वे मीठे फल देकर/हम सबकी झोली भरते हैं।
सूरज आता देख दीप/अपना प्रकाश धीमा करता है
अपने से जो बड़ा सामने/उसका वह आदर करता है।

इसी प्रकार 'नदियाँ स्वयं न पानी पीती' कविता में भी अत्यंत सरल-सुबोध भाषा में बच्चों को परोपकारी होने की शिक्षा दी गई है—

प्यासे जग की प्यास बुझाने/बादल जल भर-भर लाते हैं।
सीखें उनसे, वे कैसे/औरों के हित में मिट जाते हैं।
परहित के ही लिए देह/धारण करते हैं सज्जन प्राणी।
वृक्ष स्वयं न कभी फल खाते/नदिया स्वयं न पीती पानी।

बच्चों को सच्चरित्र बनाने के लिए माहेश्वरीजी ने अद्भुत असरवाली बाल-कविताएँ लिखी हैं। उनकी चिंता यही है कि देश की भावी पीढ़ी का चरित्र-निर्माण कैसे किया जाए। इस दिशा में चिंतन करते हुए वे बच्चों को चरित्र की मूल्यवत्ता समझाते हैं—

अगर खो गया धन तो समझो
कुछ भी बहुत नहीं खोया है
अगर तंदरुस्ती खोई तो
समझो काफी कुछ खोया है
किंतु खो दिया यदि चरित्र तो
समझो सबकुछ ही खोया है।

बच्चों में राष्ट्रीयता का उदात्त भाव भरने में भी माहेश्वरीजी पीछे नहीं रहे हैं। वे बताते हैं, कितनी मूल्यवान है हमारी धरती, जिसके सिर पर हिमालय का मुकुट सुशोभित है, जिसके चरणों को सागर पखारता है और गंगा-यमुना की धारा निरंतर प्रवहमान रहती है। कितना मूल्यवान है हमारा यह देश, जिस पर राम-कृष्ण-गौतम-नानक और गांधी जनमे हैं। जहाँ ज्ञान, भक्ति, कर्म की धारा बही है। जहाँ सीता-सावित्री-पार्वती-अनसूया

जैसे नारी-रत्न झिलमिला रहे हैं। जहाँ वेद, पुराण, उपनिषद्, गीता, रामायण, महाभारत, गुरुग्रंथ साहब लिखे गए हैं और यहाँ तक कि—

हुए व्यास-वाल्मीकि-कालिदास-भास-भवभूति जहाँ पर
तुलसी-मीरा सूर-कबीरा, कवि रवींद्र से जगत उजागर
जिनके यश से गूँज रहा है सदियों से भूमंडल सारा
वही देश है देश हमारा।

'हम उस हिंदुस्तान के' कविता में कवि ने अपनी पवित्र भारतभूमि की महत्ता इन शब्दों में गाई है—

मिली-जुली संस्कृति की जिसमें/बही निरंतर धार है
'सर्वे भवन्तु सुखिन:' जिसके/दर्शन का आधार है
जहाँ मान्यता रही कि ईश्वर/अंदर हर इनसान के
हम उस हिंदुस्तान के।
जिसके गौरवमय अतीत का/दुनिया में सम्मान है
प्रगति-समन्वय का सूचक/जिसका राष्ट्रीय निशान है

'जन-गण-मन-अधिनायक' जिसके/बोल राष्ट्र के गान के हम उस हिंदुस्तान के।

'अनेकता में एकता' हमारी भारतीय संस्कृति की पहचान है। अलग-अलग जाति, धर्म, भाषा के होते हुए भी हम एक हैं। 'सुमन एक उपवन के' कविता में यह बात कितने प्रभावशाली ढंग से कवि ने समझाई है—

रंग-रंग के रूप हमारे/अलग-अलग हैं क्यारी-क्यारी
लेकिन हम सबसे मिलकर ही/इस उपवन की शोभा सारी
एक हमारा माली, हम सब/रहते नीचे एक गगन के
हम सब सुमन एक उपवन के।

राष्ट्रीयता एकता से एक कदम और आगे बढ़कर माहेश्वरीजी ने मानव मात्र की एकता की बात भी कही है। 'गढ़ रहे स्वरूप देश का', 'नया इतिहास बनाएँगे', 'हमारा संकल्प', 'ज्ञान की मशाल हम जलाएँगे', 'चले नया निर्माण करने' तथा 'आओ मिल सब' जैसी कविताओं में कवि ने विकास के रथ पर निरंतर अग्रसर होने की बात कही है। 'वीर तुम बढ़े चलो, धीर तुम बढ़े चलो' जैसा प्रयाण गीत रचकर उन्होंने बच्चों में ओजस्वी स्वर भी भरे हैं। चूँकि ये कविताएँ आज से लगभग अर्धशती पूर्व लिखी गई हैं और उस समय 'बालिका विमर्श' चर्चा में नहीं था, इसलिए अधिकांश कविताएँ बालकों को लक्ष्य करके ही लिखी गई हैं। उस युग में लड़कियों का कार्यक्षेत्र प्राय: घर-परिवार तक ही सीमित माना जाता था, इसलिए इन कविताओं में बच्चियाँ यदि हैं भी तो 'मुन्नी-मुन्नी ओढ़े चुन्नी', 'मेरी गुड़िया', 'अम्मा तुमने देखी गुड़िया', 'मिठाई खाऊँगी' आदि में गुड्डे-गुड़िया के विवाह के संदर्भ में भाई की शादी में बहन के उल्लास के संदर्भ में ही सामने आई हैं। 'हमारा स्कूल', 'स्कूल की सफाई' और 'हम बालक' में पढ़ाई के मामले में भी बालकों का विशेष रूप से उल्लेख है। सीता, सावित्री, अनसूया जैसे नामों की चर्चा करके कवि ने नारी के प्रति अपनी पूज्य भावना अवश्य व्यक्त की है। हालाँकि 'रेखा रानी' का वर्ण्य विषय बेटी है और 'बोलो मत' में भी सोई हुई मुन्नी का चित्र है, पर बालकों पर लिखी गई कविताओं की तुलना में बालिका विषयक कविताएँ बहुत कम हैं। अंग्रेजी की तर्ज पर लिखे गए एक शिशु गीत में शीला-लीला की जोड़ी मौजूद है भी, पर जो सौष्ठव माहेश्वरीजी की बाल कविता की पहचान है, वह यहाँ नहीं है—

शीला-लीला/सिर पर गगरी
जल से भरी/कुएँ से उतरी
पैर उतरते गए रपट/फूटीं गगरी दोनों फट।

कुल मिलाकर यही कहा जा सकता है कि द्वारिकाप्रसाद माहेश्वरी की बाल कविताएँ बच्चों का जीवन गढ़ने की दिशा में बहुत उपयोगी हैं। आज किशोर वय के बालकों के उद्दंड होने की बात कही जाती है, आज छोटे-छोटे बच्चों तक में स्वार्थपरता लक्षित की जाती है, आज मनुष्य में संवेदना के क्षरण पर चिंता जतलाई जाती है, ऐसे में माहेश्वरीजी की इन मूल्यपरक बाल कविताओं की मूल्यवत्ता असीमित और असंदिग्ध हो जाती है। सही मायने में इनसान को इनसान बनानेवाली ये बाल कविताएँ अपने आप में अनूठी हैं और कवि की कालजयी कीर्ति का आधार हैं। हिंदी बाल साहित्य इन्हें रचने के लिए उनका चिर कृतज्ञ रहेगा।

सा
अ

७३, नॉर्थ ईदगाह, आगरा-२८२०१०
दूरभाष : ०९७१९४६००८५

गलती किसकी?

लघुकथा

● विनोद शंकर गुप्त

हमारा छह वर्ष का बेटा टिंकी दिन से स्कूल नहीं जा रहा था। कहता है कि मैं स्कूल नहीं जाऊँगा, मुझे क्लास टीचर स्केल से मारती है। बेटा डरा हुआ था। हमने सोचा कि टिंकी पढ़ाई में अच्छा हे और शैतानी भी नहीं करता, फिर क्यों उसे टीचर मारती है। मैं और मेरी पत्नी उसके स्कूल गए और स्कूल की हैडमिस्ट्रेस से मिले। हमने उन्हें बतलाया कि हमारा बेटा ऋषभ बहुत डरा हुआ है। कहता है कि क्लास टीचर उसे स्केल से मारती हैं। हैडमिस्ट्रेस ने क्लास टीचर को अपने ऑफिस में बुलाया। टीचर से उन्होंने पूछा, ''आप इनके बच्चे ऋषभ को स्केल से क्यों मारती हैं?'' क्लास टीचर ने कहा, ''आपका बच्चा क्लास में बहुत बात करता है। मना करने पर भी नहीं मानता, इसलिए मारना पड़ा।'' हमने अपने बेटे टिंकी से पूछा, ''आप अपनी टीचर का कहना क्यों नहीं मानते?'' बेटे ने बतलाया, ''मैडम कहती हैं, ऋषभ डोंट टॉक, डोंट टॉक, पर मेरा नाम तो टिंकी है।'' हम समझ गए कि गलती हमारी ही थी कि हमने बच्चे को यह नहीं बतलाया कि तुम्हारे स्कूल का नाम ऋषभ देव है। हमने स्कूल की हेड मिस्ट्रेस व बेटे की क्लास टीचर से क्षमा माँगी कि हमने अपने बेटे को यह नहीं बताया कि तुम्हारा नाम ऋषभ देव है, टिंकी तो घर का नाम है।

सा
अ

ए-३ ओल्ड स्टाफ कॉलोनी
जिंदल स्टेनलेस लि.
दूरभाष : ०९४१६९९५४२२

बाल-कहानी

सींकवाली ताई

● सुनीता

सारा गाँव उन्हें कहता सींकवाली ताई। बड़े भी, छोटे भी। सभी इसी नाम से बुलाते। सालवन गाँव में जब से ब्याहकर आई थीं ताई, तब से उनके गाँव का नाम सींक उनके नाम से जुड़ गया। ऐसा जुड़ा कि खुद अपना नाम तक उन्हें याद नहीं।

कोई पचास बरस तो हो ही गए सींकवाली ताई को इस गाँव में आए। तब सोलह बरस की थीं। अब सत्तर से कुछ ही कम होंगी। इस बीच कौन-सा दु:ख नहीं झेला उन्होंने। पति किशोरीलाल फौज में थे। बड़े ही दिलेर और खुशमिजाज। हर कोई उनकी तारीफ करता। नई दुलहन बनकर सालवन गाँव में आईं सींकवाली ताई के वे सबसे खुशियों भरे दिन थे। मगर शादी के चार-पाँच बरस बाद ही पति की मृत्यु की खबर आ गई। उसके बाद जल्दी ही सास-ससुर का साया भी सिर से उठ गया। सींकवाली ताई रह गईं अकेली, निपट अकेली।

हालाँकि अकेली भले ही हों, दबंग इतनी थीं कि मजाल है कोई दबा ले या कोई उलटी-सीधी बात कह दे। एक की चार सुनाती थीं। इसलिए आस-पड़ोस के लोग भी जरा दूर-दूर ही रहते थे। यों भी देखने में खूब लंबी-चौड़ी, खूब ऊँची कद-काठीवाली थीं सींकवाली ताई। खूब साँवला, पक्का रंग। चेहरे पर ऐसा मर्दानापन कि कोई दूर से देख के ही डर जाए। और बोली ऐसी सख्त, कड़वी कि जिसे दो-चार खरी-खरी सुना दें, उसे रातभर नींद न आए।

सबसे ज्यादा तो डरते थे गाँव के बच्चे उनसे। जरा सी बात पर घुड़क देतीं। और कभी-कभी तो सामने वाले मैदान में ज्यादा शोर मचाने पर पास में पड़ी लाठी उठाकर फर्श पर ऐसे ठकठकातीं कि बच्चे दूर भागते नजर आते। कुछ तो उनकी शक्ल देखते ही उड़न-छू हो जाते।

डर तो शुरू में नीना को भी उनसे लगता था। पर नानी के कहने पर कभी-कभी सींकवाली ताई से लस्सी लेने चली जाती थी। सींकवाली ताई कभी तो उसे बेबात घुड़क देतीं और कभी प्यार से पास बिठाकर बातें करने लगतीं, ''आ बैठ, तनिक मक्खन निकालकर अभी लस्सी देती हूँ।''

नीना डरते-डरते बैठ जाती और सींकवाली ताई को मक्खन निकालते देखती रहती। बीच-बीच में अपने स्कूल या नानी की कोई बात छेड़ देती।

सींकवाली ताई को उसकी बातें अच्छी लगतीं। पूछतीं, ''तुझे मक्खन अच्छा लगता है न! ले खा।'' और कटोरी में ढेर सारा मक्खन डालकर सामने रख देतीं।

कभी-कभी वे चूल्हे के पास बिठाकर बातें करती जातीं और तवे से उतारकर मक्के की गरम रोटी खिलातीं। ऊपर ढेर-सा मक्खन। नीना का जी खुश हो जाता। हालाँकि जाने क्या बात थी कि सींकवाली ताई के इतना प्यार जताने पर भी वह अंदर ही अंदर डरी-सी रहती। लगता, बस अभी सींकवाली ताई सुर बदलने ही वाली हैं और फिर ऐसे कड़वे बोल सुनाएँगी कि रोते-रोते भागकर जाना होगा।

मगर आश्चर्य! सींकवाली ताई नीना से कभी नाराज नहीं होती थीं। कभी-कभार रूखा भले ही बोल दें, पर डाँटा कभी नहीं। और सच तो यह है कि नीना उन्हें अच्छी लगने लगी थी।

शायद इसलिए कि नीना की भोली बातें सींकवाली ताई के कठोर दिल को पिघलाकर मुलायम मक्खन-सा बना देती थीं। नीना उनसे कहती, ''ताई, कहानी सुनाओ ना!''

और सींकवाली ताई चाहे-अनचाहे शुरू हो जातीं और फिर उन्हें भी रस आने लगता। सुनाती जातीं और खुद भी हँसते-हँसते दोहरी होती जातीं। उनकी कहानियाँ थीं ही ऐसी मजेदार। पिद्दी-पिद्दे की कहानी उनकी सबसे प्रिय कहानी थी। जितनी बार सुनातीं, खूब हँसतीं। हँसते हुए उनका पूरा शरीर हिलता और खुशी की हिलोर से भर जाता था।

कभी-कभी नीना भी उन्हें अपनी किताब में लिखी बातें बताती। सुनकर सींकवाली ताई खूब हैरान होतीं। मासूम बच्चों जैसा चेहरा बनाकर पूछतीं, ''अच्छा, ऐसा लिखा है तेरी किताब में! बता बेटी, और क्या-क्या लिखा है तेरी किताब में?''

और यों थोड़े ही दिनों में नीना और सींकवाली ताई की ऐसी दोस्ती हुई कि जो भी देखता, हैरान होता। इस नन्ही-सी बच्ची को भला क्यों सींकवाली ताई इतना प्यार करने लगीं?

सींकवाली ताई को आँख से थोड़ा कम सूझने लगा है, यह भी सबसे पहले नीना को ही महसूस हुआ। हुआ यह कि एक बार नीना को घी-बूरा खिलाने के लिए रोक लिया ताई ने। घी-बूरा बना रही थीं, तभी

सुपरिचित लेखिका तथा बाल साहित्यकार। बच्चों के लिए 'नानी के गाँव में', 'खेल-खेल में बातें', 'फूलोंवाला घर' तथा 'दादी की मुसकान' समेत कहानियों की कई पुस्तकें। महान् युगनायकों पर लिखी जीवनीपरक पुस्तक 'धुन के पक्के' खासी चर्चित हुई। 'आओ, सैर करें भारत की' में भारत के अलग-अलग राज्यों की छवियाँ। यूनेस्को के सर्व शिक्षा अभियान के तहत कुछ पुस्तकों का हिंदी अनुवाद; पंजाबी कविताओं का भी हिंदी में अनुवाद।

नीना को शक हुआ, ताई घी में कहीं बूरे की जगह नमक तो नहीं डालने जा रहीं? देखा तो टोका, ''क्या कर रही हो ताई? यह बूरा नहीं, नमक है!''

सींकवाली ताई शर्मिंदा हो गईं, ''क्या करूँ बेटी? आँख से कुछ सूझता ही नहीं। अच्छा हुआ जो तूने देख लिया।''

कहते-कहते उनका चेहरा थोड़ा रुआँसा हो गया। गाँव में कोई उनसे हमदर्दी नहीं रखता था, तो भला वे अपना दु:ख किससे कहतीं?

नीना बोली, ''ताई, कहो तो मैं नानी से थोड़ा-सा काजल ले आऊँ? मेरी नानी बहुत अच्छा काजल बनाती हैं। शायद उससे आपकी आँखें ठीक हो जाएँ।''

''अच्छा, ऐसा काजल है उनके पास? एक बार सुना तो था, पता नहीं किसने कहा था। पर तेरी नानी देंगी मुझे?''

''देंगी क्यों नहीं? अरे ताई, वो तो बहुत गुन गाती रहती हैं आपके। कहती हैं, सींकवाली ताई की जुबान भले ही कड़वी हो, पर दिल की बहुत अच्छी हैं। गाँव में उन जैसी भली और मेहनती औरत कोई और नहीं है।'' नीना ने उत्साह से कहा।

''अच्छा, ऐसा कहा तेरी नानी ने? ऐसा! सच्ची कह रही है न नीना, तू?'' पता नहीं सींकवाली ताई के चेहरे पर कैसी तृप्ति और पुलक भरी परछाइयाँ तिरने लगी थीं कि नीना अवाक्, अपलक देखती रह गई।

''अच्छा, अभी आई ताई!'' कहकर उसी समय नीना दौड़ी-दौड़ी गई और नानी से कहकर काजल की डिबिया ले आई।

सींकवाली ताई ने सप्ताह-दो सप्ताह लगाया, तो आँख की जलन तो ठीक हो गई। थोड़ा-बहुत नजर भी आने लगा, मगर आँखें पूरी तरह ठीक नहीं हुईं। फिर तो नीना पर सींकवाली ताई का प्यार थोड़ा और बढ़ गया। वे नीना को पास बिठाकर घंटों बातें करती रहतीं। प्यार से खिलाती-पिलातीं। कभी किसी दिन नीना उनके घर आने से चूक जाती, तो डंडा खटखटाते हुए चल पड़तीं। किसी तरह खुद को सँभालते हुए नीना की नानी के घर जा पहुँचतीं और प्यार से उसका हाथ पकड़कर ले आतीं। कहतीं, ''नीना, तू अपनी किताब भी ले ले। मुझे पढ़कर सुनाना।''

नीना अपनी हिंदी की किताब में से कभी उन्हें सबको हँसाने वाले चतुर पीटर की कहानी सुनाती, तो कभी प्रेमचंद की दो बैलों की कहानी। सुनकर सींकवाली ताई कुछ देर तो चुप-सी रह जातीं। फिर एकाएक कह उठतीं, ''सच्ची कहा भई, एकदम सच्ची कहा!'' और फिर खुद भी किसान और पिद्दी चिड़िया का किस्सा छेड़ देतीं या लोटन कबूतर का।

नीना और सींकवाली ताई का यह प्यार गाँव के शरारती बच्चों को तो चुभ ही रहा था। बदला लेने के लिए उन्होंने सींकवाली ताई को तंग करना शुरू कर दिया। ताई दिन में सिर्फ एक दफे चूल्हा जलातीं और एक बार में रोटियाँ बनाकर पूरे दिन के लिए रख लेतीं। इसी को लेकर ऊधमी बच्चों ने गाना बनाया। वे चिल्ला-चिल्लाकर बोलते—

सींकवाली ताई,
सींकवाली ताई,
कितनी रोटी खाईं
कितनी बचाईं!
कितनी बिलौटे ने
आकर चुराईं?

सींकवाली ताई मक्खन निकालकर एक छोटे से मर्तबान में रख देतीं और ढक्कन खोलकर उसी में से नीना को निकालकर दे दिया करती थीं। इस पर भी गाँव के बच्चों ने गाना बना लिया। वे ताई को सुनाते हुए खूब जोर-जोर से चिल्लाकर कहते—

सींकवाली ताई
सींकवाली ताई,
खोल के ढक्कन
खिला दे मक्खन!
तू पीना छाछ,
हम खाएँ मक्खन!

ताई को शरारती बच्चों की इस हरकत से गुस्सा तो बहुत आता, पर सब्र कर जातीं। बच्चों को भी पता था कि ताई को अब ज्यादा दिखाई नहीं पड़ता। तेजी से चल-फिर भी नहीं सकतीं। तो फिर डर की क्या बात?

पर एक दिन की बात, बच्चों ने कुछ ज्यादा ही चिढ़ा दिया, तो ताई अपना गुस्सा काबू नहीं कर पाईं। लाठी लेकर पीछे-पीछे दौड़ पड़ीं। पर अभी कुछ ही आगे गई थीं कि एक गड्ढे में उनका पैर पड़ा। लाठी दूर जा गिरी और ताई बुरी तरह लड़खड़ाकर जमीन पर आ गिरीं। सिर से खून निकलने लगा। एक पैर भी बुरी तरह मुड़ गया था और ताई हाय-हाय कर रही थीं।

उन्होंने खुद उठने की दो-एक बार कोशिश की, पर लाचार थीं। बच्चे दूर से यह देख रहे थे। पर पास आने की उनकी हिम्मत नहीं हुई। आखिर गोलू और भीमा ने किसी तरह आगे आकर उन्हें सहारा दिया और उन्हें घर के अदर ले गए।

नीना ने सुना तो दौड़ी-दौड़ी घर गई, नानी को बुला लाई। नानी और नीना दोनों बड़े प्यार से सींकवाली ताई को अपने घर ले गए। पूरे महीने तक नीना अपनी नानी की मदद से सींकवाली ताई की खूब सेवा करती रही। उन्हें हलदी मिला दूध पिलाया। सिर और पैर पर हलदी, तेल लगाकर पट्टियाँ बाँधीं। सींकवाली ताई के मुख से नीना के लिए लगातार आशीर्वाद निकलते रहते। उनकी कड़वाहट न जाने कहाँ गायब हो गई थी। यहाँ तक कि जिन बच्चों के कारण वे गिरीं, उनके लिए भी कोई कड़वा शब्द उनके मुँह से नहीं निकला।

बच्चे पहले तो दूर-दूर, डरे-डरे से रहे। पर फिर वे भी नीना के साथ मिलकर ताई की सेवा में जुट गए। काई महीने, डेढ़ में ही पूरी तरह ठीक हो गईं ताई तो नीना और बच्चे ही उन्हें घर छोड़कर आए। अब तो

बच्चे हर समय उन्हें घेरे रहते। अपनी किताबों में से पढ़-पढ़कर उन्हें कहानियाँ सुनाते। महाभारत और रामायण की कथाएँ भी।

सुनकर ताई भी खुश होकर उन्हें दिलचस्प किस्से-कहानियाँ सुनातीं। कभी किसी अलबेले जादूगर की तो कभी पिद्दीपुर की महारानी की। बचपन में सुनी हजारों कहानियाँ सींकवाली ताई को याद थीं और उनका खजाना कभी खत्म होने में ही नहीं आता था। उन्हें सुन-सुनकर बच्चे हँसते। संग-संग ताई भी।

और अचरज की बात यह कि नीना की नानी के काजल का असर था या कि बच्चों की खिल-खिल का, सींकवाली ताई की आँखें भी काफी कुछ ठीक हो चली थीं।

अब सींकवाली ताई कभी-कभी कहा करतीं, ''आज मैं समझ पाई हूँ कि प्यार लुटाने से ही प्यार मिलता है।''

और नीना मुसकराकर कहती, ''ताई, जब मैं बड़ी होऊँगी, तो सींकवाली ताई की कहानियाँ नाम से तुम्हारी कहानियों की किताब छपवाऊँगी।'' सुनकर बलैयाँ लेती थीं ताई और इस तरह मीठी-मीठी, मोहक हँसी हँसतीं कि कुछ न पूछो।

५४५ सेक्टर-२९, फरीदाबाद-१२१००८ (हरियाणा)
दूरभाष : ०९९१०८६२३८०

कविता

रिश्ता समझदारी का

● इंदु राव

तुम जिसे रोक-टोक समझती हो माँ की
वो रोक टोक नहीं है,
उसमें अथाह प्यार है, भविष्य की चिंता है
आशंकित है तुम्हारी सुरक्षा को लेकर,
नही समझ पाओगी ये सब…
समझोगी जब माँ बनोगी।
पिता की नसीहत को, ए आधुनिक लड़की
तुमने नाम दिया बंदिश का
बंदिश नही है रे, वो पितृहृदय
वो ही जानते हैं, बेटी के बाप की नींद
धीरे-धीरे कम होती क्यों चली जाती है
समझोगी ? नहीं समझोगी
तुम पिता नही बनोगी।
सास की सीख को,
तुम कहती हो इच्छा मारना,
वो एक भवन की मजबूती है
अपनी नींव पर तुम्हारा भवन
बहुत कुछ सह रही है, बहुत कुछ सिखा रही है
एक अनगढ़ पत्थर को हीरा बना रही है।
याद करोगी और आँसू बहेंगे
परंपराओं से तुमको सुसंस्कृत कर
पीढ़ी-दर-पीढ़ी का ज्ञान बाँटती
तुमको अपने घर का दर्पण बनाती
यों कहो तुम्हें सुघड़ बना रही है
समझोगी, जब सास बनोगी।
ससुर ने घर को कैदखाना बनाया,
कैसा विचार है तुम्हारा ?
एक परिधि जिसमें सुरक्षित हो

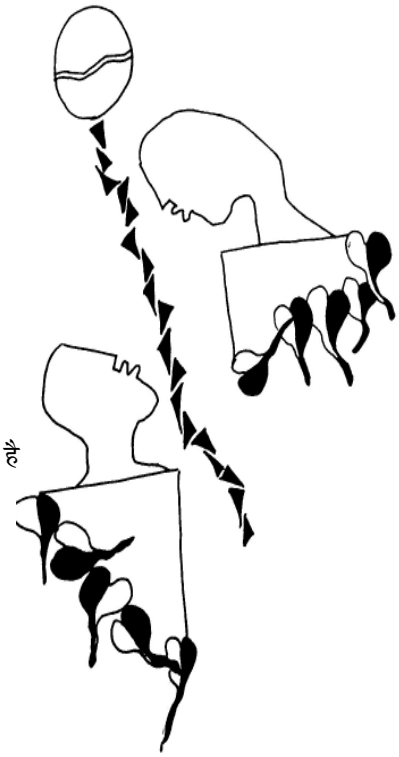

महामंडित हो गौरवमयी हो
पहचान है, स्व का भाव है
वरना खो जाओगी दुनिया की भीड़ में
तब समझोगी, हाँ समझोगी।
पति अपनी इच्छाओं को थोपता है
तुम्हारी इच्छाओं की भी तो सोचता है
ये रिश्ता शिकायत का नहीं
ये रिश्ता साझेदारी का,
अगर कमी है रिश्तों में कोई
तो अपनी कमियों को दूर करो
प्रयास करो, बनोगी संपूर्ण नारी
इस समाज में हो कुछ भागेदारी
बेटी, बहू और पत्नी का फर्ज
शेष है तुम पर मातृत्व का कर्ज
अपने अधिकारों के प्रति सचेत
कर्तव्य का भी तो करो बोध
यों ना बनो अब अबोध।
रिश्तों की गहराई कब समझोगी
जीवन बनता है इनसे कब जानोगी,
पर मुझे विश्वास है तुम समझोगी
समय रहते ही समझोगी
जरूर समझोगी।
क्योंकि समझना ही तो रिश्तों का काम है।
माँ-बाप, सास-ससुर का भी यही प्रयास है।

१६०६-ए, हाउसिंग बोर्ड कॉलोनी
सेक्टर-१० ए, गुरुग्राम-१२२००१ (हरियाणा)
दूरभाष : ०९८१०६११९८६

झूठ बोलना छी-छी-छी

बाल-कविता

● घमंडीलाल अग्रवाल

छी छी छी

बुरा सोचना छी-छी-छी,
व्यर्थ डोलना छी-छी-छी।

मीठी-मीठी बोली तजकर,
जहर घोलना छी-छी-छी।

सत्य-मार्ग सबसे बढ़िया है,
झूठ बोलना छी-छी-छी।

बात-बात पर बना बतंगड़,
बाल नोचना छी-छी-छी।

अपने मित्रों की पीठों पर,
छुरा घोंपना छी-छी-छी।

छिपा बुराई सिर्फ गुणों को
खूब तौलना छी-छी-छी।

बिना परिश्रम के किस्मत को,
अजी कोसना छी-छी-छी।

गप्प मारना, सोते रहना,
काम छोड़ना छी-छी-छी।

नानाजी

नानाजी ओ नानाजी,
अपना वचन निभाना जी,
ठंडे-ठंडे रसगुल्ले
हमको आज दिलाना जी।

नानाजी ओ नानाजी,
मत अब देर लगाना जी।
सिर पर बाँध हरी पगड़ी
झटपट छड़ी उठाना जी।

नानाजी ओ नानाजी,
ठीक नहीं घबराना जी।
बार-बार अवसर ऐसा
हाथ नहीं है आना जी।
नानाजी ओ नानाजी,
चश्मा जरा लगाना जी।
खुशी-खुशी कर बँटवारा,
आधा-आधा खाना जी।

सुपरिचित बाल साहित्यकार। कई विधाओं की ७२ पुस्तकें तथा पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। भारत सरकार के सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के प्रतिष्ठित 'भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार', चिल्ड्रन्स बुक ट्रस्ट पुरस्कार एवं हरियाणा साहित्य अकादमी पुरस्कार सहित अब तक ११९ पुरस्कार सम्मान प्राप्त।

चिड़िया बोली

कोयल बोली काग से,
बोर हमें क्यों करते हो
काँव-काँव के राग से।

मैना बोली चील से,
क्या सीखोगी तुम बहना,
शाला जाती ढील से।

तितली बोली मोर से,
बोलो किसे रिझाते हो
नाच-नाच कर जोर से।

चींटी बोली साँप से,
बाजीगर का नाम सुन
क्यों जाते हो काँप से।

चिड़िया बोली शेर से,
बिना परिश्रम क्यों खाते
जंगल के पशु ढेर से।

स्वरनामा

'अ' कहता है अब मत सोओ
'आ' आराम नहीं करना।
'इ' बोले इज्जत से जीना।
'ई' ईमानदार बनना।
'उ' कहता उपकार करो नित।
'ऊ' ऊपर उठते रहिए।
'ए' कहता एकता दिखाओ।
'ऐ' ऐनक जैसा तनिए।
'ओ' कहता है ओटो दु:ख को।
'औ' औरों के मन बस लो।
'अं' कहता है अंत सुखद हो।
'अ:' अ:हा, अ:हा हँस लो।

बड़े सवेरे

बड़े सवेरे कुकड़ूँ कूँ की
मुरगा बाँग लगाता है,
बड़े सवेरे सूरज भोला,
किरणों को बिखराता है।

बड़े सवेरे चिड़िया रानी
चीं चीं चीं चीं गाती है
बड़े सवेरे गोरी गैया
बाँ-बाँ-बाँ रँभाती है।

बड़े सवेरे धीमे-धीमे
हवा सुहानी चलती है,
बड़े सवेरे सड़कों पर बस
पों-पों, पीं-पीं करती है।

बड़े सवेरे जो भी बच्चे
उठकर अपना काम करें,
जग उनकी पूजा करता है
मात-पिता का नाम करें।

७८५/८, अशोक विहार
गुड़गाँव-१२२००६ (हरियाणा)
दूरभाष : ०९२१०४५६६६६

निबंध

चित्रकूट में बसत हैं, रहिमन अवध नरेश

● नर्मदा प्रसाद उपाध्याय

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि देह तो अपने ठौर पर लौट आती है, लेकिन मन नहीं लौटता।

कहाँ लौट पाया था कृष्ण का मन द्वारका में, नहीं लौटा, उस मन का ठौर तो रहा ब्रज की गलियों, राधा के चित्त, गोपियों की आँखों और यशोदा के वात्सल्य की चारदीवारी के बीच ही। ब्रज की रज से कृष्ण के मन का साहचर्य कभी नहीं छूटा।

मन के और देह के ठौर जब अलग-अलग हो जाते हैं तो मन फिर जहाँ छूट जाता है वहाँ से लौटता नहीं, देह लौट आती है।

देह और मन में यही अंतर है। लौटने की मजबूरी और न लौटने की मंशा। यह मंशा ही तो मन की देन है और इसी मंशा के चलते मन चित्रकूट में रह गया और देह लौट आई अपने बंदीगृह में।

चित्रकूट बहुत पुराना है। इसलिए वाल्मीकि से लेकर संस्कृत के कवियों और तुलसी ने इसकी शोभा को और इससे जुड़ी राम के जीवन की यहाँ घटी घटनाओं को भावविभोर होकर गाया है। इसका उल्लेख जैन तथा बौद्ध साहित्य में भी है। बानगी देखें, वाल्मीकि चित्रकूट की नैसर्गिक शोभा को गाते नहीं थकते। यह शोभा इतनी मनोहारी है कि चित्रकूट रंग से भरपूर पर्वत बन जाता है। राम वैदेही से पूछते हैं कि मन, वचन और देह को वश में कर लेने वाले इन साधनों को देखकर उनका मन प्रसन्न होता है या नहीं। वे जानकी को चित्रकूट पर्वत की शिलाएँ दिखाते हैं और कहते हैं कि देखो, इस पर्वत की सैकड़ों विशाल शिलाएँ जो नीली, पीली, सफेद आदि विविध रंगों की हैं, वे कैसी शोभा को जन्म दे रही हैं और रात के समय इस पर्वत पर जो हजारों जड़ी-बूटियाँ लगी हैं, वे अपनी प्रभा से इतनी दीप्त हो रही हैं कि अग्निशिखर की तरह प्रकाशमान होकर उनकी शोभा बिखेर रही हैं।

अपनी भामिनी को चित्रकूट की विशिष्टता बताते हुए वे कहते हैं कि देखो, इस पर्वत पर कोई स्थान तो घर जैसा, कोई फूल के उपवन जैसा और कोई स्थान तो एक ही शिला से निर्मित दिखाई पड़ता है। यह अद्‌भुत पर्वत ऐसा प्रतीत होता है, मानो यह पृथ्वी को फोड़कर निकला हो। यहाँ इतने प्रकार के फल, मूल और बहता हुआ स्वच्छ जल है कि इसकी शोभा के सामने कुबेर की अलकापुरी, इंद्र की अमरावती और उत्तरकुरु देश की रमणीयता पराजित होती है। वे चित्रकूट पर्वत पर लगे विभिन्न प्रकार के वृक्षों को माता सीता को दिखाते हैं और बतलाते हैं कि इस चित्रकूट के शिखर कौन-कौन से रंगों के हैं।

माता सीता को वे प्रवहमान मंदाकिनी दिखाते हैं और कहते हैं कि देखो, इस विचित्र तटवाली रमणीय हंस, सारस और तरह-तरह के पक्षियों से सेवित मंदाकिनी को। इस नदी के दोनों तट फलों और फूलों से भरपूर

सुप्रसिद्ध साहित्यकार। लगभग पच्चीस वर्षों से लेखन के क्षेत्र में सक्रिय। अब तक आठ ललित-निबंध संग्रह, दो संपादित ग्रंथ व 'भारतीय चित्रांकन परंपरा' पुस्तक प्रकाशित। मध्य प्रदेश साहित्य परिषद् द्वारा 'मुकुटधर पांडेय पुरस्कार' तथा मध्य प्रदेश हिंदी साहित्य सम्मेलन द्वारा 'वागीश्वरी पुरस्कार' से पुरस्कृत।

अनेक जाति के वृक्षों से भरे पड़े हैं और यह नदी वैसी ही शोभा से भरपूर है जैसी कि कुबेर की सौगंधिका। वे मंदाकिनी के जल की तुलना मणि की उज्ज्वलता से करते हैं। वे चित्रकूट को अयोध्या की तरह और मंदाकिनी को सरयू की तरह देखने का आग्रह अपनी भामिनी से करते हैं और कहते हैं कि इस चित्रकूट पर्वत और मंदाकिनी नदी को देखने से तथा उनके साथ रहने से वे ऐसा अनुभव करते हैं, जैसे यहाँ रहना अयोध्यापुरी में रहने से बढ़कर हो।

मानव के रूप में मंदाकिनी के तट पर विचरते राम उन मृगों को देखते हैं, जो मंदाकिनी के जल को पीकर जाते हैं और जिसमें ऋषि स्नान कर सूर्य को अर्घ्य देते हैं।

इस नीलवर्णी चित्रकूट को निहारते राम की आँखें नहीं थकतीं। वाल्मीकि का यह वर्णन अपने उत्कर्ष को तब छू लेता है, जब वे कहते हैं—

मारुतोद्धूतशिखरैः प्रवृत्त इव पर्वतः।
पादपैः पत्रपुष्पाणि सृजद्‌भिरभितो नदीम्।। (२.९४.८)

अर्थात् देखो सीता, पवन से काँपते इन वृक्षों के हिलने से यह पर्वत नाचता हुआ सा प्रतीत होता और वृक्षों के हिलने से जो पुष्प गिरते हैं तो ऐसा लगता है मानो चित्रकूट पर्वत इस मंदाकिनी को पुष्पांजलि दे रहा हो।

वाल्मीकि रामायण में महर्षि अत्रि के उस आश्रम का भी सुंदर वर्णन है, जहाँ माता अनसूया ने माता सीता को उनके चित्रकूट प्रवास के समय शिक्षाएँ दी थीं। वाल्मीकि का यह वर्णन अद्‌भुत है।

चित्रकूट में राम के निवास करने का उल्लेख अध्यात्म रामायण में इस प्रकार है—

'नागराश्च सदा यान्ति रामदर्शनलालसाः,
चित्रकूटस्थितं ज्ञात्वा सीतया लक्ष्मणेन च।

इसके अतिरिक्त जैन साहित्य व बौद्ध ग्रंथ 'ललितविस्तर' में भी चित्रकूट का वर्णन है। महाभारत में चित्रकूट और मंदाकिनी का वर्णन तीर्थ के रूप में किया गया है। महाकवि कालिदास ने रघुवंश में भी चित्रकूट

के विशद उल्लेख किए हैं। चित्रकूट के वन में ही जब भगवान् राम निवास कर रहे थे, तभी भरत ने उन्हें पिता की मृत्यु का समाचार दिया था और उस राज्यलक्ष्मी को अंगीकार करने की प्रार्थना की थी, जिसका उन्होंने कभी स्पर्श तक नहीं किया था। इसी चित्रकूट में उन्होंने राम की पादुकाएँ ली थीं। कालिदास का चित्रकूट वर्णन तब और मार्मिक हो उठता है, जब भगवान् राम इतनी सुंदर और उत्कंठित हरिणों से सुशोभित चित्रकूट की भूमि को इसलिए त्याग देते हैं कि कहीं मोहवश भरत यहाँ फिर न आ जाएँ।

रामस्त्वासन्नदेशत्वाद्भरतागमनं पुनः।
आशङ्क्योत्सुकसारङ्गं चित्रकूटस्थलीं जहौ॥ १२-२४

चित्रकूट का विशद शब्द चित्रण गोस्वामी तुलसीदास ने किया है।

गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरित मानस में चित्रकूट की धरती की शोभा और कामदगिरि पर्वत की अलौकिकता को ऐसी भाषा में बाँधा है, जो भाषा तो है ही नहीं। कवितावली में तुलसी कहते हैं—

तुलसी जो राम सो सनेह साँचो चाहिए।
तौ सेइए सनेह सौं विचित्र चित्रकूट सो॥

तुलसी ने चित्रकूट के जो शब्दचित्र खींचे हैं, वे रामचरित मानस के मनोरम स्थलों में से हैं। इन शब्दचित्रों में निसर्ग की अद्भुत शोभा तो है ही, साथ ही वहाँ के निश्छल कोल और भीलों से हुए संवाद की विलक्षण मिठास भी है।

कामदगिरि पर्वत साक्षात् राम हैं—

कामत गिरी भयराम प्रसादा।
अवलोकत अपहरत विषादा॥

तुलसी ने चित्रकूट को इतना पवित्र बताया है कि यहाँ बसनेवाले पशु-पक्षी और वृक्ष से लेकर तृण तक पुण्यवान हैं—

चित्रकूट के विहग मृग बेलि बिटप तृन जाति।
पुण्य पुंज सब धन्य अस कहहिं देवदिन राति॥

गोस्वामी तुलसीदास जो चित्रकूट के पास राजपुर में ही जनमे और पले-बड़े थे, ने चित्रकूट की बाह्य व राम के हृदय की शोभा इन दोनों को साकार किया है। कैसे हैं राम—

रामहि केवल प्रेमु पिआरा।
जानि लेउ जो जान निहारा॥

उन्हें केवल प्यार है तो निश्छल प्रेम से। चित्रकूट के कोल और भील राम, लक्ष्मण और सीता को देखकर ऐसे प्रसन्न हैं, जैसे उन्होंने सभी नौ निधियाँ पा ली हों। वे कंदमूल और फल लेकर उनके दर्शन करने आते और उन्हें देखकर चित्रलिखित से खड़े रह जाते हैं, उनके शरीर पुलक से भरपूर हो उठते हैं और प्रेम के आँसुओं के जल की बाढ़ आ जाती है—

करहि जोहारु भेंट धरि आगे।
प्रभु गई बिलोकहिं अति अनुरागे॥
चित्र लिखे जनु जहँ तहँ ठाढ़े।
पुलक सरीर नयन जल बाढ़े॥

और राम, वे इन कपटरहित भीलों के वचन ऐसे सुनते हैं, जैसे कोई पिता बालकों के वचन को सुनता है और वे ही उतने ही कोमल वचनों से उन्हें संतुष्ट करते हैं—

राम सनेह मगन सब जाने।
कहि प्रिय वचन सकल मनमाने॥

तथा

बेद बचन मुनि मन अगम ते प्रभु करुना ऐन।
बचन किरातन्ह के सुनत जिमि पितु बालक बैन॥

रामचरितमानस में चित्रकूट की नैसर्गिक शोभा का मनोहारी वर्णन है। वाल्मीकि भगवान् राम को चित्रकूट पर निवास करने की सलाह देते हुए कहते हैं कि वे चित्रकूट पर निवास करें। वह सुहावना पर्वत है, वहाँ सुंदर वन है, वहाँ हाथी, सिंह, हिरण और पक्षियों का विहार स्थल है। यहीं वह पवित्र सरिता भी है, जिसे अत्रि ऋषि की पत्नी अनसूयाजी अपने तपोबल से लाई थीं। यह गंगाजी की वह धारा है, जिसका नाम मंदाकिनी है और वह उस डायन के समान है, जो पाप रूपी बालकों को खा जाती है—

चित्रकूट गिरि करहु निवासू। तहँ तुम्हार सब भाँति सुपासू॥
सैलु सुहावन कानन चारू। करि केहरि मृग बिहग बिहारू॥
नदी पुनीत पुरान बखानी। अत्रिप्रिया निज तप बल आनी॥
सुरसरि धार नाउँ मंदाकिनि। जो सब पातक पोतक डाकिनि॥

और कैसा है चित्रकूट—

चित्रकूट जनु अचल अहेरी। चुकइ न घात मार मुठभेरी॥

अर्थात् चित्रकूट ही मानो अचल शिकारी है, जिसका निशाना कभी नहीं चूकता और जो सामने से मारता है और रहीम कहते हैं कि यहाँ तो अवध नरेश ही बसते हैं और जिस पर विपत्ति पड़ती है, वही यहाँ आता है—

चित्रकूट में बसत हैं, रहिमन अवध-नरेश।
जापर विपदा पड़त है, सोई आवत यही देश॥

फिर यह चित्रकूट का वन जब से राम आए हैं, तब से मंगलदायक हो गया है। यहाँ अनेक प्रकार के वृक्ष हैं, जो फूलते तथा फलते हैं और उन पर लिपटी हुई सुंदर बेलों के मंडप तने हैं। वे कल्पवृक्ष के समान ही सुंदर हैं, मानो वे देवताओं को नंदन वन में छोड़कर आए हों। भौंरों की पंक्तियाँ बहुत ही कर्णप्रिय गुंजार करती हैं और सुख प्रदान करनेवाला शीतल, मंद और सुगंध से भरपूर पवन यहाँ चलती रहती है। नीलकंठ, कोयल, तोते, पपीहे, चकवे और चकोर आदि पक्षी कानों को सुख देनेवाली और चित्त को चुरा लेनेवाली तरह-तरह की बोलियाँ बोलते हैं—

नीलकंठ, कलकंठ सुक चातक चक्क चकोर।
भाँति-भाँति बेलहि बिहग श्रवन सुखद चित चोर॥
करि केहरि कपि कोल कुरंगा। बिगत बैर बिचरहिं सब संगा॥
फिर अहेर राम छबि देखी। होंहि मुदित मृग बृंद विसेषी॥

यह चित्रकूट ऐसा है, जहाँ हाथी, सिंह, बंदर, सुअर, हिरण ये सब आपसी बैर को भुलाकर साथ-साथ विचरते हैं और राम की छवि को देखकर विशेष रूप से आनंदित होते हैं।

गोस्वामी तुलसीदास ने चित्रकूट की शोभा को वर्णित इतने जीवंत रूप में किया है कि उस समय का वनाच्छादित और प्राकृतिक सुषमा से

भरपूर चित्रकूट हमारी आँखों के सामने दृश्यमान हो जाता है। मंदाकिनी ऐसी नदी है, जिसकी प्रशंसा गंगा, सरस्वती, सूर्यकुमारी यमुना, नर्मदा, गोदावरी आदि पुण्य से भरपूर नदियाँ तथा तमाम सरोवर, सागर और नद उसकी प्रशंसा करते हैं तथा चित्रकूट पर्वत ऐसा है, जिसकी प्रशंसा का गान हिमालय सहित उदयाचल, अस्ताचल, कैलास, मंदराचल और सुमेरु जैसे वे सब पर्वत करते हैं, जहाँ देवता निवास करते हैं और इन सबके कारण वह विंध्याचल पर्वत, जिसका एक अंग चित्रकूट है, आनंद से भरपूर हो उठता है।

चित्रकूट भरत-मिलाप के प्रसंग का जीवंत साक्षी है। गोस्वामीजी की प्रतिभा इस मिलन के वर्णन को काव्य के उत्कृष्ट शीर्ष पर पहुँचाती है—

कहत सप्रेम नाइ महि माथा। भरत प्रनाम करत रघुनाथा।
उठे रामु सुनि पेम अधीरा। कहुँ पट कहुँ निषंग धनु तीरा॥
बरबस लिए उठाइ उर लाए कृपानिधान।
भरत राम की मिलनि लखि बिसरे सबहि अपान॥
मिलनि प्रीति किमि जाइ बखानी। कबिकुल अगम करम मन बानी॥
परम प्रेम पूरन दोउ भाई। मन बुधि चित अहमिति बिसराई॥

लक्ष्मण जैसे ही राम से कहते हैं कि भरत उन्हें प्रणाम कर रहे हैं, तब राम की सुधि जाने कहाँ खो जाती है। वे प्रेम में अधीर होकर कुछ इस तरह उठते हैं कि कहीं वस्त्र गिरता है, कहीं तरकश, कहीं धनुष और कहीं बाण और वे बलपूर्वक भरत को उठाकर अपने हृदय से लिपटा लेते हैं। दोनों भाइयों का यह मिलाप केवल उन दोनों के सुधि को ही नहीं खोता बल्कि उन सभी की सुधि को भी मानो विलुप्त कर देता है, जो इस अद्‌भुत मिलन को देखते हैं। इस मिलन, इस प्रीति के वर्णन के लिए शब्द नहीं मिलते। मनसा, वाचा और कर्मणा से परे है इस मिलन का वर्णन। इस मिलन में सबकुछ गल गया है—मन, बुद्धि और चित्त, सबकुछ। दोनों भाइयों ने पूर्णत: प्राप्त कर ली है और यह पूर्णता है प्रेम की।

चित्रकूट साक्षी बन गया है प्रेम का और प्रेम की प्यास का भी। तुलसीदास इसी चित्रकूट के घाट पर चंदन घिसते हैं, घाट पर संतों की भारी भीड़ है। तुलसी प्रतीक्षा कर रहे हैं, उनकी आँखें राम को खोजती हैं, कि वे कब उनके सम्मुख आएँ और वे कब उनको तिलक करें, लेकिन राम तो किसी दूसरी मिट्‌टी के बने हैं, वे तुलसीदास को अवसर नहीं देते। घिसा हुआ चंदन सिल पर रखा है और उसी चंदन से रघुवर अपना तिलक स्वयं कर रहे हैं। भक्ति की ऐसी आराधना और अर्चना केवल राम ही कर सकते हैं, जो तिलक को लगाने की आकांक्षा करनेवाले को, चंदन को और तिलक को इस सभी को धन्य कर देते हैं और संदेश देते हैं कि स्वयं का तिलक करना आस्था को अर्घ्य चढ़ाना है और अपने पुरुषार्थ की दीप्ति को पूरी विनम्रता के साथ, अकिंचन भाव के साथ अपने मस्तक पर भासमान करना है।

इस चित्रकूट की बार-बार याद आती है। कामदगिरि की परिक्रमा करने के उद्‌देश्य से पत्नी व पुत्र के साथ गया। साँझ के समय घनघोर वर्षा हो रही थी। वर्षा थमी तो मंदिर पहुँचे, कामतानाथ भगवान् के दर्शन किए और फिर बिना छाते के ही कामदगिरि पर्वत की परिक्रमा करने चल पड़े। वे बादल, जो बरस-बरसकर मौन हो गए थे, फिर मुखर होने लगे और जैसे ही हम कुछ आगे बढ़े, वे अपनी पूरी सामर्थ्य के साथ बरसने लगे। भीगने में देर नहीं लगी, आपादमस्तक भीग गए, विचार किया कि शायद कामतानाथ भी यही चाहते हैं कि उनकी परिक्रमा अविस्मरणीय हो, पूरी तरह निर्मल रूप में ही की जाए। इसलिए लौटने का या कहीं ठौर लेने का प्रश्न नहीं था, यात्रा जारी रही। साथ ही बहते हुए जल के समांतर मस्तिष्क का विचार प्रवाह भी।

याद आए तुलसी और उनके राम। हालाँकि यह प्रसंग चित्रकूट का नहीं है। तुलसी ने किष्किंधा कांड में यह अर्धाली गाई है—'घन घमंड गरजत घनघोरा, प्रियाहीन डरपत मन मोरा।'

घुमड़-घुमड़कर मेघ गरज रहे हैं और राम लक्ष्मण से कहते हैं कि बिना प्रिया के मेरे मन को डर लगता है।

मैं चकित हूँ, जो स्वयं ईश्वर हो, जिसका भाई लक्ष्मण जैसा समर्थ और अपराजेय हो, वह मन से इतना दुर्बल कि बिना प्रिया के जब बादल गरजते हैं तो घनघोर वर्षा के बीच उसका मन डर से भर उठता है। क्या कहना चाहते हैं तुलसी? शायद अपनी ही कहानी, बिना प्रिया के उनका भी मन डर से भर उठा होगा और वे साँप को रस्सी समझकर, उसे पकड़कर अपनी प्रिया रत्नावली के पास पहुँच गए होंगे। यह बाद की और गढ़ी हुई कहानी है कि फिर रत्नावली ने उन्हें कोसा और वे फिर विरक्त होकर रामकथा के प्रणयन में लग गए। मन यही कहता है कि अपने आराध्य राम की तरह ही रहे होंगे। तुलसी और उन्होंने केवल और केवल अपनी प्रिया के प्रेम की सामर्थ्य पर ही विश्वास किया होगा। मुझे लगता है कि इन पंक्तियों का यही संदेश है कि चाहे तुम स्वयं कितने भी बलशाली हो, तुम्हारे सगे-परिजन चाहे कितने पराक्रमी हों, लेकिन अंतत: तुम्हारा संबल तो तुम्हारी वह प्रिया ही है, जिसके साहचर्य में रहते हुए तुम अपने आपको पूरी तरह, हर ओर से सुरक्षित अनुभव करते हो।

बरसात में भीगते-भीगते मुझे यही सबकुछ याद आता रहा। मन कितना संवेदनशील और सामर्थ्य से भरपूर होता है। यह चित्रकूट में अनुभव हुआ। चित्रकूट जैसे स्थान महज तीर्थ नहीं होते, वे स्मृतियों के ऐसे वन होते हैं, जो भरपूर होते हैं। फूलों से लदे पेड़ों से, जिनके नीचे से गुजरो तो पगडंडियों पर भी स्मृतियों के असंख्य फूल बिछे होते हैं और ऐसे ही फूलों से मस्तक भी अभिषिक्त होता रहता है, फिर यही फूल आपकी अभिव्यक्ति बन जाते हैं, जीवन भर की निधि बन जाते हैं।

चित्रकूट जैसे स्थान इतिहास की निधि भर नहीं रहते बल्कि वे जीवंत स्पंदन बने रहते हैं। वहाँ जाओ तो आप उस युग की धड़कनों को सुन सकते हो, जिस युग में राम अपनी भार्या सीता और अपने अनुज के साथ आकर

कामदगिरि के शिखर पर एक कोने में अपनी कुटिया बनाकर रहने लगे थे। आज कुटिया दिखाई नहीं देती और न ही राम और सीता, लेकिन संवेदना घनीभूत होकर रात में पहरा देते धनुर्धारी लक्ष्मण को आज भी देख लेती है। आस्था इस संवेदना की आँख कब बन जाती है, मालूम नहीं होता।

चित्रकूट से जाने कितनी कथाएँ जुड़ी हैं। कामदगिरि के दरवाजे के द्वार लोग दिखाते हैं और यह भी कहते हैं कि अभी भी राम-दरबार अंदर लगा हुआ है। फिर सीता रसोई से लेकर रामघाट, हनुमानधारा, गुप्तगोदावरी और माता सती अनसूया के आश्रम जैसे अनेक स्थान हैं, जहाँ जाकर आप चित्रकूट की महिमा में आपादमस्तक डूबे अपने आपको अनुभव करते हैं।

यह चित्रकूट का वह पक्ष है, जिसके बारे में हम जानते हैं, लेकिन चित्रकूट जाने पर वहाँ एक और चित्रकूट दिखाई देता है, जहाँ की हवा में डकैतों की कहानियाँ तैरती हैं, एक अनजाना भय वहाँ के निवासियों के मन में समाया रहता है, आधा चित्रकूट मध्य प्रदेश में है और आधा उत्तर प्रदेश में। कामतानाथ की परिक्रमा भी इन्हीं दोनों प्रदेशों के बीच से होती है। यह चित्रकूट का वर्तमान है, जिसका कोई संबंध त्रेता के राम से नहीं है। पर्यटन केंद्र के रूप में इसे विकसित करने का प्रयास किया गया है। हमारे यहाँ एक नई संज्ञा प्रचलित हो गई है, 'धार्मिक पर्यटन'। मैं आज तक नहीं समझ पाया कि इस संज्ञा का आशय क्या है? शायद सरकारें सोचती हैं कि अकेली आस्था उन्हें पर्याप्त राजस्व नहीं दिला सकती, उसे पर्यटन से जोड़ो। परिणाम यह है कि पर्यटन प्रमुख है और आस्था गौण। राम कहीं बहुत पीछे छूट गए हैं।

लेकिन सच तो यह है कि चित्रकूट राम का घर है। राम व्यक्ति नहीं हैं, रस हैं, जिनके स्मरण का आस्वाद सच्ची आस्था करती है। चित्रकूट अनुभव है, उस मिटती संवेदना का बचा हुआ छोटा सा अंश है, जो आज भी राम के मूल्यों को आज के समय में प्रतिष्ठित होते हुए देखना चाहती है।

चित्रकूट स्थान नहीं, भाव है, जो ज्वार के रूप में मनमानस में उठा करता है और जिसकी लहरों पर राम के उस लोकव्यक्तित्व की किरणें अठखेलियाँ करती रहती हैं, जो केवल अयोध्या का न होकर पूरे लोक का हो गया था और जिसकी व्याप्ति आज भी लोक के बीच ही है।

८५, इंदिरा गांधी नगर,
आर.टी.ओ. कार्यालय के पास,
केसरबाग रोड, इंदौर-९ (म.प्र.)

बाल-कथा

नसीहत

● श्यामसखा श्याम

कड़ी दोपहर में सेठ मोटूमल गरमी से बेहद परेशान था। बिजली गुल हो जाने से ए.सी. पहले ही बंद हो गया था। अब इन्वर्टर भी बोल गया। उसने अपने नौकर बनवारी को आवाज दी। बनवारी तो कहीं बाहर गया हुआ था। सेठ की आवाज सुनकर, बनवारी का बेटा छोटू आ गया। सेठ गरमी से बेहाल था, उसने छोटू को हाथ का पंखा झलने पर लगा दिया। छोटू पंखा झलने लगा, सेठ को नींद आ गई। इधर पंखा झलते-झलते छोटू के नन्हे-नन्हे हाथ थक गए। उसे खुद भी नींद आ रही थी, पर क्या करता सेठ के डर से पंखा झलता रहा। पर नींद पर किसका वश चलता है, जो छोटू का चलता। छोटू के हाथ से कब पंखा छूटा, कब नींद आ गई उसे पता ही नहीं चला। इधर छोटू को नींद आई, उधर सेठ की आँख खुल गई। छोटू को सोया देखकर सेठ को गुस्सा आ गया, वह गुस्से में चीखकर छोटू को उठाना चाहता था पर उसकी नजर सोते हुए छोटू पर पड़ी। छोटू पसीने में नहाया हुआ, मस्ती से सो रहा था, उसके माथे से पसीने की बूँद चलकर नाक पर से फिसलती हुई जमीन पर टपक रही थी। मोटूमल हैरान था कि छोटू को इतनी गरमी में भी इतनी गहरी एवं सुखद नींद कैसे आ रही है। छोटू सोता हुआ बहुत प्यारा लग रहा था, मोटूमल को उसे उठाना अच्छा नहीं लगा, वह खुद ही पंखा झलने लगा तभी बिजली आ गई और मोटूमल भी सो गया।

शाम को मोटूमल जब उठकर बरामदे में आया तो छोटू लॉन में पानी दे रहा था। सेठ के मित्र डॉ. नीरज बरामदे में बैठे सेठ के उठने की प्रतीक्षा कर रहे थे। डॉ. नीरज व मोटूमल बचपन के मित्र थे और दोनों मित्र रोज सायंकाल में शतरंज खेलते थे। बरसों से यह नियम चला आ रहा था।

शतरंज की बिसात बिछाते हुए मोटूमल ने दोपहर का किस्सा सुनाते हुए कहा, ''डॉ. साहिब, मैं अब तक हैरान हूँ कि इतनी भयंकर गरमी में छोटू इतने आराम से, इतनी गहरी नींद में कैसे सो रहा था।''

डॉ. नीरज कहने लगे ''सेठजी, हम अपने शरीर को जैसा ढालते हैं, वैसा ही ढल जाता है। छोटू मेहनत करता है, सर्दी-गरमी को सहन करते हुए उसका शरीर बलवान हो गया है, जबकि तुमने खुद को, अपने शरीर को निठल्ला बनाकर, सुविधाओं का गुलाम बना लिया है। मेरे लाख कहने पर भी न तो सैर करते हो और खेल के नाम पर केवल शतरंज। बस, इसीलिए तुम बिना ए.सी. सो नहीं पाते।''

मोटूमल ने उठते हुए कहा, ''ठीक है डॉ. साहिब, आज से ही सैर आरंभ करते हैं और शतरंज केवल रविवार को खेला करेंगे।'' अब वह न केवल बैडमिंटन खेलने लगा, अपितु अपनी दुकान पर भी साइकिल से जाने लगा। कुछ ही दिनों में मोटूमल की तोंद गायब हो गई और अब वह बिजली गुल हो जाने पर भी चैन से सो पाता था। हाँ, उसने छोटू को अपने खर्चे पर विद्यालय में पढ़ने बैठा दिया था, आखिर यह नसीहत उसे छोटू के कारण ही तो मिली थी।

७०३, जी.एच.एस., ८८ पल्लवी
सेक्टर-२०, पंचकुला-१३४११०
दूरभाष : ०९४१६३५९०१९

बाल-कहानी

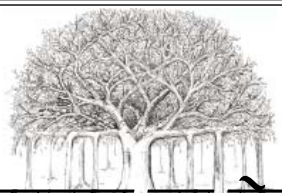

बरगद का पेड़

● अशोक 'अंजुम'

कॉलोनी के बराबर वाले मैदान में खड़ा बरगद का पेड़ कॉलोनी के सभी लड़कों का साथी था। दूर-दूर तक फैली उसकी शाखाओं पर उछलकूद मचाना सभी लड़कों का प्रिय शौक था। शाम होते ही जैसे उसकी लंबी-लंबी शाखाएँ कॉलोनी के सभी लड़कों को अपनी ओर आकर्षित करती थीं। बड़े-बुजुर्ग भी उसकी छाँव का मोह नहीं छोड़ पाते थे। गरमी के दिनों में तो जैसे उसके नीचे छोटा-मोटा मेला ही लग जाता था।

आज जब यह खबर सुनने को मिली कि इस मैदान में कोई बिल्डर फ्लैट्स बनाएगा और इस बरगद को भी कटवा दिया जाएगा तो सभी के हृदय धक से रह गए। राजू को तो पूरी रात नींद नहीं आई। उसे लगता जैसे बरगद का वो पेड़ कराह रहा है। उसकी पत्तियाँ जैसे आँखों में बदल गई हैं और उनसे आँसू टपक रहे हैं। कॉलोनी के और भी कई लड़कों का यही हाल था। दूसरे दिन जब सारे लड़के बरगद के उस पेड़ के नीचे जुटे तो सबकी चर्चा का यही विषय था।

''हम इस पेड़ को नहीं कटने देंगे।'' राजू ने दृढ आवाज में कहा।

''लेकिन हम कर भी क्या सकते हैं?'' मुकेश की आवाज जरा धीमी थी।

''चाहे जो करना पड़े।'' नीरज बोला।

''देखिए, अगर हम ठान लें तो कोई भी काम असंभव नहीं है।'' सुभाष उम्र में कुछ बड़ा था, उसने भी अपनी बात को दृढता से सभी के सामने रखा।

''सच कह रहे हो सुभाष भइया, हम आंदोलन करेंगे; धरना देंगे, लेकिन अपने इस प्यारे बरगद को नहीं कटने देंगे। गांधीजी ने तो आंदोलनों और अहिंसा से अंग्रेजों की नाक में दम कर दिया था।'' नमन ने जब कहा तो सभी उसकी ओर प्रशंसा भरी नजरों से देखने लगे।

''नमन, तुमने वाकई अच्छी बात कही है। लेकिन पहले हम सभी जाकर जिले के वन अधिकारी से बात करेंगे और इसके लिए अपने-अपने मम्मी-पापा को भी मनाएँगे कि वे भी हमारे साथ चलें।'' राजू ने कहा।

चिंटू तपाक से बोला, ''हाँ-हाँ, यह ठीक है। मेरे मम्मी-पापा तो चलने के लिए तुरंत तैयार हो जाएँगे।''

सुपरिचित रचनाकार। अब तक चार हास्य-व्यंग्य-संग्रह, पाँच गजल-संग्रह, 'एक नदी प्यासी' गीत-संग्रह; हास्य-व्यंग्य एवं गजल, कविता, दोहा, लघुकथा, गीत आदि विधाओं पर सत्ताईस पुस्तकें संपादित। 'राष्ट्रभाषा गौरव', 'काव्यश्री', 'साहित्यश्री' सहित दर्जनों पुरस्कार। संप्रति 'प्रयास' पत्रिका के संपादक।

अरे हाँ, वन विभाग की अनुमति के बिना हरे वृक्ष काटना तो वैसे भी अपराध है। हम वन अधिकारी महोदय से प्रार्थना करेंगे कि वे हमारे इस प्यारे बरगद को काटने की अनुमति न दें।'' सुभाष ने कहा।

''तो फिर ठीक है, हम आज ही अपने-अपने मम्मी-पापा से बात करते हैं और कल स्कूल से आने के बाद सब यहीं बरगद के नीचे जुटेंगे और यहाँ से मिलकर वन विभाग के दफ्तर चलेंगे। दफ्तर यहाँ से बस दो-ढाई किलोमीटर दूर ही है।'' राजू ने कार्य योजना को जैसे अंतिम रूप दिया।

दूसरे दिन कॉलोनी के तमाम बच्चे और अधिकांश के मम्मी-पापा वन विभाग के दफ्तर गए और वहाँ वन अधिकारी से बात की, लेकिन वन अधिकारी उस पेड़ को काटे जाने की अनुमति पहले ही दे चुके थे। उन्होंने बताया कि वह बरगद का पेड़ उस जमीन के मालिक की निजी संपत्ति है। मैं इसमें आप लोगों की कोई मदद नहीं कर सकता।

सभी के दबाव डालने के बावजूद वन उरधिकारी ने असमर्थता प्रकट कर दी। सब लोग निराश होकर लौट आए। तब यह योजना बनाई गई कि सब मिलकर जिलाधिकारी महोदय से मिलें, वे पर्यावरण प्रेमी भी हैं। जबसे उन्होंने जिले की कमान सँभाली है, तब से वृक्षारोपण अभियान चलाकर जगह-जगह पौधे लगवाए हैं।

सारे लोग एकजुट होकर जिलाधिकारी कार्यालय जा पहुँचे। इतने सारे लोगों को एक साथ देखकर पहले तो जिलाधिकारी को लगा कि कोई राजनीतिक जुलूस उनके विरोध में धरना देने चला आया है, लेकिन जब उन्होंने देखा कि कोई नारेबाजी नहीं हो रही है तो ध्यानपूर्वक उनकी बातें सुनीं। राजू ने तो इस दौरान यहाँ तक कह दिया कि ''सर, अगर आपने भी हमें निराश किया तो हम सब बरगद से चिपक जाएँगे, लेकिन

उसे कटने नहीं देंगे। ठेकेदार को पहले हमारे ऊपर कुल्हाड़ी चलानी पड़ेगी।'' सभी बच्चों ने राजू की हाँ में हाँ मिलाई।

बच्चों के मुख से बरगद बचाने की बात सुनकर जिलाधिकारी महोदय बहुत प्रसन्न हुए।

उन्होंने आश्वासन दिया, ''मैं इस बात का पता लगाऊँगा कि वन अधिकारी ने उस बरगद को काटने की अनुमति किस आधार पर दी है। मैं हर तरह से आप सभी के साथ हूँ।'' जिलाधिकारी महोदय की बातों से सभी को उम्मीद लगने लगी कि अब उनका बरगद बच जाएगा।

और फिर सभी ने अखबार में पढ़ा कि कॉलोनी के बराबर वाली जमीन सरकारी थी, जिस पर वह बरगद खड़ा था। वह जमीन अवैध ढंग से बिल्डर ने हथिया ली थी। इस काम में कई अधिकारियों ने उसका सहयोग किया था। वन अधिकारी ने भी पच्चीस हजार रुपए रिश्वत लेकर उस पेड़ को काटने की अनुमति दी थी। सभी के खिलाफ मुकदमा दर्ज हो गया था। खबर पढ़कर कॉलोनी वालों की और विशेष रूप से कॉलोनी के लड़कों की खुशी का ठिकाना नहीं रहा। एक बार फिर सभी इकट्ठे होकर जिलाधिकारी महोदय के जिंदाबाद के नारे लगाते हुए उनके कार्यालय गए और उन्हें फूलमालाओं से लाद दिया। इस अवसर पर जिलाधिकारी महोदय ने कहा कि इन फूलमालाओं के असली हकदार तो आप सभी हैं। अगर इसी प्रकार हम पेड़-पौधों के प्रति जागरूक हो जाएँ तो फिर इस धरती से कोई भी हरियाली को नहीं छीन सकता।

गली-२, चंद्रविहार कॉलोनी (नगला डालचंद),
क्वारसी बाईपास, अलीगढ़-२०२००१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०९२५८७७९७४४

रोती स्पर्धा और मुसकराती सहभागिता

बाल-कहानी

● वैशंपायन चतुर्वेदी

कहानी जंगल की है, भूख की है, प्रतिस्पर्धा की है; और विरोधाभासी मित्रता की भी है। सुंदरवन में एक लोमड़ी अपने मॉर्निंग वॉक पर टहल रही थी। तभी उसने देखा कि एक कछुआ और एक खरगोश भूख से तड़प रहे हैं। लोमड़ी को दया आई और एक व्यंग्य भी सूझा। लोमड़ी ने सोचा कि क्यों न इन दोनों की इस हालत का मजा लिया जाए। लोमड़ी उन दोनों के पास गई और बोली, ''क्या बात है, तुम दोनों इतने अधमरे से क्यों लग रहे हो, तुम्हारे इस हाल का क्या कारण है? मुझे बताओ, अपना मित्र समझकर।''

कछुए और खरगोश ने एक साथ कहा, ''हमें दो दिन से आहार नहीं मिला है, हम भूख से व्याकुल हैं। पेट की अँतड़ियाँ ऐंठ रही हैं। हाल बहुत बुरा है।''

लोमड़ी ने गाजर और कुछ पत्ते दिखाकर प्रलोभन दिया और कहा, ''यह सब तुम्हारा आहार बन सकता है। बशर्ते तुम दोनों एक प्रतिस्पर्धा खेलो और विजेता बनो।'' लोमड़ी चटखारे लेते हुए बोली, ''तुम दोनों यहाँ से उस टापू के पार जाकर नदी के रास्ते वापस आओ। तुम दोनों में से जो भी जीतेगा, मैं उसे यह खाने का सामान दे दूँगी।''

लोमड़ी के इतना कहते ही दोनों दौड़ पड़े प्रतिस्पर्धा के लिए। कुछ देर बाद खरगोश ने देखा कि कछुआ बहुत पीछे रह गया था, जिस वजह से वह हार भी सकता था। खरगोश को कछुए की नियति पर अफसोस हुआ। खरगोश वापस गया और कछुए से कहा, ''मित्र, लक्ष्य हम दोनों का ही भूख मिटाना है। जीत को समय के हवाले छोड़ते हैं, फिलहाल आओ मेरी पीठ पर बैठ जाओ, जिससे तुम भी पिछड़ नहीं सकोगे।'' खरगोश ने कछुए को अपनी पीठ पर बैठा लिया और आगे बढ़ गया। खरगोश जब टापू तक पहुँचा तब वह दुविधा में पड़ गया, क्योंकि वह तैर नहीं सकता था, तभी कछुए ने खरगोश से कहा, ''मित्र, बात फिर उसी भूख की है। जीत को उसी समय के हवाले छोड़ते हैं, फिलहाल आओ और तुम मेरी पीठ पर बैठ जाओ, नदी को हम साथ में पार करते हैं।''

कछुए ने खरगोश को अपनी पीठ पर बैठाया और नदी की ओर आगे बढ़ गया, इस तरह नदी भी पार हो गई। नदी पार कर धरातल पर आते ही खरगोश ने कछुए को अपनी पीठ पर बैठा लिया और आगे बढ़ गया। लक्ष्य के वृक्ष तक दोनों पहुँच गए। खरगोश और कछुए ने एक-दूसरे की मदद करते हुए लोमड़ी की ओर देखा। संपूर्ण घटना देखकर लोमड़ी भावुक हो गई। सारी गाजर और पत्ते उन्हें खाने को दे दिए। कुछ देर बाद लोमड़ी ने भावुक स्वर में कहा, ''मैंने तो मनोरंजन स्वरूप तुम दोनों में स्पर्धा करवाई थी, लेकिन तुम दोनों ने अपने विवेक का परिचय देते हुए यह स्पर्धा पूरी की। मेरे इस तरह के परिहास के लिए मुझे क्षमा करो।''

कछुए और खरगोश ने उत्साह के साथ कहा, ''नहीं हमने आपके इस परिहास भरी स्पर्धा को पूरी तन्मयता के साथ खेल-भावना व प्रतिद्वंद्विता से खेला। भूख के आँसुओं को दबाया और मुसकराकर आगे बढ़े। फलस्वरूप हमारी भूख तो प्रतिस्पर्धा में खो गई और जब आहार मिला तो पता चला कि हम आपस में पक्के दोस्त बन गए।''

३/१६, कबीर नगर, दुर्गाकुंड
वाराणसी-२२१००५
दूरभाष : ०९४१५३८९७३१

कथा महाभारत के युग की

● प्रेम किशोर पटाखा

कथा महाभारत के युग की
गाथा बड़ी पुरानी है,
कुरुक्षेत्र के महासमर से
पहले रची कहानी है।

उस बालक का जन्म हुआ था
भीलों की इक बस्ती में,
एकलव्य था नाम भील का
रहता था निज मस्ती में।

श्रीगणेश

बड़ा हुआ तो धनुष कला में
करने पहुँचा श्रीगणेश,
द्रोणधाम के राजगुरु के
यहाँ शिष्य ने किया प्रवेश।

राजगुरु ने एकलव्य को
द्वारे से इनकार किया,
शिष्य आस लेकर के आया
इस पर नहीं विचार किया।

कथा शुरू

लेकिन उसने मान लिया था
मेरे तो बस आप गुरु,
एकलव्य और गुरु-द्रोण की
अब होती है कथा शुरू।

खड़ी करी मिट्टी की मूरत
गुरुवर का दे रूप ललाम,
पहला तीर चलाया उसने
गुरुद्रोण का लेकर नाम।

गुरुकृपा

श्रद्धा, लगन, समर्पण मन में
गुरुकृपा का पावन योग,
शीघ्र कला में निपुण हो गया
मिला उसे ऐसा संयोग।

एक बार हस्तिनापुरी के
निकले पांडव राजकुमार,
एकलव्य की कला देखकर
चकित हुए मन में सुकुमार।

बाणों की वर्षा

जैसे वेग वायु में होता
तीर इस तरह छोड़े थे,
बाणों की वर्षा कर उसने
रोके उनके घोड़े थे।

लगे सोचने कौन धुनर्धर
और कौन इसके गुरुवर,
गुरु द्रोण का नाम सुना तो
लगे काँपने थर-थर-थर।

गुरु मूर्ति

यह कैसे संभव हो सकता
सुनकर के बुद्धि चकराई,
एकलव्य ने गुरु द्रोण की
बनी मूर्ति दिखलाई।

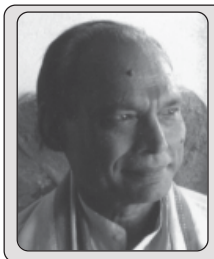

जाने-माने बाल रचनाकार। दर्जनों बालगीतों की पुस्तकें, कहानियाँ, कॉमिक्स, फिर हास्य-व्यंग्य (गद्य-पद्य) दोनों में विपुल लेखन।

खबर मिली गुरुवर को इसकी
पहुँच गए तत्काल वहीं,
एकलव्य को देख सामने
आया हो भूचाल वहीं।

धनुष कला

धनुष कला में सिद्ध हो गए
बोले—पास परीक्षा की,
सम्मुख खड़े तुम्हारे गुरुवर
घड़ी यही है दीक्षा की।

एकलव्य निज शीश झुकाकर
खड़ा दीक्षा देने को,
टाल नहीं सकता था पलभर
गुरुदेव के कहने को।

गुरुवर का सम्मान

एकलव्य ने पलभर में ही
मनचाहा यह दान दिया,
काट अँगूठा श्रीगुरुवर को
देकर के सम्मान किया।

एकलव्य की गाथा पढ़कर
लगा सोचने वह पाठक,
गुरुवर को दे दिया अँगूठा
शिष्य रहा आज्ञा पालक।

स्वप्न-हंस

मची खलबली उसके मन में
नहीं मिला उसको उत्तर,

नींद उड़ाकर उसे ले गई,
स्वप्न-हंस के पंखों पर।

भव्य भवन के सम्मुख पहुँचा
द्वार पाल तैयार खड़े,
घूम रहे सैनिक के दल-बल
चौकन्ने होशियार बड़े।

जय-जयकार

पलक झपकते ही वह पाठक
भव्य भवन के अंदर था,
जय-जयकार गुरु की होती,
मिला-जुला उनका स्वर था।

तभी अचानक सिंहासन से
गुरु द्रोण की गई नजर,
गुरुवर श्री साक्षात् विराजे
थे ऊँचे सिंहासन पर।

किया इशारा

किया इशारा गुरु द्रोण ने
पास बुलाया बिठलाया,
कहो कहाँ से हुआ आगमन
कौन तुम्हें लेकर आया?

भोलेपन से उस बालक ने
प्रश्न वही तत्काल किया,
गुरुदीक्षा में लिया अँगूठा
संकट में है डाल दिया।

प्रश्न यही था

प्रश्न यही था एकलव्य से
काट अँगूठा माँगा क्यों?
मुझे बताओ श्री गुरुवरजी
भाग्य शिष्य का ऐसा क्यों?

प्रश्न सुना जब श्री गुरुवर ने
चेहरे पर मुसकान खिली,
बोले, हाँ इससे पहले भी
मुझे शिकायत यही मिली।

छाप-अँगूठा

एकलव्य था वीर-बहादुर
भोला मगर निरक्षर था,
समझ नहीं पाया बेचारा
अभिप्राय क्या गुरुवर का।

एकलव्य दे मुझे अँगूठा
यह मेरी कब इच्छा थी,
निरक्षर था छाप अँगूठा
मिली न उसको शिक्षा थी।

सच पूछो तो

सच पूछो तो मैंने उससे
वही अँगूठा माँगा था,
बनकर नहीं अँगूठा रहना
तीर यहाँ पर मारा था।

लेकिन वह मेरे कहने का
समझ नहीं पाया था अर्थ,
मैं समझाता इससे पहले
काट अँगूठा किया अनर्थ।

आँख खुल गई

तभी अचानक आँख खुल गई
हुआ हवाई स्वप्न-महल,
और इस तरह कथा बन गई
इस सवाल का पाया हल।

जो रहते हैं छाप अँगूठा
पाप नहीं इससे बढ़कर,
आओ मिलकर दोस्त बनाएँ
पढ़ें-गुनें 'अ' से अक्षर।

४३, लक्ष्मीपुरी, सराय हरीम
अलीगढ़-२०२००१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०९८९७०६७२७६

शिशु गीत

गीत

● अरशद खान

सुबह

सुबह-सवेरे गुनगुन करते
भौंरे आए बाग,
सोई कलियाँ अँगड़ाई ले
गईं फटाफट जाग।
बुलबुल आई, बड़ी चुलबुली
लगी सुनाने गीत,
पत्ते देने लगे ताल सब
गूँज उठा संगीत।

ऐसा पेड़

एक डाल पर फले संतरा
और एक पर आम,
एक डाल पर हो चिलगोजा
दूजी पर बादाम।
एक पेड़ में सारी चीजें
काश कभी लग पाएँ!
कहाँ बची अब जगह पास जो
इतने पेड़ लगाएँ?

अक्कड़-बक्कड़

अक्कड़-बक्कड़ बड़े भुलक्कड़
मेरे प्यारे दादाजी,
हमको टॉफी दिलवाने का
रखते याद न वादा जी।
लेने जाते हैं जब सब्जी
ले आते हैं दही-बड़े,
छड़ी सुलाते हैं बिस्तर पर
खुद सो जाते खड़े-खड़े।

मौज उड़ाएँगे

चींटी रानी, चींटी रानी!
हमें जरा तुम बतलाओ,
कहाँ रखे हैं माँ ने लड्डू,
भेद जरा यह समझाओ।
नहीं किसी को पता चलेगा,
चुपके-चुपके जाएँगे,
मैं खाऊँगा, तुम भी खाना
मिलकर मौज उड़ाएँगे।

हिंदी विभाग, जी.एफ. कॉलेज,
शाहजहाँपुर-२४२००१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०९८०७००६२८८

इक्कीसवीं सदी में हिंदी बाल साहित्य : स्थिति और चुनौतियाँ

● **ओमप्रकाश कश्यप**

स्मृति अंतराल अधिक नहीं है। सबकुछ जैसे हमारी आँखों के सामने हो। इक्कीसवीं शताब्दी का स्वागत लोगों ने पूरे हर्षोल्लास के साथ किया था। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में पिछली शताब्दी ने जो लक्ष्य सिद्ध किए थे, उनसे उत्साहित लोग यह मान चुके थे कि आनेवाली शताब्दी वैज्ञानिक क्रांति की होगी। वर्तमान शती के पहले दशक में देखें तो लगता है कि इसने हमें निराश भी नहीं किया है। मात्र दस वर्ष की अवधि में हम विकास की इतनी लंबी यात्रा कर आए हैं, जितनी पहले पूरी शताब्दी में असंभव थी। कंप्यूटर, इलेक्ट्रॉनिक्स, संचार, अंतरिक्ष, आवास, स्वास्थ्य, चिकित्सा, यातायात जैसे अनेक क्षेत्र हैं, जिनमें विकास की गति इतनी तेज है, मनुष्यता के इतिहास में उतनी शायद ही कभी रही हो। हम यह भी नहीं भूले हैं कि साहित्य के लिए इक्कीसवीं सदी की दस्तक आशंकाओं भरी थी। दूरदर्शन और कंप्यूटर को शब्द पर संकट के रूप में लिया जा रहा था। माना जा रहा था कि तेज गति जीवन और आपाधापी में लोगों के पास शब्द से संवाद करने का समय ही नहीं बचेगा। लगातार बढ़ते चैन पाठकों को पुस्तकों से दूर कर देंगे। पर जो हो रहा है, वह उस समय की हमारी कल्पना से एकदम परे है। आज इंटरनेट के कारण टेलीविजन का खतरा बढ़ चुका है, जबकि शब्द-साधकों और पाठकों के लिए जो महँगी होने के कारण पुस्तकों से कटने लगे थे, इंटरनेट पर मौजूद साहित्य कागज पर छपे साहित्य का सार्थक विकल्प बनता जा रहा है। वहाँ मौजूद नेट-पुस्तकों का खजाना पुस्तक-प्रेमियों के लिए अनूठा वरदान है। दुर्लभ मानी जानेवाली पुस्तकें मात्र एक क्लिक पर मुफ्त उपलब्ध हैं। साहित्य और बौद्धिक संपदा के लिए नए बाजार तलाशने की कोशिश भी जोर-शोर से जारी है। संचार-क्रांति ने साहित्य और पाठक की दूरी को समेट दिया है। अब उत्तर में रह रहे दक्षिण भारतीय पाठक को यह चिंता करने की आवश्यकता नहीं है कि उसकी भाषा की पुस्तक और पत्रिकाएँ उसके आसपास उपलब्ध नहीं। प्राय: सभी अच्छी पत्रिकाओं के इंटरनेट संस्करण मौजूद हैं, जिन्हें सामान्यत: नि:शुल्क उतारा जा सकता है। साहित्य विद्युतीय त्वरा से हम तक पहुँच रहा है। भाषाएँ क्षेत्रीय सीमाएँ लाँघकर विश्वमंच पर संवाद कर रही हैं। शब्द के नए-नए रूपाकार सामने आ रहे हैं। इंटरनेट की लोकप्रियता का आलम यह है कि चाहे वह लेखिका हो, पाठक हो अथवा प्रकाशक, सभी वहाँ अपना नाम-पता खोजने को लालायित रहते हैं। नई तकनीक का लाभ उठाने में बाल साहित्य भी अछूता नहीं है। इंटरनेट पर नए-नए जालपट्टों (वेबसाइटों) एवं जालपट्टिकाओं (ब्लॉगों) के आगमन से बाल साहित्य की उपलब्धता बढ़ी है। वहाँ बाल साहित्य की प्रत्येक विधा कहानी, कविता, कॉमिक्स, चुटकुले, संस्मरण, यात्रा-वृत्तांत, लेख आदि विपुल मात्रा में मौजूद हैं। यानी आधुनिक तकनीक बाल साहित्य के लिए उस रूप में तो हानिकर सिद्ध नहीं हुई है, जैसा आमतौर पर सोचा जा रहा था। तो भी सवाल उठता है कि तकनीकी बदलावों के साथ-साथ बाल साहित्य के रूपाकार में जो बदलाव आ रहे हैं, क्या वे हमारी कल्पनाओं के अनुरूप हैं? विज्ञापनों की भूख से बिलबिलाता हमारा आधुनिक मीडिया, जिसमें प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक दोनों सम्मिलित हैं, बाल साहित्य के नाम पर जो परोस रहा है, क्या वही हमारी अपेक्षा थी? बाल साहित्यकारों का एक वर्ग वैज्ञानिक रचनाओं का हिमायती रहा है। पर विज्ञान और तकनीक के नाम पर जो सूचनावाद बाल साहित्य में फल-फूल रहा है, क्या वही उनका लक्ष्य था? क्या बाल साहित्य की पुस्तकों का सुंदर-सजीला होना ही उनकी उत्कृष्टता की कसौटी माना सकता है? और यदि बाजार के दबाव में कुछ ऐसा हो रहा है, जो हमारी कल्पना के विरुद्ध है, जो हमने कभी सोचा तक नहीं था, तो क्या उसे रोका जा सकता है? क्या हमारे बाल साहित्यकार इस अनपेक्षित चुनौती से जूझने के लिए तैयार हैं?

सुपरिचित साहित्यकार। उपन्यास, कहानी, लघुकथा, व्यंग्य, लेख, विज्ञान, नाटक, कविता, बालसाहित्य, समाज, सहकारिता, जीवनी आदि विधाओं में नियमित लेखन-प्रकाशन; अभी तक तीस पुस्तकें प्रकाशित। साप्ताहिक समाचार-पत्रों में व्यंग्य कॉलम तथा मासिक पत्रिका 'सहकार संचय' में सहकारिता आंदोलन पर करीब तीन साल तक नियमित लेखन। हिंदी अकादमी, दिल्ली द्वारा कविता पुस्तक 'वृक्ष हमारे जीवनदाता' के लिए 'बाल एवं किशोर साहित्य सम्मान'।

बाजार कोई नई अवधारणा नहीं है। करीब पाँच हजार वर्षों से जब साहित्य केवल श्रुति का हिस्सा था, सभ्यता ने पाँव पसारने शुरू ही किए थे। उस समय बाजार की भूमिका साहित्य के प्रवर्तक की थी। व्यापारियों के काफिले अपने साथ अपनी जमीन का साहित्य और कलाएँ भी ले जाते थे। पंचतंत्र, कथा सरित्सागर, वेताल-पच्चीसी, सिंहासन बत्तीसी, अलिफ-लैला, मुल्ला नसरुद्दीन, किस्सा चार दरवेश, गुलीवर की यात्राएँ,

जातक कथाएँ, सिंदबाद जहाजी जैसी कालजयी रचनाएँ बाजार द्वारा प्रेरित सांस्कृतिक-साहित्यिक आदान-प्रदान के कारण ही विश्व-साहित्य की धरोहर बनी हैं। उस समय संस्कृति के सम्मिलन के प्राय: दो ही रास्ते थे। वे यायावर जिज्ञासु, जो ज्ञान एवं सत्य की खोज में धरती का कोना-कोना छानते रहते थे। दूसरे वे व्यापारी, जो काफिलों के रूप में न केवल वस्तुओं बल्कि साहित्य और संस्कृति का भी आदान-प्रदान करते थे। उस समय तक दोनों परस्पर पूरक थे। बाजार साहित्य और संस्कृतियों के सम्मिलन में अहम भूमिका निभाता था तो साहित्य एवं कलाएँ उसे व्यापार के नए अवसर तथा विश्वसनीयता प्रदान करते थे। फिर ऐसा नया क्या है, जो चिंता का विषय बना है, जिससे साहित्य और कलाओं पर संकट की बात समय-समय पर उठती रहती है। वस्तुत: बाजार और बाजारवाद में बहुत अंतर है। बाजार मानव-समाज के विकास को दरशाता है, जबकि बाजारवाद पूँजीवादी व्यवस्था की देन है, उस व्यवस्था की देन है, जो मनुष्य का अवमूल्यन कर, उसको जड़ उपभोक्ता में बदल देना चाहती है। उसके साथ वही व्यवहार करती है, जो किसी जड़ वस्तु अथवा पशु के साथ किया जा सकता है। यह कार्य वह शासन और अपने भरोसे के अर्थशास्त्रियों की मदद से करती है। चूँकि सांस्थानिक धर्म अवसर मिलते ही निरंकुश सत्ता की भाँति व्यवहार करने लगता है, अत: बाजारवाद एवं तज्जनित सांस्कृतिक अवमूल्यन का रोना रोते-रोते धार्मिक संस्थाएँ भी प्रकारांतर में उसके पोषण का ही काम करती हैं। विषय गंभीर है तथा विशद विवेचना की अपेक्षा रखता है। लेख की मर्यादा के निर्वहन में हम वर्तमान चर्चा को मात्र निम्नलिखित बिंदुओं तक सीमित रखेंगे—

१. क्या बाल साहित्य की रचना को प्रौढ़ पाठकों की लिखी गई रचना की अपेक्षा अनिवार्य रूप से छोटा होना चाहिए?
२. बाल साहित्य की पुस्तकों में चित्र महत्त्वपूर्ण हैं अथवा कथ्य? प्रकाशन क्षेत्र में तकनीक की मदद से पुस्तक को सुंदर और सजीला बनाने के प्रयासों ने क्या प्रकाशकों को कथ्य के प्रति उदासीन बनाया है?
३. क्या बाल साहित्य में बढ़ते सूचनाओं के दबाव पर नियंत्रण जरूरी है?
४. क्या बाल साहित्य लैंगिक भेदभाव का शिकार है? यदि हाँ, तो उसमें बाजारवाद की क्या भूमिका है?

साहित्यकारों द्वारा बाजार के समक्ष समझौतावादी रवैए की शुरुआत उस समय से मानी जानी चाहिए, जब उन्होंने बजाय विषयवस्तु के, पत्र-पत्रिकाओं में उपलब्ध स्पेस अथवा प्रकाशक की अपेक्षाओं को देखते हुए लिखना आरंभ किया था। वरिष्ठतम लेखक भी रचना आमंत्रित करनेवाले संपादक से उसकी अनुमानित शब्द-संख्या पूछना नहीं भूलते थे, ताकि निर्धारित सीमा के भीतर कथानक का ढाँचा खड़ा किया जा सके। साहित्यिक पांडुलिपियों की पृष्ठ संख्या प्रकाशक की माँग पर, उसकी जरूरत को देखकर तय की जाने लगी थी। वह साहित्य के नाम पर रचनाओं का बोनसाई संस्करण बनाने की शुरुआत थी, जो आज भी बदस्तूर जारी है। आज भी साहित्यकार से अपेक्षा की जाती है कि वह पाठकों की रुचि के अनुकूल ऐसी रचना लिखकर दे, जो अखबार में उपलब्ध स्पेस की मर्यादाओं का पालन करती हो, जिसे पूर्व-निर्धारित खाने में सेट किया जा सके। इसमें कोई संदेह नहीं है कि पत्र-पत्रिकाओं की भी एक सीमा है, बाजार की मजबूरियों और जनरुचि का खयाल रखते हुए प्रत्येक विधा को सीमित स्थान देना उनकी विवशता हो सकती है। परेशानी तब खड़ी होती है, जब लेखक-संपादक ही यह मानने लगें कि बच्चों की रचनाओं, यथा कहानी, कविता, उपन्यास आदि को अनिवार्य रूप से छोटा होना चाहिए···कि बच्चों का मानसिक सामर्थ्य उतना नहीं कि वे बड़ी रचनाओं को पचा सकें। संपादकों-प्रकाशकों की यह विवशता हो सकती है कि वे अपने विभिन्न उम्र, वर्ग, क्षेत्र और संस्कृति के पाठकों की रुचि के अनुरूप साहित्य का प्रकाशन करें। किंतु यह मान लेना कि बच्चे छोटी रचनाएँ पढ़ना पसंद करते हैं या पाठ्य-पुस्तकों के दबाव में उनके पास बड़ी रचनाएँ पढ़ने का समय ही नहीं होगा, अपने पूर्वग्रहों तथा कमजोरियों को पाठक पर थोपना है। बाजारवाद पहले बड़ों के, जो अर्थोपार्जन में सक्षम हैं, अपने प्रभाव में होता है। जब तक वे उसके आगे समर्पण न करें, तब तक वह बच्चों तक पहुँच ही नहीं सकता। उल्लेखनीय है कि लोक साहित्य के रूप में पहचानी जानेवाली प्राय: सभी क्लासिक रचनाएँ, जो हमारे संस्कारों का बड़ा हिस्सा गढ़ती हैं, बड़ों के साथ बच्चों में भी समान रूप से लोकप्रिय रही हैं। बच्चे नल-दमयंती, रामायण, महाभारत, किस्सा चार दरवेश, हातिमताई आदि को भी उतने ही चाव से पढ़ते, सुनते थे, जितने कि बड़े कथा सरितसागर, जातक कथाएँ, वैताल पचीसी, सिंहासन बतीसी जैसी रचनाएँ भी उतनी छोटी नहीं हैं, जितनी आजकल के समाचार-पत्रों में प्रकाशित की जाती हैं। उनकी लोकप्रियता का कारण यह भी है कि उनमें एक तारतम्यता है। एक कहानी पूरी होते ही दूसरी के शुरू होने का संकेत दे जाती है। साथ ही उनमें पाठक को बाँधे रखनेवाली किस्सागोई है, जो उपन्यास जैसा आनंद देती थी। परिणामस्वरूप बालक का मन रचना में डूबा रहता था। अब बालक कथा-कहानी में जब तक डूबने का प्रयास करता है, तब तक कहानी पूरी हो जाती है। कहानी में न तो परिवेश होता है, न चरित्र-चित्रण के लिए समय। बिना शैली और परिवेश की चिंता के सबकुछ ऐसे परोसा जाता है, जैसे फास्टफूड।

कुछ समय पहले तक पत्र-पत्रिकाओं द्वारा औसत १५०० शब्द संख्या की बाल कहानी आमंत्रित की जाती थी। अब यह स्पेस भी पाँच-सात सौ शब्दों में सिमटता जा रहा है। शब्द-संख्या का निर्धारण करते समय बालकों

लीजेंड फिल्मकार सत्यजीत रे ने बाल साहित्य लेखन को गंभीरता से लिया था। बच्चों के मनोविज्ञान तथा उनकी रुचि का खयाल रखते हुए उन्होंने कई लोकप्रिय पुस्तकों की रचना की। 'फेलुदा', 'प्रोफेसर शंकु', 'फाटिकचंद' उनकी अत्यंत लोकप्रिय कृतियाँ हैं। इनमें 'फेलुदा' और 'प्रोफेसर शंकु' कहानी संग्रह हैं। 'फेलुदा' शीर्षक से उन्होंने जासूसी, रहस्य और रोमांच से भरपूर एक के बाद एक ३५ कहानियों की रचना की थी। 'प्रोफेसर शंकु' उनकी विज्ञान-आधारित कहानियों का संकलन है। हिंदी में ऐसा प्रयोग मुझे याद नहीं।

की रुचि या मनोविज्ञान का कोई ध्यान नहीं रखा जाता, जबकि बालक कहानी का आकार, उसकी शब्द संख्या क्या हो, यह कभी नहीं देखता। वह उसकी रोचकता और विषयवस्तु को देखता है। इसलिए दादा-दादी के लंबे, कई-कई रातों तक चलनेवाले किस्से बच्चों में अपेक्षाकृत अधिक लोकप्रिय हुआ करते थे। हमारे लोक साहित्य का अधिकांश हिस्सा आज भी वही घेरते हैं। परीकथाओं को आधुनिक परिवेश में रचनेवाले महान् डेनिश बाल साहित्यकार हेंस क्रिश्चिन एंडरसन की कई बाल कहानियाँ ११०००-१३००० शब्दों की हैं और वे बच्चों में पर्याप्त लोकप्रिय रही हैं। उनकी कहानी 'भविष्य के जूते' तथा 'बर्फ की रानी' क्रमश: १२,६४४ तथा ११,९३० शब्दों की हैं। उनकी कहानियों की औसत शब्द संख्या ३१०० है। हिंदी के पत्र-पत्रिका तो प्रौढ़ साहित्य की इतनी बड़ी रचना नहीं छापते। अब जरा हिंदी के बाल उपन्यासों अथवा बच्चों के उपन्यास के नाम पर छापी गई रचनाओं का भी तुलनात्मक अंतर देखिए। हिंदी के वरिष्ठतम बाल साहित्यकारों में से एक, जो शताधिक बाल उपन्यासों के लेखक होने का दावा करते हैं, के औसत उपन्यास मोटे टाइप में छपे ३०-३५ पृष्ठों, यानी अधिक-से-अधिक १२,०००-१३,००० शब्दों में सिमटे हैं। अपनी प्रतियोगिताओं में चिल्ड्रन बुक ट्रस्ट जो पांडुलिपियाँ आमंत्रित करता है, उनमें बाल उपन्यास के लिए २५,०००-३०,००० शब्दों (मोटे टाइप में अस्सी से सौ पृष्ठ) की सीमा रखी जाती है। इनके सापेक्ष अंग्रेजी की क्लासिक रचनाओं की लंबाई देखते हैं। लेविस कैरो के कालजयी उपन्यास 'एलिस इन वंडरलैंड', जिसका प्राय: दुनिया की हर भाषा में अनुवाद हो चुका है, जिस पर दर्जनों फिल्में भी बन चुकी हैं, का २००७ में प्रकाशित संस्करण की पृष्ठ संख्या २०४ है। ऐसी ही महान् रचना डेनिय डेफो की 'राबिंसन क्रूसो' का २००८ में नया संस्करण आया है, पृष्ठ संख्या है २४४। 'दि एडवेंचर ऑफ टाम सायर' नामक उपन्यास के लेखक मार्क ट्वेन के असली नाम सैम्युअल लेंगहार्न क्लेमेंस के बारे में बहुत कम लोग जानते होंगे। वह अपने उपनाम से ही पूरी दुनिया में प्रसिद्ध है। यह उपन्यास पहली बार १८७६ में प्रकाशित हुआ था, पृष्ठ संख्या थी—२७५। पुस्तक इतनी लोकप्रिय हुई कि ट्वेन को इसका अगला हिस्सा लिखना पड़ा। आठ वर्ष बाद पुस्तक का अगला भाग 'एडवेंचर ऑफ हकलबेरी फिन' (१८८४) प्रकाशित हुआ तो वह पहले से भी अधिक स्थूलकाय था। ३६६ पृष्ठ संख्या की इस मोटी पुस्तक के बारे में अमेरिका के महान् साहित्यकार नोबल विजेता अर्नेस्ट हेमिंग्वे ने अपनी पुस्तक 'ग्रीन हिल्स ऑफ अफ्रीका' में लिखा है—''आधुनिक अमेरिकी साहित्य का स्रोत एक ही पुस्तक है—मार्क ट्वेन की 'हकलबेरी हिन' ये सभी विश्व क्लासिक्स हैं। फिर भी कहा जा सकता है कि ये उदाहरण पुराने हैं। तो चलिए इन्हें छोड़ देते हैं। हम 'हैरी पॉटर' को भी नहीं लेंगे, जिसके एक के बाद एक सात खंड आ चुके हैं और जिसने लोकप्रियता की सभी सीमाओं को तोड़ा है। कुछ लोगों के लिए वह असाहित्यिक रचना है। मगर फिलिप पुमेन का नाम तो आधुनिक लेखकों में सम्मान के साथ लेना पड़ेगा। अनेक प्रतिष्ठित पुरस्कारों के विजेता पुमेन ने 'हिज डार्क मैटीरियल्स' शृंखला की तीन पुस्तकें लिखी हैं। उनमें 'नॉदर्न लाइट' (१९९५) ३९९ पृष्ठ, 'दि सबटेल नाइफ' (१९९७) ३४१ पृष्ठ तथा 'दि अंबर स्पाईग्लास (२०००) ५१८ पृष्ठ की हैं। बाल उपन्यास की इतनी बड़ी कृति हिंदी में शायद ही किसी ने लिखी है। कम-से-कम मुझे तो याद नहीं आती। यहाँ लेखक पर अंग्रेज प्रेमी होने का आरोप लगाया जा सकता है! लीजेंड फिल्मकार सत्यजीत रे ने बाल साहित्य लेखन को गंभीरता से लिया था। बच्चों के मनोविज्ञान तथा उनकी रुचि का खयाल रखते हुए उन्होंने कई लोकप्रिय पुस्तकों की रचना की। 'फेलुदा', 'प्रोफेसर शंकु', 'फाटिकचंद' उनकी अत्यंत लोकप्रिय कृतियाँ हैं। इनमें 'फेलुदा' और 'प्रोफेसर शंकु' कहानी संग्रह हैं। 'फेलुदा' शीर्षक से उन्होंने जासूसी, रहस्य और रोमांच से भरपूर एक के बाद एक ३५ कहानियों की रचना की थी। 'प्रोफेसर शंकु' उनकी विज्ञान-आधारित कहानियों का संकलन है। हिंदी में ऐसा प्रयोग मुझे याद नहीं। इस क्षेत्र में कुछ लेखकों ने अवश्य ही सराहनीय काम किया, पर अधिकांश की वर्णनात्मकता के बोझ से दबी रचनाएँ पाठकों पर अपेक्षित प्रभाव नहीं छोड़ पातीं। 'फाटिकचंद' किशोरोपयोगी उपन्यास है, इसका हाल ही में पेपरबैक संस्करण आया है, जो अपने आकार, कथ्य और रोचकता में अंग्रेजी की उपर्युक्त पुस्तकों से टक्कर लेता है। इसलिए यह प्रश्न स्वाभाविक है कि जब अंग्रेजी और बँगला में बच्चों के स्थूलकाय उपन्यास तथा लंबी कहानियाँ चल सकती हैं तो भारत में क्यों नहीं? अब यह तो कोई नहीं मानेगा कि हिंदी पढ़नेवाले बच्चे इतने मंदबुद्धि हैं कि वे लंबे कथानक वाली रचनाओं को पचा ही नहीं सकते।

दरअसल सारा खेल बाजारवादी मानसिकता का है। रचना के पर कतरने का काम यह कहकर किया जाता है कि आधुनिक भागम-भाग के युग में बच्चों के पास बड़ी पुस्तकों को पढ़ने का समय ही नहीं है। यदि ऐसा है तो भी यह बाजारवादी मानसिकता का सामना करने के बजाय उसके समक्ष हथियार डाल देने जैसा है। इसमें साहित्यकार की आत्मविश्वास की कमी झलकती है। यदि रचना का लप्पु कलेवर ही उसकी पठनीयता की कसौटी होता तो लघुकथा को हिंदी साहित्य की सर्वाधिक लोकप्रिय विधा होती। सबसे ज्यादा पाठक कविताओं के होने चाहिए थे। जबकि आज भी 'कहानी' और 'उपन्यास' सर्वाधिक पढ़ी जानेवाली विधाएँ हैं। दरअसल, शब्द-संख्या के आधार पर किसी भी विधा का निर्णय करना अनुचित है। हर विधा की एक तकनीक होती है। रचना का पैमाना उसकी कथावस्तु और प्रस्तुतीकरण होना चाहिए। कहानी-उपन्यास यदि रोचक और उसका विषय बच्चों की पसंद के अनुकूल होगा तो वे उसकी ओर आकर्षित होंगे ही। बाजार की अपेक्षाओं के अनुसार जो बाल साहित्य प्रकाशित होता है, वह बच्चों में पढ़ने की तात्कालिक भूख भले शांत कर दे, किंतु उन्हें पढ़ने का संस्कार देने में असमर्थ सिद्ध होता है। परिणामस्वरूप, उसका वैसा प्रभाव नहीं पड़ता, जो एक साहित्यिक रचना से अपेक्षित होता है। संस्कार के अभाव में बालक साहित्यिक पुस्तक के साथ भी उपभोक्ता वस्तु जैसा ही व्यवहार करता है। जिससे उसकी प्रभावोत्पादकता घट जाती है। अतएव, बाल साहित्यकारों से अपेक्षा की जा सकती है कि वे समाचार पत्र-पत्रिकाओं के कॉलम को ध्यान में रखकर तो लिखें ही, उससे इतर कुछ अपने और अपने पाठकों के लिए भी अवश्य

लिखें, ताकि बच्चों के लिए सिर्फ पुस्तकें ही नहीं, बेहतर रचनाएँ भी सामने आ सकें।

सभी जानते हैं कि साहित्य शब्द से गढ़ा जाता है। उसमें महत्ता उस विचार की होती है, जिसे साहित्यकार सर्वकल्याणकारी भावना के साथ रचना में समाहित करता है और जिसको पाठक रचना के सत्त्व के रूप में उसके आस्वादन के साथ प्राप्त करता है। विचार सहज, सरल एवं संप्रेषणीय हों, बाल पाठक शब्दों की ओर आकर्षित होकर उससे जुड़ें, ताकि उनके माध्यम से लेखक की विचारधारा से परिचित हों, उसके साहित्यत्व को आत्मसात् कर सकें, जो रचना की आत्मा है—इसके लिए चित्रों की आवश्यकता पड़ती है, विशेषकर बच्चों और उन सरल बुद्धि बड़ों के लिए, जिन्हें शब्दों से गुजरने का अभ्यास कम है। साहित्य में चित्रों और शब्द की अटूट मैत्री को पहली बार जॉन अमोस कॉमिनियस (१५९२-१६७०) ने पहचाना था। बच्चों की आवश्यकता को ध्यान में रखकर उस चेक लेखक ने 'ऑरबिस पिक्चर्स' (वस्तु जगत्) शीर्षक से सचित्र पुस्तक तैयार की थी। उसका पहला संस्करण १६५८ में प्रकाशित हुआ था। उसमें पहली बार कथ्य को समझाने के लिए चित्रों की मदद ली गई थी। असल में बच्चों का पहला सचित्र शब्दकोश था, जिसमें चित्रों से बच्चों को उनके आसपास के संसार के बारे में बताया गया था। वे चित्र सादा थे और उन्हें बहुत कलात्मकता से बनाया भी नहीं गया था। साधारण छापे से बस टाप दिया गया था तो भी उसकी ऐतिहासिक महत्ता है। लगभग साढ़े तीन सौ वर्ष पहले जब छापेखाने का विकास हुआ, तब तक देश शब्द-क्रांति की ओर बढ़ चुका था। कालांतर में चित्रों का रूप-रंग और सँवरा। पेशेवर चित्रकारों ने मोर्चा सँभाला। अब रचना केवल शब्दों से ही संवाद नहीं करती थी, बल्कि वह चित्रों के माध्यम से भी बोलने लगी थी। किंतु उन चित्रों की एक मर्यादा थी। वे शब्दों के साथ मौजूद तो रहते थे। मगर कभी उन पर भारी नहीं पड़ते थे। दोनों अपनी समानांतर भूमिका में रहकर सिर्फ आयोजन रचते थे। जिन्हें चंदामामा के अंक याद हैं, नंदन और पराग को जिन्होंने पढ़ा है। वे शब्द और चित्र की अटूट जुगलबंदी को बेहतर समझ सकते हैं। वे जानते हैं कि चित्रकार की कूची का एक कोना किस प्रकार रचना का पूरक और संप्रेषक बन जाता है।

साहित्यिक पुस्तकों के प्रकाशन में व्यावसायिकता के कारण इधर एक प्रश्न उठने लगा है कि बाल साहित्य की पुस्तकों में चित्र महत्त्वपूर्ण हैं अथवा कथ्य ? इसमें कोई संदेह नहीं कि चित्र और शब्द यानी साहित्य, अभिव्यक्ति की अलग-अलग शैलियाँ हैं। दोनों ही कला हैं और परस्पर पूरक भी। उनमें कभी-कभी स्पर्धा भी देखी जा सकती है। चित्रकार की कूची का एक झोंका एक झटके में जो बात कह सकता है, संभव है उसका बयान करने के लिए लाखों शब्दों का लश्कर भी अपर्याप्त सिद्ध हो। दूसरी ओर शब्द-नाद के माध्यम से जो संदेश मस्तिष्क की शिराओं में प्रवेश करता है, चाक्षुस संदेश की अपेक्षा उसकी अनुगूँज लंबे समय तक रहती है। वह अधिक संप्रेषणीय एवं ग्राह्य होता है तथा जनसाधारण की पहुँच में भी। जबकि चित्रकार को परखने के लिए पारखी नजरों की जरूरत पड़ सकती है। कई बार तो पाठक कथ्य में इतना रम जाता है कि चित्रमय प्रस्तुतियों की ओर उसका ध्यान ही नहीं जाता। मगर यदि कथ्य कमजोर है तो इस बात की भी संभावना बनी रहती है कि बालक चित्रों को देखकर ही पुस्तक को किनारे रख दे।

अच्छा चित्र पुस्तक में बालक की रुचि जाग्रत् करता है। अत: बात जब साहित्य की हो तो उसमें शब्द और उनमें निहित कथ्य ही महत्त्वपूर्ण माना जाएगा। चित्र का काम तो विषय की संप्रेषणीयता को विस्तार देना, उसे सहज एवं चाक्षुस बनाना है। जहाँ तक बच्चों की पुस्तकों का सवाल है, आजकल अधिकांश चित्र कंप्यूटर द्वारा बनाए जाते हैं। यह कार्य आमतौर पर जिन कंप्यूटर-शिल्पियों से कराया जाता है, उनकी दक्षता कंप्यूटर से काम करने में होती है, न कि बाल साहित्य या बाल मनोविज्ञान को लेकर। इसलिए उनके द्वारा बनाए गए चित्रों में सतहीपन की झलक स्पष्ट दिखाई पड़ती है। वे चित्र चित्रों की निर्जीव रेखाओं और रंगों के संयोजन से आगे नहीं बढ़ पाते। जबकि रचना के साथ दिए गए चित्र की भूमिका केवल उसकी अभिव्यक्ति को सहज-संप्रेषणीय बनाना नहीं है, बल्कि उस अनकहे को भी सामने लाना है, जिसका बयान करते समय शब्द अकसर चूक जाते हैं। एक स्तरीय चित्र पाठक-दर्शक को सोचने के विविध आयाम देता है। आशय है कि बाल साहित्य की पुस्तकों में चित्र तो महत्त्वपूर्ण हैं, मगर वे कथ्य का स्थान नहीं हो सकते। किसी भी महान् साहित्यिक रचना के लिए एक अच्छा चित्र कथ्य एवं संदेश का पूरक हो सकता है, उसकी अनिवार्यता नहीं।

इसके बावजूद बाल साहित्य की पुस्तकों के प्रकाशन के समय प्रकाशक जितना उसके चित्रों पर परिश्रम करते हैं, कथ्य पर उतना नहीं करते। कथ्य को प्राय: संबंधित बाल साहित्यकार के लिए छोड़ दिया जाता है। हाल के वर्षों में तो कई प्रकाशकों को भी लेखक की भूमिका निभाते देखा गया है। वे चतुराईपूर्वक इंटरनेट या इधर-उधर से सामग्री जुटाकर उसको चित्रों के साथ सजा देते हैं। कंप्यूटर ने इस काम को और भी आसान कर दिया है। इससे संस्थान में दक्ष लेखकों और चित्रकारों का महत्त्व घटा है। परिणाम यह हुआ है कि चित्रों की आत्मा जाती रही। चित्रकार की कूची पहले हर चित्रों में प्राण-प्रतिष्ठा करती थी। अब वह माउस की बेजान सी क्लिक के भरोसे रह गया है। इसके कारण चित्र अब भावमय नहीं, रंगमय नजर आते हैं।

लगभग दो दशक पहले तक राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में बाल साहित्य की सामग्री की तुलना आजकल परोसी जा रही रचनाओं से करें। उन दिनों रचनाओं पर पुराकथाओं का गहरा प्रभाव था। उसके अलावा जो साहित्य इस श्रेणी में प्रमुखता से प्रकाशित किया जाता था, वह मुल्ला नसरुद्दीन, तेनालीराम, अकबर-बीरबल, सिंहासन बत्तीसी, कथा सरित्सागर, जातक कथाएँ और पंचतंत्र जैसे क्लासिकों से आता था। लिखित सामग्री के साथ-साथ बड़ी मात्रा में धारावाहिक रूप से चित्रकथाएँ भी छापी जाती थीं। उनका एक ही उद्देश्य होता था, बाल पाठकों को अपनी संस्कृति और परंपरा से परिचित कराना। यद्यपि साहित्यकारों का एक वर्ग चित्रकथाओं को बालकों के लिए हानिकर मानता था। यह माना जाता था कि कॉमिक्सों के अति मानवीय चरित्र बालकों को फंतासी के

बहाने यथार्थ से दूर ले जाएँगे, जिससे वे वास्तविक जीवन की समस्याओं का सामना करने में असमर्थ सिद्ध होंगे। असल में वह दौर यथार्थवाद से प्रेरित था, जिसकी पृष्ठभूमि में मार्क्सवादी प्रेरणाएँ थीं। हालाँकि उन्हीं दिनों परंपरावादी साहित्यकारों का भी एक वर्ग था, जो अपना त्राण महाकाव्यीय मिथकों, अंतर्कथाओं में देखता था, तो भी गत शताब्दी के समापन तक प्रगतिवादी बाल साहित्यकारों का एक बड़ा वर्ग पैदा हो चुका था, जिसका ध्येय बच्चों की प्रश्नाकुलता को तीव्र बनाना था। उनके प्रेरणास्रोत कथासम्राट् प्रेमचंद तथा सुदर्शन जैसे साहित्यकार थे, जिनकी किस्सागोई से भरपूर कहानियाँ, बच्चों के साथ-साथ बड़ों में भी समान रूप से लोकप्रिय थीं। एक और वर्ग था, जो पुराकथाओं के सपाट प्रदर्शन की काट विज्ञान कथाओं में देखता था। ये दोनों ही धाराएँ साथ-साथ विकसित हुई थीं, तथापि वैज्ञानिक-बोध एवं कल्पनाशीलता की युति अभाव में हिंदी विज्ञान-साहित्य अपेक्षित सफलता अर्जित न कर सका, जबकि कल्पना और यथार्थ के समन्वय से बाल साहित्य की रचना करनेवाले बाल साहित्यकारों, जैसे जहूर बख्श, मस्तराम कपूर 'उर्मि', डॉ. जाकिर हुसैन, सुदर्शन आदि ने हिंदी को कई अनूठी रचनाएँ दी हैं, जिनमें किस्सागोई शैली का भरपूर उपयोग किया गया था।

अच्छा चित्र पुस्तक में बालक की रुचि जाग्रत् करता है। अतः बात जब साहित्य की हो तो उसमें शब्द और उनमें निहित कथ्य ही महत्त्वपूर्ण माना जाएगा। चित्र का काम तो विषय की संप्रेषणीयता को विस्तार देना, उसे सहज एवं चाक्षुस बनाना है। जहाँ तक बच्चों की पुस्तकों का सवाल है, आजकल अधिकांश चित्र कंप्यूटर द्वारा बनाए जाते हैं। यह कार्य आमतौर पर जिन कंप्यूटर-शिल्पियों से कराया जाता है, उनकी दक्षता कंप्यूटर से काम करने में होती है, न कि बाल साहित्य या बाल मनोविज्ञान को लेकर। इसलिए उनके द्वारा बनाए गए चित्रों में सतहीपन की झलक स्पष्ट दिखाई पड़ती है। वे चित्र चित्रों की निर्जीवता रेखाओं और रंगों के संयोजन से आगे नहीं बढ़ पाते।

गत शताब्दी के अंतिम दशक से बाजार ने हर चीज को अपनी अपेक्षाओं के अनुकूल ढालना आरंभ कर दिया था। आज हालत यह है कि समाचार-पत्रों में प्रकाशित बच्चों की सामग्री के अधिकांश सूचनावाद से आक्रांत नजर आता है। उपनगरीय (सैटेलाइट टाउनशिप) की मानसिकता के विस्तार ने सुदूर गाँव-देहात में भी मध्यवर्ग की संख्या में इजाफा किया है। दूसरी ओर छोटे परिवारों, विशेषकर उनमें जहाँ माता-पिता दोनों ही कार्य करते हैं, बच्चों को बड़े उपभोक्ता वर्ग के रूप में चिह्नित किया जाने लगा है। अतएव समाचार-पत्र, पत्रिकाएँ बाल साहित्य के नाम पर उन रचनाओं को प्रकाशित करते हैं, जो बच्चों को नए उत्पादों के बारे में जानकारी देती हों। इसलिए पर्यटन, तीर्थ-स्थलों आदि को लक्ष्य बनाकर, बाल साहित्य के अंतर्गत जो सामग्री परोसी जाती है, उसका उद्देश्य बाल पाठकों को देश की सांस्कृतिक छटाओं और बहुरंगी सभ्यता की पहचान भर नहीं होता। उद्योग की तरह चलाए जानेवाले समाचार-उद्यमों की असल मंशा अपनी सहयोगी पर्यटन उद्योग को बढ़ावा देने की होती है। इसलिए उनमें लोकजीवन से अधिक वहाँ के प्रमुख होटलों तथा बाजारों की जानकारी होती है। बाल साहित्य पर सूचनावाद का प्रभुत्व तब है, जब इंटरनेट ने सूचनाओं को माउस की क्लिक पर सर्वसुलभ बना दिया है। इससे वे चीजें पिछड़ने लगती हैं, जिनका वाणिज्यिक महत्त्व कम होता है, इससे प्रकारांतर में आर्थिक विषमताएँ जन्मती हैं। अतएव बाल साहित्यकार के सामने बड़ी चुनौती बाल साहित्य को सूचनावाद के चंगुल से बचाना है। यह कार्य मौलिक सोच एवं साहित्यिक भावना के साथ ही संभव है।

बाल साहित्यकार के समक्ष एक चुनौती लैंगिक भेदभाव की खाई को पाटना भी है। यह आरोप बहुत से साहित्यकार बंधुओं को चौंका सकता है। पर यह सच्चाई है कि हमारा बाल साहित्य आज भी सामंतकालीन प्रवृत्तियों से बाहर नहीं आ पाया है। हिंदी में बच्चों के लिए लिखी जानेवाली कहानियों और उपन्यासों को यदि हम देखें तो आज भी लगभग तीन-चौथाई रचनाओं के नायक पुरुष वर्ग से संबंधित होते हैं। शेष आधी आबादी को मात्र एक-चौथाई से ही संतोष करना पड़ता है। आजादी के बाद बाल साहित्य के अन्य क्षेत्रों में जहाँ आमूल परिवर्तन आया है, वहीं लैंगिक विषमता को लेकर हमारा बाल साहित्य आज भी मध्ययुगीन प्रवृत्तियों से भरा है। यहाँ हम इस बात पर संतोष व्यक्त कर सकते हैं कि लैंगिंक भेदभाव केवल हिंदी तक सीमित नहीं है। सर्वाधिक लोकतांत्रिक होने का दावा करनेवाला पश्चिमी समाज भी इस जकड़न से बाहर नहीं आ पाया है। फरवरी २००७ में अमेरिका के सेंट्रल कॉलेज के दो प्रोफेसरों डॉ. डेविड एंडरसन तथा डॉ. माइक हेमिल्टन ने बच्चों के लिए प्रकाशित पुस्तकों में लैंगिक भेदभाव की स्थिति का अध्ययन किया था। अपनी रिपोर्ट में उन्होंने २००१ के बाद बच्चों की लगभग २०० सर्वाधिक बिक्रीवाली पुस्तकों तथा १९३८ से स्थापित बहुप्रतिष्ठित काल्डकोट पुरस्कार से सम्मानित सचित्र पुस्तकों में से सात वर्ष की पुस्तकों के नमूनों का चयन किया था। उनके अध्ययन के पश्चात् वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे थे कि बच्चों के लिए लिखा जानेवाला बाल साहित्य लैंगिक भेदभाव की भावनाओं से भरा पड़ा है। बाल साहित्य की रचनाओं में नर पात्रों की संख्या मादा पात्रों की अपेक्षा लगभग दो गुनी होती है। नर पात्रों को चित्रों में प्रमुखता से दरशाया जाता है। ऐसा दरशाया जाता है मानो लड़कियाँ लड़कों की अपेक्षा प्राकृतिक तौर पर कमजोर होती हैं, इसलिए उन्हें लड़कों से अधिक देखभाल की आवश्यकता होती है। अध्ययन में यह भी सामने आया कि बाल साहित्य की रचनाओं में लड़कियों को प्रायः घर के काम में लिप्त दिखाया जाता है। अध्ययन के निष्कर्षों पर एंडरसन की टिप्पणी थी—''बाल साहित्य की आधुनिक चित्रकथाएँ इस अंधविश्वास को आज भी बनाए हुए हैं कि लड़के यानी पुरुष पात्र लड़कियों अर्थात् स्त्री पात्रों की अपेक्षा अधिक मनोरंजन प्रधान होते हैं।''

बच्चों में समानतावादी दृष्टिकोण भरने के लिए आवश्यक है कि माता-पिता आरंभ से ही इस पर ध्यान दें। दूसरी शोधकर्ता डॉ. हेमिल्टन ने चेताया है कि बाल साहित्य की कृतियों में लैंगिक भेदभाव बच्चों के

विकास पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। यह उनकी कॅरियर संबंधी उड़ान में अवरोध पैदा करता है, उनकी महत्त्वाकांक्षाओं को कुंद करता है। उनपर गहरा मनोवैज्ञानिक असर डालते हुए भविष्य के माता-पिता के रूप में उनके विचारों और भावनाओं का अनुकूलन करता है। परिणाम यह होता है कि लैंगिक भेदभाव पीढ़ी-दर-पीढ़ी बना रहता है। रचनाओं में अभिव्यक्त लैंगिक भेदभाव किशोर मानस पर कितना गहरा असर डालता है, उसका ताजा उदाहरण हैरी पॉटर की लेखिका जे.के. रोलिंग के जीवन से भी दिया जा सकता है। लेखिका का असली नाम जोनी रोलिंग है। करीबी उन्हें प्यार से 'जो' कहकर बुलाते हैं। जब उन्होंने हैरी पॉटर लिखा और उसकी पहली पांडुलिपि अपने प्रकाशक 'ब्लूम्सबरी' को भेजी तो प्रकाशक को लगा कि पुस्तक किसी महिला लेखक की रचना है, किशोर पाठक उसकी ओर कम संख्या में आकर्षित होंगे। इसलिए उसने लेखिका से अनुरोध किया कि वह अपने सरनेम 'रोलिंग' के अलावा दो नामाक्षर प्रयोग करें। प्रकाशक की सलाह पर अमल करते हुए जोनी ने अपनी नानी कैथीन, जो उन्हें बचपन में अच्छी-अच्छी कहानियाँ सुनाया करती थीं, के नाम से 'के' उधार लिया। इस प्रकार पुस्तकों पर 'जे.के. रोलिंग' नाम छापा गया। यह आज भी उनका असली नाम नहीं है।

इक्कीसवीं सदी का दूसरा दशक आरंभ हो चुका है। इसके बावजूद बाल साहित्यकार की चुनौतियाँ कम नहीं हुई हैं। बल्कि बाजार जिस तरह अपने सर्वग्राही पंजे फैलाता जा रहा है, उससे तो लगता है कि चुनौतियाँ उत्तरोत्तर बढ़ती ही जा रही हैं। ऐसे में हर उस व्यक्ति का, जो बच्चों को जड़ उपभोक्ता बनने से रोकना चाहता है; जो चाहता है कि सूचनाओं के चौतरफा दबाव और बाजारवादी प्रलोभनों के बीच भी बालक का विवेक और संवेदनशीलता बनी रहे, कर्तव्य है कि बच्चों को पढ़ने के लिए उनकी रुचि के अनुकूल, मगर स्तरीय साहित्य उपलब्ध कराए। साहित्यकारों का कर्तव्य है कि महज पत्र-पत्रिकाओं के लिए रचनाओं का बोनसाई तैयार करने के बजाय वे मौलिकता, कथानक की माँग, बच्चों के मनोरंजन एवं उनकी रुचि के अनुसार अपना लेखन-कार्य करें। प्रकाशकों का लेखक बनने से अच्छा है, अपने पाठकों का साहित्यकार बनना। रचना यदि मनोरम है तो वह अपना पाठक वर्ग हर हाल में खोज लेगी। साहित्य दिल का मामला, कच्ची उम्र का प्रेम है, बिना संवेदनशीलता के वह लोकप्रिय हो ही नहीं सकता। पठनीयता के संकट को दूर करने तथा संवेदनाओं के क्षरण को रोकने के लिए आवश्यक है कि बालक का बचपन से ही साहित्य से लगाव हो। इसका एक रास्ता ब्रितानी अध्यापक क्रेग जेंकिन भी दिखा रहे हैं। हालाँकि रास्ता नया नहीं है। जगह-जगह जाकर वहाँ की लोककथाएँ संचित करने और उन्हें बच्चों तक पहुँचाने का काम उनसे बहुत पहले १८२५ के आसपास जर्मनी के ग्रिम बंधु कर चुके हैं। क्रेग जेंकिन पिछले दिनों दक्षिण भारत की यात्रा पर थे। यहाँ उन्होंने लोककथाएँ इकट्ठी कीं। अब वे उन्हें लंदन में अपने विद्यार्थियों को सुनाते हैं। उनका यह प्रयोग बहुत सफल हो रहा है। विद्यार्थी कहानियों को सुनकर झूम उठते हैं। सांस्कृतिक आदान-प्रदान के जिस काम को करने में बड़े-बड़े सांस्कृतिक मंत्रालयों और राजकीय दूतावासों के पसीने छूटने लगते हैं, वह कहानियों के माध्यम से आसानी से पूरा हो रहा है। हिंदी को ऐसे ही समर्पित किस्सागो चाहिए, जो उसको बाजारवाद और सूचनावाद के चंगुल से निकालकर लोक के नजदीक ले जा सकें।

जी-५८२, अभिधा गोबिंदपुरम्
गाजियाबाद-२०१०१३ (उ.प्र.)

पाकिस्तानी दुपट्टा

लघुकथा

● संजय कुमार

कश्मीर में प्रवास के तीसरे दिन हम सब चश्मेशाही की सैर कर रहे थे। करीने से सजी फूलों की क्यारियाँ, मंद-मंद बहती हवाओं के साथ मस्ती में झूमते पौधे, पत्ते और शाखाएँ मन को बाग-बाग कर रहे थे। तभी युवतियों का एक झुंड हमारे बीच से गुजरा। मेरी पत्नी ने उनमें से एक लंबी सी खूबसूरत युवती को टोकते हुए पूछा, ''आपका दुपट्टा बहुत बेहतरीन है। इसे आपने कहाँ से खरीदा है?''

युवती का चेहरा खुशी से भर उठा और वह बोली, ''इसे मेरे अंकल ने पाकिस्तान से खरीदा है, पर तुम कहाँ से आई हो?'' जब मेरी पत्नी ने बताया कि हम सब पटना से आए हैं तो वह चौंक उठी, ''बाप रे, इतनी दूर से आई हो, चलो फिर आज की रात मेरे घर में ठहर जाओ, मैं बगल में ही रहती हूँ।'' मेरी पत्नी ने बताया कि हम सब होटल 'वैष्णवी' में टिके हैं। तब युवती बोली, ''चलो इधर आओ, तुम्हें एक चीज दिखाती हूँ।'' मेरी पत्नी उसके साथ चली गई। कुछ देर बाद मेरी पत्नी और युवती लौटीं तो देखा दोनों का दुपट्टा बदल चुका था।

होटल में मेरी पत्नी ने बताया कि कश्मीरी युवती ने जिद करके अपना पाकिस्तानी दुपट्टा उसे गिफ्ट कर दिया और बदले में मेरा साधारण सा दुपट्टा खुद ओढ़ लिया। फिर मैं क्या करती!

उस कशमीरी युवती की भावनाओं ने हमें अभिभूत कर दिया। हम सब यह मानने को विवश थे कि वाकई कश्मीर ही नहीं, कश्मीर के लोगों का भी कोई जोड़ नहीं।

राम आशा सदन, नलकूप भवन के पूरब
ए.जी. कॉलोनी मेन रोड के करीब
सर्वोदय नगर, पो. शास्त्री नगर
पटना-८०००२३
दूरभाष : ०९९३९३००४३८

बाल-कहानी

जंगल की दीवाली

● रेनू सैनी

नंदनवन में सभी पशु-पक्षी मिल-जुलकर प्रेम से रहते थे। वे हर त्योहार को मिल-जुलकर मनाते थे। अभी हाल ही में नंदनवन में सभी ने नवरात्रों व दशहरे के त्योहार को बड़ी धूमधाम से मनाया था। इस बार नंदनवन के राजा सिंहराज की अनुमति से 'नंदनलीला' के नाम से रामलीला का भी आयोजन किया गया था। यह आयोजन बेहद सफल रहा था और नंदनवन की रामलीला के फोटो अनेक समाचार-पत्रों में भी छपे थे। मिंकू बंदर ने हनुमान के रोल में व उसके अन्य साथियों ने राम की वानरसेना के रूप में अच्छा प्रदर्शन कर लीला में जान डाल दी थी।

अब सब ओर दीवाली की तैयारियाँ हो रही थीं। सिंहराज ने वन के सभी पशु-पक्षियों को एकत्र किया और दीवाली को भी अनूठे व अनोखे तरीके से मनाने के लिए सोचा। वैसे भी इस बार वन-विभाग की ओर से यह घोषणा की गई थी कि जिस जंगल का प्रवेश-द्वार स्वच्छ व रोशनी से भरपूर होगा, उसे पुरस्कृत किया जाएगा। इस घोषणा को सुनकर अन्य वन, जैसे चंपकवन, काननवन, सुंदरवन आदि भी पुरस्कार जीतने के लिए अपनी तैयारियों में लग गए। नंदनवन के राजा सिंहराज को भी इस घोषणा का पता चला। पूरे नंदनवन समाज की बैठक इस बार भी बुलाई गई। सभी को यह कहा गया कि वे अपने-अपने सुझाव दें कि कैसे वन को स्वच्छ व रोशनी से जगमग किया जा सकता है। यह सुनकर चीकू खरगोश बोला, ''द्वार सजाने के लिए तो बिजली की बहुत खपत होगी। महँगाई वैसे ही सुरसा के मुँह की भाँति फैल गई है। इसलिए हमें ऐसे उपाय करने होंगे, जिससे बिजली का भी कम प्रयोग हो और रोशनी भी भरपूर हो।' सिंहराज चीकू की बात पर सहमत दिखाई दिए।

अब सभी द्वार को कम खर्च में बेहतर तरीके से कैसे सजाया जाए, इस बारे में विचार करने लगे। नंदनवन की सफाई पर तो वन के सभी पशु-पक्षी घोषणा सुनकर स्वयं ही जुट गए थे। जाले हटाने का काम चिरपी चिड़िया व उसकी सखियों के साथ ही मीकू बंदर व उसके साथियों को सौंपा गया। फैटी हाथी और उसके साथी सूखे पेड़ों की डालों को हटाने के लिए नियुक्त किए गए। इस प्रकार सभी अपने काम में जुट गए। किंतु अभी तक द्वार को अद्‌भुत तरीके से कैसे सजाया जाए, इसके लिए कोई खास योजना नहीं बन पाई थी।

सुपरिचित साहित्यकार। 'दिशा देती कथाएँ' एवं 'बचपन का सफर'। दिल्ली सरकार की हिंदी अकादमी द्वारा चार बार नवोदित लेखन एवं अनेक बार आशुलेखन में पुरस्कृत, 'भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार', राष्ट्रीय स्तर की पत्र-पत्रिकाओं, समाचार-पत्रों एवं आकाशवाणी से समय-समय पर रचनाओं का प्रकाशन व प्रसारण।

हाल ही में नंदनवन में होर्सी घोड़ा व किंगरी हिरन एक सरकारी वैज्ञानिक संस्थान में वैज्ञानिक नियुक्त किए गए थे। ये दोनों नंदनवन की शान थे। दोनों ही नंदनवन को अधिक विकसित व सुंदर बनाने के लिए नए-नए उपाय खोजते रहते थे। द्वार को सुंदर व अद्‌भुत तरीके से सजाने की जिम्मेदारी इन्हें सौंप दी गई। होर्सी घोड़ा व कंगारू महँगाई को देखते हुए बिजली की कम खपत कर द्वार पर कैसे भरपूर रोशनी का अलग तरीके से इंतजाम करें, यही सोचते रहते थे। दोनों घंटों-घंटों विचार-विमर्श करते रहते। वन के एक-एक पुष्प व लकड़ी का निरीक्षण करते। आखिरकार दोनों ने दिन-रात मेहनत कर द्वार को अद्‌भुत तरीके से सजाने का तरीका ढूँढ़ ही लिया।

दीवाली का दिन आ गया। उस दिन नंदनवन के साथ ही सभी वनों की सुंदरता देखने लायक थी। वन-विभाग के निर्णायक सभी वनों का मुआयना कर रहे थे। अभी तक वे नंदनवन की ओर नहीं आ पाए थे। उन्हें चंपकवन का द्वार बेहद पसंद आया था। सुना जा रहा था कि चंपकवन में संगीतबद्ध रोशनी ने निर्णायकों को झूमने पर मजबूर कर दिया था। अब नंदनवन की बारी आई।

नंदनवन की परीक्षा के साथ-साथ यह होर्सी व किंगरी की भी परीक्षा का समय था और उन सभी पशु-पक्षियों का भी, जिन्होंने दिन-रात एक कर नंदनवन को सजाया था। जैसे ही निर्णायक मंडल नंदनवन

के द्वार की ओर बढ़ा तो उन पर असंख्य पुष्पों की बरसात हुई। पुष्पों की खुशबू ने सभी को मोहित कर दिया। नंदनवन के रंग-बिरंगे प्राकृतिक रंगों से सजे द्वार पर निर्णायकों की नजर गई तो सभी ने दाँतों तले अंगुली दबा ली। वहाँ पर असंख्य छोटे-बड़े जुगनू द्वार पर चिपके हुए अपनी प्राकृतिक रोशनी से सबको नहला रहे थे और अंसख्य रंग-बिरंगी तितलियाँ द्वार पर अनोखी छटा बनाए खड़ी थीं। मृगों ने अपनी कस्तूरी भी द्वार पर लगा दी थी, जिससे खुशबू व रोशनी के संगम ने झूमने पर मजबूर कर दिया था। जुगनू टिमटिमाते बल्ब-से बड़े खूबसूरत प्रतीत हो रहे थे। नंदनवन के द्वार पर विभिन्न पुष्प अलग-अलग रंगों में झिलमिला रहे थे।

प्रकृति की खूबसूरती का ऐसा अद्‌भुत संगम, वह भी बिना किसी खर्च के देख निर्णायक खुशी से झूम उठे। उन्होंने सर्वसम्मति से नंदनवन को विजेता घोषित कर दिया। साथ ही इस द्वार की खूबसूरती के सृजनकर्ता होर्सी घोड़े व किंगरी हिरन को भी विशेष तौर पर सम्मानित किया गया।

निर्णायक मंडल ने नंदनवन के राजा सिंहराज को सम्मानित करते हुए कहा कि यदि बिजली की खपत और महँगाई पर लगाम लगानी है तो प्रत्येक वन को ही नहीं अपितु मनुष्यों को भी नंदनवन से सीख लेनी चाहिए और दीवाली पर कृत्रिम रोशनी से बिजली की खपत करने के बजाय प्राकृतिक तरीकों से ही अपने घरों की सज्जा करनी चाहिए। इससे व्यर्थ का रुपया भी नहीं खर्च होगा और बिजली की खपत भी कम होगी। काश नंदनवन जैसी एकता सभी वनों के पशु-पक्षियों के साथ ही मनुष्यों में भी हो जाए तो हर समस्या पर विजय पा ली जाए।

३, डी.डी.ए फ्लैट्स,
खिड़की गाँव, मालवीय नगर,
नई दिल्ली-११००१७
दूरभाष : ०९९७११२५८५८

स्थगित साक्ष्य

लघुकथा

● सत्य शुचि

एक अखबार के साप्ताहिक परिशिष्ट में वह प्रभारी संपादक थे और खुशी की बात यह है कि मेरा उनसे हल्का-फुल्का परिचय भी था, जिसके फलस्वरूप मैंने कुछ रचनाएँ कोरियर सेवा से उन्हें प्रेषित की थीं।

मगर एक सप्ताह बाद मेरी जिज्ञासा भीतर-ही-भीतर मचलने लगी और रचनाओं के बारे में मैंने फोन पर उनसे जानने का यत्न किया तो वह बोले थे, ''शायद, आपकी रचनाएँ आजकल में मिल जाएँ।'' उनका स्वर कतई निराशाजनक नहीं था।

फिर भी एक बेचैनी से घिरा मेरा चित्त अशांत था, ''आखिरकार, मेरी रचनाएँ कहाँ गईं?'' और इसी धुन में तीन दिन के बाद मैंने उनसे फोन से संपर्क करने की चेष्टा की। किंतु क्षणों में ही वह बिदक से उठे, 'रचनाएँ हैं...! देर-सबेर हो जाती है रचनाएँ आएँगी तो छपेंगी भी। लेकिन वह मिले तब न...' उनकी आवाज से मैं क्रोधित हो गया और मैं चुप नहीं बैठा।

औचक ही, जल्द से मैं कोरियर-शॉप के लिए निकल पड़ा। और किंचित् समय में ही उस शॉप में दाखिल हुआ। उस वक्त मेरे कड़े रुख को भाँपकर मेरी कोरियर-रसीद को उसने अहमियत दी और जल्द-जल्द से यत्र-तत्र समस्त जानकारियाँ हासिल करते हुए कोरियर वाला अचंभे से मुझे निहार रहा था। ''आपकी रचनाएँ प्रभारी-संपादक के पास पहुँचे एक सप्ताह बीतने को आया है।'' और यकीन दिलाने की गरज से उसने अपना इंटरनेट खोलकर मुझे दिखलाना चाहा था और तभी मैं आश्चर्यचकित था कि प्रभारी-संपादक के प्राप्ति-कॉलम में उनके साइन साफ नजर आ रहे थे!

''परंतु, कोई तो यहाँ गलत है।'' मैं एक घने पसोपेश में कहीं उलझा था। 'अगर अब प्रभारी संपादक को मैंने इस सच्चाई से अवगत कराया तो संभव है कि भविष्य में वह मेरी रचनाएँ अखबार में छापना ही बंद कर दें तब मेरा उनसे उलझना या पंगा मोल लेना अपने हितों पर कुल्हाड़ी मारने जैसा होगा।' और झट से मैंने समय के मिजाज को भाँपा।

''भविष्य में रचनाएँ मैं उस प्रभारी संपादक को स्पीड-पोस्ट से भिजवाऊँगा, ताकि वह डाक-विभाग की सेवा से मुकरें नहीं।''

बहरहाल, स्वार्थ के चमकदार अवसर के सामने मेरे सिद्धांत-नियम अभी एक झटके में ही चकनाचूर हो गए। ''वस्तुत: मैं आज की तारीख में मौकापस्ती की एक जीती-जागती मिसाल हूँ।'' और खट्टे मन से मैं बुदबुदाया भर था।

साकेत नगर, ब्यावर-३०५९०१ (राजस्थान)
दूरभाष : ०९४१३६८५८२०

राम झरोखे बैठ के

दुर्घटना, सड़क और अफसर

● गोपाल चतुर्वेदी

रोजमर्रा का रुटीन है लोगों का घर से निकलना। घर बैठना ज्यादातर बदकिस्मत बेरोजगारों के लिए ही संभव है या फिर बाप-दादा की कमाई पर ऐश करते चंद समृद्धों का! कुछ को करने की प्रतीक्षा है, दूसरे को कुछ कर न पाने की विवशता। वे इस लायक ही नहीं हैं कि कुछ कर पाएँ! ऐसे घर-घुस्सू धीरे-धीरे विलुप्त होते अपवाद हैं, हर नियम से परे। प्रभु इन्हें अमन-चैन दे। पर अधिकांश को सवेरे सड़क पकड़ना ही पकड़ना।

हम भी इसी श्रेणी के हैं। कल हम बस के इंतजार में थे कि आवागमन की आम घटना में 'दु' जुड़ गया। 'दु' का जुड़ना किसी के लिए भी दुर्भाग्य का सूचक है, किंतु किसी सामान्य व्यक्ति के लिए खासतौर पर। हुआ यों कि एक स्कूटर से जाते व्यक्ति को फर्राटे से आती गाड़ी 'हैलो' कहकर फरार हो गई। इस हैलो से चालक और वाहन ऐसे हिले कि उन्होंने सड़क पकड़ ली।

हेलमेट कई हिस्सों में बँटकर मुल्क में मिलावट की महामारी के साक्ष्य के समान बिखरा पड़ा है। जहाँ खान-पान और दवा से लेकर दुआ तक में मिलावट है, वहाँ इस शीश-कवच को कोई क्यों बख्शे! स्कूटर सवार अर्धचेतन अवस्था में काँपता-कराहता उठने के प्रयास में था कि फिर गिरा। भारत को तमाशबीनों को देश होने को सिद्ध करती दर्शकों की तादाद लगातार तरक्की पर थी। मदद करना तो दूर, किसी ने उसे पानी तक को न पूछा। उल्टे एक सज्जन ने सबको चेतावनी के स्वर में हिदायत दी, 'देखिए! स्कूटर से लेकर घायल व्यक्ति तक क्राइम सीन का अंग है। उसे जैसा है, वैसा ही रहने दीजिए।'

यानी वह कमबख्त, पतित बिना इलाज जान से भी जाए तो जाने दो। इनसान के प्राण से ज्यादा महत्त्व क्राइम सीन का है। वैसे भी कौन अपना सगा है, सगा होता तब भी क्या फर्क पड़ता है? आज की दुनिया में व्यक्ति का सिर्फ अपने स्वार्थ से रिश्ता है या वक्ती नाता उससे, जिससे उल्लू सीधा होता हो! सारे संबंध अब दिखाऊ हैं, निभाऊ नहीं! किसी अन्य की इनसानियत जागी। उसने उन्हें टोका, 'पर पुलिस को तो सूचित करना पड़ेगा। वह अपने आप तो टपकने से रही।'

कुछ इधर-उधर उस वरदी वाले को खोजने लगे, जो पीछे खड़ा खैनी पीट रहा था। पर दुर्घटना के बाद से शायद उसने अंतर्ध्यान होना ही श्रेयस्कर समझा। वक्त-जरूरत पर पुलिस की अनुपस्थिति या मौका-ए-वारदात से पलायन वरदी की कार्य-प्रणाली का अनिवार्य अंग है। वह भी क्या करे? वह भी इनसान है, हमारी तरह। काम के आधिक्य से त्रस्त, हम सबके समान दायित्व से कन्नी काटने की कोशिश में व्यस्त! किसी ने अंततोगत्वा पुलिस से संपर्क साधा।

जब तक पुलिस आती, हमारी बस आ गई। नगर-बस शहर की यातायात व्यवस्था की नायक है। मेरे 'नगपति मेरे विशाल' की स्टाइल में दो, तीन और चार पहियों की सवारियों से ऊँची और बड़ी। अपने आगे किसी और को वह क्यों घास डाले? गनीमत है कि ड्राइवर की नजर गिरे हुए स्कूटर और उसके घायल सवार पर पड़ गई और उसने ब्रेक लगाने की इनायत की, वरना कई तो ब्रेक लगाने की कोशिश में एक्सीलेटर दबा देते हैं।

ऐसों को लाइसेंस उन बिचौलियों ने दिलाया है, जो क्षेत्रीय यातायात अधिकारी का एजेंट होने का दम भरते हैं। कुछ शातिर बेरोजगारों की रोजी-रोटी इसी धंधे से चलती है। सरकार किसी भी पार्टी की हो, यह दल-निरपेक्ष, अनौपचारिक मदद के केंद्र हर जनोपयोगी कार्यालय के पास पाए जाते हैं। कई बिचौलिये मंत्री पद की शोभा बढ़ाकर इस धंधे की गरिमा में चार चाँद लगा रहे हैं। कई ने दूसरों का लाइसेंस बनवाते-बनवाते खुद की टैक्सी सर्विस शुरू कर दी है।

बस के चालक ने स्कूटर-अवरोध से आगे बढ़ने से इनकार कर दिया। गाड़ियों का ऐसा अंबार शुरू हुआ कि ड्राइवरों में मार-पीट की नौबत आने लगी। हिंदुस्तान में जिस के भी पास चार पहिए का वाहन है, वह उसका हॉर्न दबाकर अपने स्वामित्व और समृद्धता की घोषणा करने को लालायित है। कभी-कभी इनसान और हॉर्न दोनों चिल्लाते हैं, एक खिड़की खोलकर गालियों की बौछार कर, दूसरा उसका साथ देता यांत्रिक स्वर में। हमें यकीन है। सरकार इस ध्वनि प्रदूषण को भले बरदाश्त कर ले, क्या पता, किसी-न-किसी जनहित याचिका पर कोर्ट इसे न बख्शे।

हमें तो कोर्ट-कचहरी से डर लगता है। कुछ साहसी हैं, जिनका इकलौता शौक ही किसी-न-किसी मुद्दे पर जनहित याचिका की गोली दागना है। हम उनके मौन प्रशंसक हैं। पर उनसे भेंट कैसे हो? वह अपने दायरे के वी.वी.आई.पी. हैं। कौन कहे, सवेरे से कोर्ट-कूच कर रात तक ही लौटते हों। हमारे चिंतन की चैन को तोड़ती पुलिस की जीप आ गई। पहले उसने हम सबकी खबर ली, ''आप इतने लोग बस स्टैंड पर खड़े

मक्खी मार रहे थे और किसी ने भी टक्कर लगाकर फुर्र होती गाड़ी का नंबर तक नोट नहीं किया?''

हम सब चुप! यहाँ तक कि क्राइम सीन की अहमियत जतानेवाले साहब भी चुपचाप खिसक लिये। कभी-कभी पुलिस भी जन सेवा की मिसाल कायम करती है। उसने एंबुलेंस से घायल को अस्पताल भिजवाया। उसे मौत के मुँह में ढकेलने वाले वाहन का अता-पता कौन बताता? कई रईसजादे इस प्रकार की हरकत कर चैन की बंशी बजा रहे हैं। उनकी तादाद में एक और इजाफा हो गया।

हमें खबर नहीं है कि उस दुर्घटनाग्रस्त पर क्या बीती? बड़े शहर में ऐसी घातक वारदातें तो होती ही रहती हैं। दूसरे दिन अखबार में हमारे सामने घटना में 'दु' लगाने का समाचार न आने से अपना निष्कर्ष है कि शायद वह हम सबकी सामूहिक बेरुखी और तमाशाई प्रवृत्ति के बावजूद अभी भी जीवित है। अपनी ऐसी आशा निराधार नहीं है। आजकल अखबारों में बड़ी प्रतिस्पर्धा है—बलात्कार, अपहरण, हत्या और दुर्घटना के समाचार छापने की। यदि कुछ होता तो वह एक दिन की सुर्खियों में तो उभरकर आता ही। नहीं आया तो शर्तिया जिंदा बच गया!

हमें कभी-कभी लगता है कि जड़ और निर्जीव बेजुबान सड़क यदि कहीं बोलती होती तो न जाने किन-किन राज्यों और केंद्र की सड़क निर्माण संस्थाओं के राज खुलते? हमारे शहर की सड़कें एकमत होकर बतातीं कि उद्घाटन तक वे क्यों चमचमाती हैं और उसके पश्चात् अचानक चेचक-ग्रस्त क्यों हो जाती हैं? ठेकेदार कबूलते कि उन्होंने कहाँ-कहाँ किस-किस स्तर पर कितना दान-चंदा देकर यह सड़क का ठेका पाया है और कितना मुनाफा कमाया है? सड़क से जाकर ठेकेदार की सही गलत बयानी की पुष्टि भी मुमकिन होती।

यों जाँच-एजेंसियों की माया सामान्य इनसान के पल्ले पड़ना कठिन क्या असंभव है। वह कभी जाँच के बाद ऐसे-ऐसे उपन्यास और लघुकथाएँ रचती है कि देवकीनंदन खत्री से लेकर चंद्रधर शर्मा 'गुलेरी' तक शरमाएँ। जानकारों का कहना है कि जाँच एजेंसियों की जिभ्या में एक ऐसा तोता फिट है, जो सिर्फ तात्कालिक सत्तादल की भाषा बोलता है। कोई अन्य कुरसी पर आए तो एजेंसियाँ उसका तोता पालती हैं। इसलिए देखने में आया है कि छोटे-मोटे मामले तो चुटकियों में निबटते हैं, पर तोता प्रभावित केस द्रौपदी के चीर से कम नहीं है। इस बीच सच नहीं, बस तोता बोलता रहता है।

जाँच-एजेंसियों के सक्षम और सफल अधिकारी खुद इतने ईमानदार हैं कि अपने कार्यकाल के दौरान चुपचाप चहेतों की दबी-छुपी मदद में व्यस्त रहते हैं। इस निष्काम कर्म के फल की अपेक्षा उन्हें सिर्फ सेवानिवृत्त होने के बाद है। खोजी बताते हैं कि यह ऐसे अधिकारियों के उसूल का प्रश्न है। 'इस हाथ ले, उस हाथ दे' जैसी दकियानूसी कहावतों में उनका विश्वास हो, न हो, पर 'आज ले, जब माँगें तब दे' से उन्हें परहेज नहीं है। यही कारण है कि सेवानिवृत्ति के पश्चात् ऐसे निष्कलंक अधिकारी किसी-न-किसी निजी या पब्लिक सेक्टर में बिना काम के ऊँची कुरसी की शोभा बढ़ाते पाए जाते हैं।

अफसर ने सोचने में समय बरबाद नहीं किया। तत्काल अपने पत्रकार मित्र को फोन घुमाया। क्लब में शाम को मिलने की दावत दी। ऐसे पेचीदा मामले सिर्फ दारू की प्रेरणा से हल होने की संभावना है, विशेषकर जब वह पत्रकार से जुड़े हों। क्लब की बार में दो पैग के बाद साहब ने घोषणा की, ''आपने एक बार सुझाया था कि मैं अपने अनुभव पाठकों से साझा करूँ! आपकी हर बात को मैंने गंभीरता से लिया है। आजकल मैं अपनी जीवन-गाथा लिख रहा हूँ। बिना आपकी सहायता यह संपन्न कैसे होगी?''

ऐसे कुछ अधिकारी आत्म-मुग्धता के भी शिकार हैं। वे रिटायर होकर अपनी उपलब्धियाँ किसे सुनाएँ? कभी नाक के बाल रहे अफसर आज झाँकने भी नहीं आते। कभी बॉस रहे सज्जन की कारगुजारियाँ सुन-सुनकर उनके कान पक गए हैं। उन्होंने कसम खा ली है कि वे स्कॉच पिलाएँ या डिनर खिलाएँ, अपने कानों की रक्षा उनकी प्राथमिकता है। आत्म-मुग्ध अधिकारी का दिन कैसे कटे, बिना अपनी तारीफ, ईमानदारी और कार्यनिष्ठा के किस्से सुनाए?

उसके अंतर में अचानक बादल घुमड़ते हैं। दिमाग में यकायक बिजली कौंधती है। वह किताब लिखकर पूरी दुनिया को अपने श्रम, साहस और योगदान का ज्ञान देगा। किसी को पता नहीं है कि राजमार्ग के घोटाले की परत-दर-परत साजिश उसने कैसे सुलझाई कि लोग दंग रह गए। आज तक केस कोर्ट में है, पर सब उसकी निष्पक्ष जाँच का लोहा मानते हैं। तीन छोटे और दो बड़े बाबू अभी भी केस में सस्पेंड हैं। तारीख पर तारीख पड़ रही है न्यायालय में। बचाव के वकीलों की कोशिश है कि जब तक उनके मुवक्किल जीवित हैं, फैसला न आ पाए। इसके लिए वह साम-दाम की तकनीक में सफल रहे हैं। जानकार जानते हैं कि ऐसे नाजुक मामलों में फैसला इंतजार करता है, मुवक्किलों की टें बोलने का।

अफसर ने सोचने में समय बरबाद नहीं किया। तत्काल अपने पत्रकार मित्र को फोन घुमाया। क्लब में शाम को मिलने की दावत दी। ऐसे पेचीदा मामले सिर्फ दारू की प्रेरणा से हल होने की संभावना है, विशेषकर जब वह पत्रकार से जुड़े हों। क्लब की बार में दो पैग के बाद साहब ने घोषणा की, ''आपने एक बार सुझाया था कि मैं अपने अनुभव पाठकों से साझा करूँ! आपकी हर बात को मैंने गंभीरता से लिया है। आजकल मैं अपनी जीवन-गाथा लिख रहा हूँ। बिना आपकी सहायता यह संपन्न कैसे होगी?''

पत्रकार अपनी अहं तुष्टि से खुश हुआ। कुछ शरीर की मालिश के लतियल हैं, कुछ पढ़े-लिखे अहं की। उसने स्वीकृति देते हुए कहा, ''उसमें ऐसा मिर्च-मसाला डालूँगा कि शर्तिया 'बेस्ट सैलर' हो। दोस्त की किताब है, प्रचारित करने का जिम्मा भी मेरा।''

अंधे को क्या चाहिए, दो आँखें। अफसर प्रसन्न मन घर लौटा।

निश्चय यह हुआ कि रोज शाम पत्रकार उनके घर पधारेगा। किताब में सुधार-परिवर्तन की चर्चा होगी। व्हिस्की-भोजन के बाद वह अकसर चलने की स्थिति में नहीं रहता है। टैक्सी से घर जाएगा। आने-जाने के भाड़े का खर्चा अफसर को उठाना है। पत्रकार ने खूब कमाई की थी, कुछ

सच्ची खबरें दबाकर, कुछ अफवाहों को खबर बनाकर। वह तो अफसर की जिद थी कि उसे उनका हठ मानना पड़ा, वरना वह तो एक फूटी कौड़ी लेने से भी इनकार करता रहा। अंग्रेजी पुस्तक का नामकरण 'सड़क की साजिश' उसी ने किया था।

पुस्तक में सड़क ही नहीं, लेखक के बचपन से लेकर रिटायरमेंट तक के रोचक संस्मरण, अपने अधिकारियों की मूर्खता, राजनेताओं की लोलुपता, ठेके पाने को करोड़ों का खर्च, अधिकतर कैश और कुछ कामवासना की पूर्ति की 'काइंड' में जैसा क्या-क्या नहीं है? कई मृत व्यक्तियों के विषय में सच्ची-झूठी बातें हैं। कुछ पत्रकार ने जोड़ी हैं। कुछ लेखक अर्थात् अफसर ने ईजाद की हैं। गोपालप्रसाद व्यास के शब्दों में यह ईमानदार आत्मकथा भले ही न हो, पर 'मैं-मैं' की आदत का बयान है।

पुस्तक खूब बिकी पर अफसर उसका यथोचित् आनंद न ले पाया। दिल के दौरे से क्लब में पत्रकार के साथ शराब पीते, वह ऐसा ढेर हुआ कि अस्पताल जाते-जाते उसके प्राण-पखेरू उड़ गए। हमें संदेह है कि झूठ-सच की मिश्रित आत्मश्लाघा से उसे कहीं सड़क की हाय तो नहीं लग गई? पर सड़क को क्या पता कि अफसर ने कितने झूठे बयानों के माध्यम से किन-किन ईमानदार अधिकारियों को नहीं फँसाया है? किताब में उसने अपनी प्रशंसा की कितनी ऊँची-ऊँची पतंगें उड़ाई हैं! सड़क क्या पढ़ी-लिखी है? क्या वह रोज इधर-उधर बिखरे मिले अखबारों को पढ़ती है या सिर्फ यात्रियों की बातों से काम चला लेती है?

हम इन्हीं प्रश्नों से जूझ रहे थे कि हमें पड़ोस के पंडितजी के साक्षात् दर्शन हो गए। पंडितजी एक सिद्ध पुरुष हैं। न जाने कितने बड़े लोगों की कुंडली उन्होंने बाँची है। जाने कितनों को चूना लगाया है। एक-एक दिन में तीन-तीन शादियाँ करवाई हैं। हम पर भी उनकी कृपादृष्टि है। दूसरे उनका मजाक उड़ाते हैं। हमने ऐसी जुर्रत न सामने, न पीठ पीछे की है। हमने उनसे शंका-निवारण का निश्चय किया और जानना चाहा, ''आप कहते हैं कि जड़ और चेतन सब में प्राण हैं। फिर सड़क में भी होंगे।'' वे हमारी तरफ देखकर मुसकराए और बोले, ''हमने तो ऐसा आपसे क्या, किसी से भी नहीं कहा है, पर आपकी जिज्ञासा का समाधान हम अवश्य करेंगे। भगवान् द्वारा बनाई हर वस्तु में प्राण है, मनुष्य द्वारा निर्मित उत्पाद जैसे सड़क, कंप्यूटर, रोबोट आदि में न आत्मा है न प्राण।'' कहते हुए वे किसी के यज्ञोपवीत संस्कार के लिए सिधार गए।

तब से हम सोच रहे हैं कि मनुष्य तो ऊपरवाले का सर्वश्रेष्ठ सृजन है। पर कितने ऐसे इनसान हैं, जिनके आत्मा है? यदि ऐसा होता तो क्या ये हत्या, बलात्कार, अपहरण जैसे जघन्य अपराध होते या फिर दफ्तर के षड्यंत्र अथवा भ्रष्टाचार के थोक सियासी सौदे? यदि सड़क निर्जीव है तो फिर वह बोलेगी कैसे? वह तो गनीमत है कि सड़क के जुबान नहीं है। नहीं तो न जाने, कितने घोटाले, भ्रष्ट ठेके, सड़क दुर्घटना के सच सामने आते। किन-किन सफेदपोश चेहरों की काली करतूतों की पोल खुलती?

जरूरी है कि जीवन में आदर्शों के कुछ-न-कुछ भ्रम तो बने रहें, वरना जीना मुहाल हो जाएगा।

कहीं सड़क भी इस साक्षर अफसर के समान आत्मकथा लिखती तो कइयों को मुँह छिपाने को नकाबों का अभाव खलता। अपनी इस सोच को एक युवा मित्र सुधारते हैं, ''आप चिंता न करें, लोकलाज अब है ही कहाँ? वह तो दशकों पूर्व आत्महत्या कर चुकी है!''

९/५, राणा प्रताप मार्ग
लखनऊ-२२६००१

लेखकों से अनुरोध

- मौलिक तथा अप्रकाशित-अप्रसारित रचनाएँ ही भेजें।
- रचना फुलस्केप कागज पर साफ लिखी हुई अथवा शुद्ध टंकित की हुई मूल प्रति भेजें।
- पूर्व स्वीकृति बिना लंबी रचना न भेजें।
- केवल साहित्यिक रचनाएँ ही भेजें।
- प्रत्येक रचना पर शीर्षक, लेखक का नाम, पता एवं दूरभाष संख्या अवश्य लिखें; साथ ही लेखक परिचय एवं फोटो भी भेजें।
- डाक टिकट लगा लिफाफा साथ होने पर ही अस्वीकृत रचनाएँ वापस भेजी जा सकती हैं। अतः रचना की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- किसी अवसर विशेष पर आधारित आलेख को कृपया उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि समय रहते उसे प्रकाशन-योजना में शामिल किया जा सके।
- रचना भेजने के बाद कृपया दूरभाष द्वारा जानकारी न लें। रचनाओं का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय होगा।

सैर पर जाते हैं ये बादल

बाल-कविता

● बद्री प्रसाद वर्मा 'अनजान'

बादल

परदेसी बनकर
आते हैं ये बादल।
दो-चार दिन रुककर
फिर चले जाते हैं ये बादल।
पाहुन की तरह
अपनी सूरत
दिखलाते हैं ये बादल।
हवा की गाड़ी पर चढ़कर
सैर पर आते हैं ये बादल।

कभी यहाँ तो कभी वहाँ
रुक जाते हैं ये बादल।
गरमी से थोड़ी राहत
दिलाते हैं ये बादल।
हवा में ठंडापन
घोल जाते हैं ये बादल।
मौसम खुशगवार
बना जाते हैं ये बादल।
धरती की तपिश को
मिटा जाते हैं ये बादल।

पेड़ों के पत्तों में
हरियाली भर जाते हैं ये बादल।
बरसात का मौसम लेकर
आते हैं ये बादल।
चारों तरफ पानी बरसाते हैं यह बादल।

पानी

पानी हर दिन सबकी प्यास बुझाता है।
खेतों में हरियाली लाता है।
पेड़ों को नया जीवन देता है।
पानी पूरे बदन की सफाई करता है।
पानी के बिना कोई भी
जिंदा नहीं रह सकता है।
इसलिए पानी को बचाकर रखो।
इसे बेकार न फेंको, न बहाओ।
पानी की कीमत अनमोल है
इसे समझो।

सुपरिचित साहित्यकार। देश और विदेश की बाल पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। विदेशी रेडियो के हिंदी प्रसारणों पर रचनाएँ प्रचारित। ढेरों पुरस्कार प्राप्त।

मेरे सूरज दादा

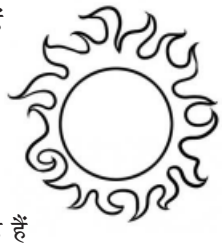

गुस्से में नजर आ रहे हैं
मेरे सूरज दादा।
दादागिरी दिखा रहे हैं
मेरे सूरज दादा।

आग के गोले बरसा रहे हैं
मेरे सूरज दादा।
सबके बदन झुलसा रहे हैं
मेरे सूरज दादा।

गरमी का पारा चढ़ा रहे हैं
मेरे सूरज दादा।
पानी को सोखे जा रहे हैं
मेरे सूरज दादा।

लाल-लाल आँखें दिखा रहे हैं
मेरे सूरज दादा।
धरती को जला रहे हैं
मेरे सूरज दादा।

तरस नहीं कुछ खा रहे हैं
मेरे सूरज दादा
अकड़ खुद दिखला रहे हैं
मेरे सूरज दादा।

रिमझिम पानी की बूँदें

उछल रही है कूद रही है
रिमझिम पानी की बूँदें।
भीग रही हैं भिगो रही हैं
रिमझिम पानी की बूँदें।

खुशी के गीत गा रही हैं
रिमझिम पानी की बूँदें।
सबका मन हर्षा रही हैं
रिमझिम पानी की बूँदें।

पेड़ों को खूब नहला रही हैं
रिमझिम पानी की बूँदें।
धरती की प्यास बुझा रही हैं
रिमझिम पानी की बूँदें।

आसमान से उड़कर आ रही हैं
रिमझिम पानी की बूँदें।
जल ही जल बरसा रही हैं
रिमझिम पानी की बूँदें।

गल्लामंडी, पोस्ट-गोला बाजार
गोरखपुर-२७३४०८ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०९८३८९११८३६

व्यंग्य

चंदू मैंने सपना देखा''

● अशोक गौतम

कल फिर बिन दाल के चपाती खाकर सोया तो एकदम नींद आ गई। नींद भी इतनी गहरी, जितनी बहुधा नेताओं को चुनाव के बाद आती है, चाहे वे हारे हों या जीते।

नींद आते ही मैंने पहली बार सपना देखा। सपने में देखा कि कभी बीवी से न जीतनेवाला अपने देश में चुनाव जीत गया है। अपनी जीत की खुशी में मन में आतिशबाजियाँ उड़ने लगीं तो तन में अनार चलने लगे।

बे-दीवाली घर में दीवाली सा माहौल हो गया। मीडिया समेत सब परेशान थे कि मैं आखिर कैसे नेताओं के परिवार का न होने के बाद भी चुनाव जीत गया? अब जीत गया तो जीत गया! यह मेरे देश की जनता है, कुछ भी कर सकती है। जिसे चाहे अपने भविष्य को दाँव पर लगा कुरसी पर बिठा सकती है और जिसे चाहे अपने पढ़े-लिखे बच्चों के भविष्य को ताक पर रख, उनके पाँच फेल बेटे को मंत्री बना सकती है।

पत्नी थी कि पूरे घर में नहीं समा पा रही थी। पूरा घर उसके लिए एक कोना लग रहा था। घर में त्योहार सा माहौल था। मोहल्ले के लोग मेरे खास होने के लिए हमारे टूटे आँगन में धमाल मचाए थे।

मेरे वोटरों को लग रहा था कि अब मंत्रिमंडल में मुझे जरूर कोई महत्त्वपूर्ण मंत्री का पद तय है। मैंने धूल जमी दीवार पर, फ्रेम में टँगी माला से सजी अपनी पी-एच.डी. की डिग्री निकाल सीने से लगाकर पोंछी। असल में जीतनेवालों में मैं ही बेकार पी-एच.डी. था। सच कहूँ, मैंने पी-एच.डी. सीने से बँदरिया के मरे बच्चे सी लगाए, ओवरऐज होने के बाद भी नौकरी के लिए बहुत कोशिश की, पर नहीं मिली तो नहीं मिली। फिर भी अपनी इस पी-एच.डी. का शुक्रगुजार हूँ कि इसके आसरे जैसी भी है, एक अदद बीवी तो मिल गई।

मैंने सपने में देखा, देखते-ही-देखते सरकार बनने के लिए गोटियाँ बिछने लगीं। बंदे कम तो गोटियाँ अनगिनत। मंत्री पद पाने के लिए हर कोई अपनी टाँग अड़ाने लगा तो कोई अपना पेट बजाने लगा, कोई अपनी जात दिखाने लगा तो कोई अपने हाथ दिखाने लगा। खैर जीतनेवालों के पास आँखें तो थीं ही नहीं, जो उन्हें फुड़वाने के चक्कर में कोई पड़ता।

अपने लाचार शुभचिंतकों के दम पर मैं भी पार्टी प्रधान से मंत्री पद के लिए उनके उकसाए जाने पर उनसे जा मिला, इस दम पर कि मैं इस पार्टी में सबसे अधिक पढ़ा-लिखा हूँ।

हालाँकि उस वक्त उनसे मिलने की रेल-पेल में मेरा कुरता-पाजामा फट गया। पर रात का वक्त था, सो मैंने भी औरों की तरह परवाह नहीं

जाने-माने लेखक एवं व्यंग्यकार। विगत २५ वर्षों से राष्ट्रीय पत्रिकाओं में १५०० के लगभग कहानी और व्यंग्य लेख के साथ-साथ 'लट्ठमेव जयते' व 'साढ़े तीन आखर अप्रोच के' प्रकाशित। हिमाचल प्रदेश सरकार द्वारा विशिष्ट लेखन पुरस्कार, प्रवक्ता सम्मान। संप्रति हिमाचल प्रदेश में अध्यापन कार्य।

की, क्योंकि औरों के कपड़ों के तो मुझसे भी बुरे हाल थे। सीधे कहूँ तो उनके तन पर तो कपड़े नाम की कोई चीज थी ही नहीं। एक को तो देखते हुए भी शरम लगी तो मैंने अपनी आँखें बंद कर लीं। तभी दूसरे ने मेरी आँखों पर से हाथ हटाते कहा, 'इस अँधेरे में मरना है क्या? मंत्री पद की चाह रखनेवालों की भीड़ में एक बार जो नीचे आ गए तो सात जन्म तक नहीं उठ पाओगे, बंधु।'

'पर ये क्या? यहाँ कपड़े पहनना वर्जित है क्या? यह मैं किस लोक में आ गया! अपने देश में ही हूँ क्या?' मैंने साश्चर्य पूछा तो वे मुझ पर हँसे और मंत्री पद का अपना आवेदन पार्टी हेड को थमाने, दूसरों को नीचे गिराते आगे हो लिये।

जैसे-तैसे मैं पार्टी प्रधान के पास तक पहुँच गया तो वह मुझे देख मुसकाए। लगा कि मुझे पहचान गए कि मैं कौन हूँ, तो मन को बड़ी राहत मिली कि चलो किसी ने तो कम-से-कम मुझे पहचाना कि मैं पी-एच.डी. हूँ। वरना इस मुई डिग्री की वजह से तो अब मुझे मेरे रिश्तेदार तक नहीं पहचानते। वे मुझसे नफरत करने लगे हैं। मैंने आव देखा न ताव और ऊँट पर बैठ कद बढ़ाने की ठान ली, यह जानते हुए भी कि ऊँट पर बैठ कद बढ़ाना हर लोक में हानिकारक होता है।

'और कैसे हो पी-एच.डी.वा? आखिर तुम भी चुनाव जीत ही गए! हमें तो हंडर्ड परसेंट खतरा था कि पार्टी में वह अपना अपनढ़ कैंडिडेट चुनाव हारे या न, पर तुम चुनाव जरूर हारोगे। सच कहूँ, तुम्हें टिकट देकर हमने अपने मौसरे भाई के बेटे को निराश कर दिया था।'

'आपके आशीर्वाद से जीत गया सर। अब एक और कृपा कर देते तो।' कह मैंने पी-एच.डी. की डिग्री उन्हें दिखाते हुए उनसे निवेदन किया।

'तो अब क्या चाहते हो?'

'मेरे पास पी-एच.डी. की असली डिग्री है। मेरे हिसाब से मुझे शिक्षा मंत्री बना दो तो शिक्षा जगत् में ऐसी क्रांति ला दूँ कि हर पढ़ा-

लिखा किसी चार पास नेता के आगे-पीछे न घूमे।'

'अच्छा, तो हमारी ही बिरादरी के पर काटने निकल गए अभी से ये पी-एच.डी. का कैंचा लिये?' मुझे अपनी गलती का अहसास हुआ तो उनके चरणों में बिना एक पल गँवाए लोटपोट हुआ। तब जाकर उनका गुस्सा कुछ ठंडा हुआ।

'पर यह तो तय हो गया है कि वह दस फेल कामप्रसाद ही शिक्षा मंत्री बनेंगे। वाह! क्या कमाल किया उन्होंने अब के चुनाव में। बुद्धुओं को तो बुद्धू बनाया ही, पढ़े-लिखों को भी इस सहजता से बुद्धू बना गए कि हम तो उनके काम से इतने प्रसन्न हैं, जो सरस्वती भी अपने मंत्रिमंडल में शिक्षा विभाग माँगें तो उनको भी न दें।'

'तो हमें संस्कृति मंत्री ही बना दीजिए? मेरा शोध भी संस्कृति पर ही है!'

'जे संस्कृति का होती है? ऊ हमारे वे बनारसीदासजी देखेंगे इस विभाग को, जो हर कहीं घोड़ी पर दूल्हा देखा नहीं कि घोड़ी के आगे नाचने लग जाते हैं। उनसे बेहतर संस्कृति मंत्री तीनों लोकों में नहीं मिलेगा।'

'तो सर हमें गन्ना मंत्री बनाकर ही जनसेवा का छोटा सा मौका दे देते।'

'अरे! वह तो हमने चुनाव से पहले ही डिसाइड कर लिया था कि पार्टी हारे या जीते, अपने गन्ना मंत्री होंगे तो बस वह ही होंगे। कमबख्त, क्या विरोधियों की भीड़-लट्ठ घुमाते हैं कि उनके सामने बड़ों-बड़ों के तमंचे बौने पड़ जाते हैं।'

'तो सर मुझे पर्यटन मंत्री ही बना देते। नौकरी के चक्कर में दफ्तर-दफ्तर की बड़ी यात्राएँ की हैं।'

'सॉरी! ऊ भी नहीं हम कर पाएँगे। ऊ तो पहले ही तय है। वे ही पर्यटन मंत्री होंगे। का है न कि पिछले सरकार के दिनों में कानून से छिपते-छिपाते उन्होंने इत्ता पर्यटन किया कि अब इस पद पर पहला हक तो उनका ही बनता है न?'

'पर काहे सर?'

'बचुआ, तुम पी-एच.डी. हो न! अरे, कुछ करना तुम्हारे बस की बात नहीं, तुम कुछ से पहले सौ बार सोचोगे और हमें तो ऐसे बंदे चाहिए, जो करने से पहले तो करने से पहले, करने के बाद भी कछु नाहीं सोचें।'

'पर अभी भी मैं हारा नहीं हूँ। चंदू, मैंने अभी फिर सपना देखा कि...'

गौतम निवास, अप्पर सेरी रोड,
सोलन-१७३२१२ (हि.प्र.)
दूरभाष : ९४१८०७००८९

अनूठा न्याय

बाल-कथा

● श्यामसखा श्याम

उज्जैन के राजा भोज बड़े ही न्याय प्रिय प्रजापालक राजा थे। एक दिन राजा भोज अपने रथ पर सवार होकर जनता का हाल देखने-पूछने को निकले। रास्ते में एक जगह कुछ लड़के पका हुआ आम तोड़ पत्थर से रहे था। संयोग से एक लड़के का फेंका हुआ पत्थर फल को न लगकर वहाँ से गुजर रहे राजा भोज के माथे पर जा लगा। माथे से खून बहने लगा। राजा के साथ चल रहे वैद्य तो राजा की मरहम-पट्टी में लग गए। उधर राजा के अंगरक्षकों ने उस डरकर भाग रहे लड़के को पकड़ लिया। सिपाहियों ने लड़के को राजा के आगे पेश कर दिया। राजा के साथ बैठे सभासदों ने कहा, ''महाराज इस दुष्ट लड़के को कठोर दंड देना चाहिए।''

राजा ने बच्चे से पूछा, ''बच्चे मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है, जो तुमने मुझे पत्थर मारा।''

बच्चा बोला, ''महाराज, मैंने आपको पत्थर नहीं मारा था। मैंने तो वहाँ पर लगे आम के पेड़ से फल तोड़ने के लिए पेड़ पर पत्थर फेंका था। वह छिटककर आपको आ लगा।''

राजा ने कहा, ''बच्चे तुम्हें पेड़ पर चढ़कर फल तोड़ने चाहिए।'' और अगर पत्थर से भी तोड़ने हो ध्यान रखना चाहिए कि वे किसी राहगीर को लग सकते हैं। समझे।''

बच्चे ने हाथ जोड़कर कहा, ''जी महाराज, आगे से मैं ध्यान रखूँगा।''

राजा ने बच्चे को छोड़ने का हुक्म दिया। पास बैठी नन्ही राजकुमारी बोल, ''उठी पिताजी, आपने उस शरारती बच्चे को, जिसने आपका माथा फोड़ दिया, बिना दंड दिए क्यों छोड़ दिया।''

राजा हँसकर बोले, ''बेटी जब पेड़ पत्थर की चोट खा करके मीठे फल देता है तब हम उसको दंड कैसे दें? हाँ, हमने बच्चे को आगे से कह दिया है कि वह आगे से ध्यान रखे कि पत्थर किसी राहगीर को न लगे।'' सभी सभासदों ने राजा के अनूठे न्याय का स्वागत करतल ध्वनि से किया।

७०३, जी.एच.एस., ८८ पल्लवी
सेक्टर-२०, पंचकुला-१३४११०
दूरभाष : ०९४१६३५९०१९

बाल-कहानी

मुफ्त की दावतें

● सुधा विजय

तीतू तेंदुआ घने जंगल में रहता था। उसके जैसा चुस्त-फुरतीला कोई नहीं था। उसकी एक कमजोरी थी कि वह बहुत जल्दी हार मान जाता था। एक दिन शिकार की खोज में वह भटक रहा था। सुबह से शाम हो गई, पर कोई शिकार हाथ नहीं लगा।

तीतू सोचने लगा, 'हाय, मेरे पेट में तो भूख से चूहे दौड़ रहे हैं। क्यों न जंगल से सटे गाँव में जाकर शिकार पकड़ूँ।'

मोटे-तगड़े बैल और बकरे की कल्पना मात्र से तीतू के मुँह में पानी आ गया। वह अपनी माँ की सीख भूल गया कि मनुष्य खतरनाक होते हैं। वह कुछ ही पल में जंगल से सटे खेत में घात लगाकर बैठ गया। कुछ समय बाद ही उसने एक गाय को अपना शिकार बना लिया।

नवोदित रचनाकार। अंग्रेजी में एम.ए.। पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित।

अब आसान शिकार की खोज में रोज ही तीतू गाँव में धावा बोलने लगा। गाँव भर में तीतू का आतंक हावी था। सभी अपने-अपने मवेशियों की जान की रक्षा के लिए चिंतित थे। कइयों ने तो वनविभाग को सूचना दे डाली थी कि इस तेंदुए को रोकें, वरना अंजाम बुरा होगा।

इन सब बातों से बेखबर तीतू अपने भाग्य पर इठला रहा था और मुफ्त की दावतें उड़ा रहा था।

जंगल की सबसे चालाक जानवर रोली लोमड़ी को तीतू की करतूत की खबर मिली तो उसके दिमाग में खतरे की घंटी बजने लगी। तीतू से उसकी जान-पहचान बहुत पुरानी थी। कई बार तीतू की माँ अपने शिकार का कुछ हिस्सा उसे दे देती थी। वह तुरंत तीतू से मिलने पहुँची। उसे देखते ही तीतू चहककर बोला, ''क्या हाल है मौसी? बड़े दिनों बाद दर्शन दिए। आज शाम को मैं तुम्हें ताजे भैंस की दावत दूँगा।''

रोली गुस्से से बोली, ''अरे बेवकूफ, आसान शिकार के लालच में तू अपनी जान को जोखिम में क्यों डाल रहा है?''

तीतू अपनी मूँछों पर ताव देते हुए बोला, ''क्यों मौसी, सुबह-सुबह मजाक कर रही हो। भला मुझ जैसे खूँखार जानवर से कौन पंगा लेगा। मेरी एक गुर्राहट पर सभी थर-थर काँपते हैं।''

रोली समझाते हुए बोली, ''तीतू, मत भूल वह इनसानों का इलाका है। उनका दिमाग बड़ा तेज चलता है। लोग तुमसे बहुत दिन नहीं डरेंगे। वे तुम्हें काबू करने के लिए कोई-न-कोई उपाय जरूर करेंगे।''

तीतू तुनककर बोला, ''मनुष्य अपने स्वार्थ के लिए हमारे जंगलों को तबाह कर रहा है, उसका क्या? मैं उनके शिकार खा रहा हूँ तो पहाड़ टूट पड़ा।''

रोली बोली, ''यह बात तो है, पर मत भूलो, हमारे लिए कई संरक्षण कार्यक्रम भी तो चल रहे हैं। जंगल तो हिरणों, जंगली सूअर व अन्य जानवरों से भरा पड़ा है, फिर यह जोखिम क्यों? भलाई इसी में है कि हमारा मानव के जीवन में हस्तक्षेप कम हो।''

''मैं तुम्हारी शुभचिंतक हूँ, सो तुम्हें आगाह करने आई हूँ, अब तुम्हारी मरजी।''

रोली के जाने के बाद तीतू सोचने पर मजबूर हो गया। उसने दो दिन गाँव की ओर रुख नहीं किया। तीसरे दिन जब उसे शिकार ढूँढ़ने में मुश्किल होने लगी तो वह अनमना सा गाँव की ओर निकल पड़ा।

'रोली मौसी तो वैसे भी डरपोक है और सबको अपने जैसे बनाना चाहती है।' तीतू ने मन-ही-मन अपने को सही ठहराया।

उसने दबे पाँव गाँव में कदम रखा और शिकार तलाशने लगा। कुछ दूरी पर उसे पेड़ के नीचे एक बकरी बँधी दिखी।

''वाह, ये हुई न बात।'' तीतू ने अपनी जीभ को होंठों पर फेरते हुए कहा।

बकरी तो तीतू को देखकर मारे डर के मिमियाना भूल गई थी। वह अपनी रस्सी को खींचने लगी। तीतू ने अपनी किस्मत पर इतराते हुए जैसे ही बकरी पर छलाँग लगाई, तभी खटाक की आवाज आई। तीतू कुछ सँभलता, इससे पहले ही एक बड़ा सा जाल उसपर गिरा और वह कैद हो गया।

''हाय यह क्या है?'' वह घबराकर अपने को छुड़ाने का प्रयास करने लगा, पर वह उसमें उलझता चला गया।

कुछ ही देर में उसके आसपास लोगों का हुजूम लग गया।

सभी उसे देखकर कह रहे थे, ''आखिरकार फँस गया न जाल में। बड़ी दावतें उड़ा रहा था हमारे जानवरों की।''

तभी एक बड़ी सी गाड़ी आकर रुकी और उसमें से वनविभाग के कुछ अधिकारी यूनीफॉर्म पहने उतरे। उन्होंने तीतू को बेहोश कर दिया। जब तीतू को होश आया तो अपने को पिंजरे में कैद पाया।

''माँ, माँ! इस तेंदुए को कहाँ लेकर जा रहे हैं?'' भीड़ में खड़े एक बच्चे ने पूछा।

''इसे अब चिड़ियाघर में भेजा जाएगा, जहाँ यह हमें तंग न कर पाए।'' माँ ने कहा।

इतना सुनते ही तीतू को अपने जंगल से बिछुड़ने का गम सताने लगा

और उसकी आँखों से आँसू बहने लगे।

'काश! मैं मौसी की बात मान लेता!' वह सुबकने लगा।

वहीं जंगल के किनारे खड़ी रोली की आँखों में आँसू थे।

''विनाश काले विपरीत बुद्धि। काश, तीतू ने मेरी बात मानी होती तो वह स्वच्छंद होकर जंगल में घूमता।'' वह आँसू पोंछते हुए बोली। तभी एक बड़ी गाड़ी रुकी और उसमें से एक महिला अन्य कुछ लोगों के साथ उतरी।

उसका नाम सरला कौल था और वे एनिमल एक्टीविस्ट थी। उन्होंने कुछ देर वहाँ खड़े वन्य अधिकारियों से बातें कीं।

फिर भीड़ की तरफ मुखातिब होकर बोली, ''क्यों न इस तेंदुए को सुधरने का मौका दें? हाँ, अगर दुबारा इसने ऊधम मचाया तो मैं नहीं रोकूँगी।''

गाँववाले भी वन्यजीव के हितैषी थे और सभी ने 'हाँ' में सिर हिलाया। तीतू की खुशी का ठिकाना न था। जैसे ही पिंजरा खुला, उसने सरपट दौड़ते हुए वन की राह ली। उसने रोली को गले लगाया और कहा, ''अब न उड़ाऊँगा मुफ्त की दावतें।''

रोली ने चैन की साँस ली। इस बार उसकी आँखों में खुशी के आँसू थे। सा.अ.

११/२६६, पहली मंजिल,
डी.डी.ए. फ्लैट मदनगीर
नई दिल्ली-११००६२

लघुकथा

परिवर्तन

● किरण राजपुरोहित 'नितिला'

: एक :

बेटे को ट्यूशन छोड़ते हुए शाम के लिए सब्जी और दूसरे छोटे-मोटे काम निबटाने थे। देर तो हो ही गई थी, फिर भी ट्रैफिक कम होने के कारण देरी कम होने की उम्मीद थी। पर आगे जालोरी गेट पर आते ही रास्ते थम से गए थे। भीड़, शोर चहुँओर था। नारे, शोर-शराबे और हॉर्न की पीं-पीं, पों-पों दिमाग को खोखला किए दे रही थी। कोई जुलूस था। शोर ने कुछ सुनने न दिया पर हड़तालियों के हाथों में तख्तियाँ थीं— 'विदेशी टैक्सियाँ वापस जाओ। हमें बेराजगारी से बचाओ, ऑटो चालक संघ।' थोड़ा माजरा समझ आया। पास ही खड़े एक ऑटो वाले भाई से पूछा तो बोला, ''अरे बहनसा, नई टैक्सियाँ जो आ रही हैं, वह घर बैठे ही इंटरनेट से बुलाने पर घर आती हैं और बहुत ही आरामदायक है। हर तरह से बेहतर है पर हमारा क्या होगा? हम तो बेरोजगार हो जाएँगे न, इसीलिए ये जुलूस है। हम तो ऑटो बंद करके सिर पकड़ के रोएँगे। यही काम करते आए हैं और यही रास आता है। अब हमारे घर-परिवार का क्या होगा?'' कहते-कहते सिर धुनने लगा।

उसने सहमति में सिर हिलाया और धीमे-धीमे स्कूटी को आगे बढ़ाया। एक दिन ऐसे ही इन ऑटो चालकों ने सदियों पुरानी घोड़ागाडी, ताँगा, बैलगाड़ी, ऊँटगाड़ीवालों को एक झटके में बेराजगार कर दिया था। कुछ समय तो सड़क किनारे खड़े दिख जाते थे। अब किसी म्यूजियम में जरूर दिखते हैं। जिनकी परवाह तब ऑटो चालकों ने न की, उन परिवारों का क्या हुआ होगा।

: दो :

बस में यात्रा के दौरान पास की सीट के संगी एक भाईसाहब से आधुनिक जीवन पर वार्त्ता का सिलसिला चल पड़ा। नए-पुराने जमाने की चर्चा से चलती बात का सिरा इंटरनेट तक जा पहुँचा। इंटरनेट कंप्यूटर आदि के कई फायदे गिनाते हुए वह विजेता अनुभव कर रहे थे। मेरा पक्ष इंटरनेट के फायदों के साथ नुकसान और उपलब्धता पर भी था। हर समय हर चीज या सुविधा उपलब्ध नहीं रहती या हाथ नहीं आती। इसी बीच उन्होंने ऑनलाइन टैक्सी मोबाइल बुकिंग के फायदे गिनाए, जिन पर मैं सहमत था। पर यह हर जगह उपलब्ध न होने पर पुराने ऑटो का ही सहारा था। उन्होंने जोर-शोर से पैरवी की और 'हाथ कंगन को आरसी क्या और पढ़े-लिखे को फारसी क्या' के मूड में आए। तब तक बस अपने स्टैंड तक पहुँच चुकी थी। वे उतरते-उतरते मोबाइल से टैक्सी बुक करने में मशगूल थे। कंडक्टर ने झल्लाते हुए जल्दी उतरने का इशारा किया। मैं उनसे आगे निकलते हुए बस के दरवाजे पर पहुँचा ही था कि, 'सीधे जाओ सा···' की पुकार हुई। जान गया कि ऑटो वाला ही है। मैंने वहीं से बैठा उसे थमाया तो उसने अनायास ही झेल लिया और उतरकर गंतव्य बताते हुए आगे चलने का इशारा किया। हाँ, कहते हुए वह फुरती से चल पड़ा। कुछ क्षणों में मैं ऑटो में सवार था और वह घर की राह। गुजरते हुए उन भाई साहब पर नजर पड़ी तो वह मोबाइल से उलझते हैरान-परेशान माथे का पसीना पोंछते हुए दिखे। ऑटो रुकवा मैंने इशारे से पूछा तो बोले कि मोबाइल हैंग हो गया है। मैंने मुसकराते हुए उनके पीछे खड़े ऑटो की ओर इशारा किया। सा.अ.

सी-१३९ शास्त्री नगर
जोधपुर, राजस्थान
दूरभाष : ०९१७५६८०६८८४४

सुशील कुमार सेन : एक वीर बालक

● ऊषा निगम

हमारी आजादी की लड़ाई में छोटी आयु के बालकों ने अपनी तरह से अंग्रेजी राज्य का विरोध किया था। १९०५ में गवर्नर जनरल लॉर्ड कर्जन ने बंगाल का विभाजन किया, जिसका बंगालवासियों ने घोर विरोध किया था। आरंभ में यह विरोध अंग्रेजी वस्तुओं के बहिष्कार के रूप में सामने आया। शीघ्र ही सरकारी स्कूलों का बहिष्कार इस विरोध का एक हिस्सा बन गया। सरकारी स्कूलों को छोड़कर विद्यार्थी राष्ट्रीय स्कूलों में प्रवेश लेने लगे। ऐसे विद्यार्थियों में सभी आयु के विद्यार्थी शामिल थे। इसके अतिरिक्त अंग्रेज सरकार विरोधी सभाओं, जुलूसों तथा वंदे मातरम् के नारों का प्रभाव बालकों पर भी पड़ रहा था। आज हम ऐसे ही एक बालक की चर्चा करने जा रहे हैं, जो बंगाल के जन-आंदोलन का एक हिस्सा बना और वहाँ के नेताओं और समाचार-पत्रों में चर्चा का विषय रहा। यह बालक सुशील कुमार सेन था।

श्रीअरविंद घोष की प्रेरणा से कोलकाता से 'वंदे मातरम्' पत्र का प्रकाशन आरंभ हुआ था। इस पत्र के माध्यम से भारतवासियों के सामने देश की पूर्ण स्वतंत्रता का लक्ष्य रखा गया। अंग्रेजी सरकार ने इस पत्र को सरकार विरोधी माना और उसके विरुद्ध न्यायिक काररवाई की गई। 'वंदे मातरम्' के संपादक विपिन चंद्र पाल को दोषी माना गया। उन पर श्रीअरविंद घोष के विरुद्ध गवाही देने का दबाव डाला जा रहा था, जिसके लिए विपिन चंद्र पाल बिल्कुल सहमत नहीं थे।

२६ अगस्त, १९०७ को हुई घटनाओं ने सुशील कुमार को नायक बना दिया। उस दिन लाल बाजार के न्यायालय में, कलकत्ता के चीफ मजिस्ट्रेट किंग्सफोर्ड के सामने 'वंदे मातरम्' के केस की सुनवाई होने जा रही थी। कचहरी परिसर में तमाम लोग एकत्र हो रहे थे। उनमें इस केस को लेकर बड़ी उत्तेजना थी। वे विपिन चंद्र पाल के निर्णय का समर्थन कर रहे थे और वंदे मातरम् का नारा लगा रहे थे। वस्तुतः उन वर्षों में बंगाल में जन जागृति और अंग्रेजों के प्रति जिस घृणा का जन्म हो चुका था, यह विरोध प्रदर्शन इसी का परिणाम था। कचहरी परिसर के शोर-शराबे से अंदर चल रही काररवाई में बाधा उत्पन्न हो रही थी। किंग्सफोर्ड ने भीड़ को तितर-बितर करने के लिए लाठीचार्ज की आज्ञा दे दी। पुलिस ने पूरी तत्परता से आज्ञा का पालन किया। लाठीचार्ज के दौरान बड़ी संख्या में लोग आहत हुए। यहाँ तक कि जो लोग उस रास्ते से गुजर रहे थे, उन निर्दोष व्यक्तियों पर भी प्रहार किए गए, जिससे अनेक व्यक्ति गंभीर रूप से घायल हुए।

सुप्रसिद्ध लेखिका। स्वतंत्रता सेनानियों पर विशेष लेखन। पत्र-पत्रिकाओं में लेख आदि निरंतर प्रकाशित। 'कानपुर : एक सिंहावलोकन' स्मारिका भी। सन् १९७०-७२ में पी.पी.एन. कॉलेज में अध्यापन कार्य किया। संप्रति लेखन में रत।

उपर्युक्त पुलिस काररवाई के दौरान सुशील कुमार सेन भी उधर से गुजर रहा था। उसने एक पुलिस सार्जेंट को लोगों को मारते-पीटते देखा। उसने अनायास ही इस अन्याय का विरोध किया। संभवतः उससे यह अन्याय देखा नहीं गया। उसने घुड़सवार सार्जेंट को उछलकर यों मारा। दोनों में घूँसों का आदान-प्रदान हुआ। कहाँ पंद्रह वर्ष का वह बालक और कहाँ हट्टा-कट्टा अंग्रेज सार्जेंट। दोनों के बीच होनेवाले इस संघर्ष में सुशील के जीतने की कोई संभावना नहीं थी, फिर भी उसने सार्जेंट को नीचे गिरा दिया। यह एक अनहोनी घटना थी। एक गुलाम बालक ने फिरंगी सार्जेंट को नीचे गिरा दिया था। क्रांति और स्वाधीनता की आवाज को मुखर करनेवाले पत्र 'संध्या' ने ३१ अगस्त, १९०७ के अंक में सुशील की प्रशंसा करते हुए लिखा, ''जिसने भी लाल बाजार में सुशील के वीरतापूर्ण कृत्य को देखा, वह चकित रह गया। सुशील का उत्साह देखने योग्य था। फिरंगी जो दिखाया करते हैं, उससे किसी को भयभीत होने की आवश्यकता नहीं है। उनके भीतर भूसा भरा है और सुशील ने उसे बाहर निकालकर उनके दिखावटी आवरण को नष्ट कर दिया है।''

२७ अगस्त, १९०७ को सार्जेंट की शिकायत पर सुशील के विरुद्ध किंग्सफोर्ड की अदालत में मुकदमा दायर किया गया। अपने ऊपर लगाए अभियोगों का उत्तर देते हुए उसने कहा, ''मैं नहीं जानता कि मैं दोषी हूँ या नहीं। मैं सियालदह से आ रहा था। लाल बाजार के निकट आने पर मैंने विशाल भीड़ देखी। मैंने पास आकर यह जानने का प्रयास किया कि समस्या क्या है। उसी समय इस सार्जेंट ने जो भी मिला, उस पर प्रहार करना आरंभ कर दिया। मैंने भी उस पर प्रहार किया। वह बार-बार मुझे घूँसे मारता रहा और स्वयं को बचाने के लिए बदले में मैंने भी घूँसे मारे।

कुछ अन्य पुलिस अधिकारियों ने आकर मुझे सड़क पर गिरा दिया।'' बचाव पक्ष के वकील की दलीलों को सुनने के बाद भी किंग्सफोर्ड ने सुशील को ५ बेंतों की सजा दी।

११ नवंबर, १९०७ के अंक में 'वंदे मातरम्' पत्र ने सुशील की प्रशंसा करते हुए लिखा था कि सुशील नें बड़ी बहादुरी से इस दंड का सामना किया। जिस समय उसे बेंतों की सजा मिल रही थी, उसके चेहरे पर घबराहट या दर्द के कोई चिह्न नहीं थे, क्योंकि उसे यह प्रतीत हुआ कि ऐसा प्रदर्शित करना राष्ट्रीय हित में नहीं होगा। पीड़ा की अभिव्यक्ति से सरकारी-तंत्र प्रसन्न होगा। 'वंदे मातरम्' पत्र ने स्वीकार किया कि सुशील कुमार सेन के साहस ने अन्य नौजवानों के साहस को भी बढ़ाया तथा साहसी युवकों की संख्या बढ़ने लगी, जिससे शासन-तंत्र में घबराहट पैदा होने लगी।

किंग्सफोर्ड के इस निर्णय ने उसे अलोकप्रिय तो बनाया ही, साथ ही सरकार की भी आलोचना हुई। अंग्रेजी पत्र 'नेशन' ने भी एक शिक्षित छात्र को राजनीतिक कारण से बेंत की सजा देने को सरकार के लिए कलंक का विषय बताया।

सुशील नेशनल कॉलेज का विद्यार्थी था। उसके सम्मान में यह कॉलेज एक दिन के लिए बंद कर दिया गया। २८ अगस्त, १९०७ को कॉलेज स्क्वेयर की जनसभा में उसको सम्मानित किया गया। बंगाल के प्रसिद्ध नेता सुरेंद्रनाथ बनर्जी ने सभा के अध्यक्ष के पास एक स्वर्ण पदक भेजा, जिसे सुशील कुमार सेन को देकर उसे पुरस्कृत किया गया। इसके बाद उसे एक घोड़ागाड़ी में बैठाकर देशभक्ति के गीत गाते हुए पूरे शहर में घुमाया गया। इसी बालक को १५ मई, १९०८ को अलीपुर षड्यंत्र केस के संदर्भ में बंदी बनाया गया, लेकिन पर्याप्त साक्ष्य के अभाव में उसे छोड़ दिया गया।

पंद्रह वर्ष के इस मासूम बालक की कहानी यहीं खत्म नहीं होती है। १९१५ में क्रांतिकारी दल की धन की आवश्यकता पूर्ति के लिए नादिया जिले में दो डकैतियाँ डाली गई थीं। जलमार्ग से भागते समय गलती से अपने ही एक साथी की गोली से सुशील घायल हो गया। बचने की संभावना नहीं थी। अत: उसने अपने साथियों को मृत्यु के बाद उसका मस्तक काटकर शव को नदी में फेंक देने का आदेश दिया, ताकि नाव का मार हल्का हो जाए। साथियों ने ऐसा ही किया। बाद में सुशील का शव किसी को नहीं मिला। सुशील कुमार सेन क्रांतिकारी दल का एक कार्यकर्ता मात्र था। उस समय देश में लाल, बाल, पाल और श्रीअरविंद घोष जैसे नेताओं तथा केसरी, मराठा, वंदे मातरम्, युगांतर, पंजाबी, स्वराज्य आदि पत्रों ने एक स्वर से देश के युवकों से निर्भय होने का आह्वान किया था। वे निर्भय हुए भी। वीर बालक सुशील कुमार सेन ऐसी ही निर्भयता की मिसाल बन गया।

७४ कैंट, कानपुर-२०८००४
दूरभाष : ०९७९२७३३७७७

सुधी पाठकों से निवेदन

- जिन पाठकों की वार्षिक सदस्यता समाप्त हो रही है, कृपया वे सदस्यता का नवीनीकरण समय से करवा लें। साथ ही अपने मित्रों, संबंधियों को भी सदस्यता ग्रहण करने के लिए प्रेरित करने की कृपा करें।
- सदस्यता के नवीनीकरण अथवा पत्राचार के समय कृपया अपने सदस्यता क्रमांक का उल्लेख अवश्य करें।
- सदस्यता शुल्क यदि मनीऑर्डर द्वारा भेजें तो कृपया इसकी सूचना अलग से पत्र द्वारा अपनी सदस्यता संख्या का उल्लेख करते हुए दें।
- चैक अथवा बैंक-ड्राफ्ट साहित्य अमृत के नाम से भेजे जा सकते हैं।
- ऑन लाइन बैंकिंग के माध्यम से सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया के एकाउंट नं. १११०७३४३९३ अथवा CBIN ०२८०२९७ में साहित्य अमृत के नाम से शुल्क जमा कर फोन अथवा पत्र द्वारा सूचित अवश्य करें।
- पत्रिका न मिलने पर १५ से २० तारीख तक सूचित कर दें, ताकि वह अंक नए अंक के साथ भेजा जा सके।
- आपको अगर साहित्य अमृत का अंक प्राप्त न हो रहा हो तो कृपया अपने पोस्ट ऑफिस में पोस्टमैन या पोस्टमास्टर से लिखित निवेदन करें। ऐसा करने पर कई पाठकों को पत्रिका समय पर प्राप्त होने लगी है।
- सदस्यता संबंधी किसी भी शिकायत के लिए कृपया कार्यालय दिवस में २ से ५ बजे तक फोन नं. ०११-२३२५७५५५, २३२७६३१६ अथवा sahityaamrit@gmail.com पर इ-मेल करें।

बाल-कथा

चिड़िया रानी गाँव चली

● पुष्पा खरे

चिड़िया अपनी बेटी झुनझुनिया के साथ शहर में रहती थी। उसने एक पेड़ पर अपना घोंसला बना रखा था। चिड़िया बहुत परिश्रमी थी, अपनी बेटी को हमेशा सिखलाती रहती कि मेहनत करना बहुत अच्छी बात होती है। बेटी झुनझुनिया भी बहुत समझदार थी। वह अपनी माँ की बात को बहुत ध्यान से सुनती। झुनझुनिया को अभी माँ अपने साथ नहीं ले जाती थी। चिड़िया कहती कि अभी तुम छोटी हो, थोड़ी और बड़ी हो जाओगी तब साथ ले चलेंगे। झुनझुनिया कहती कि ठीक है माँ, जैसा तुम कहोगी, वैसा करूँगी।

चिड़िया अब काम पर निकल रही थी, लेकिन उसको एक बात अचानक याद आ गई, उसने झुनझुनिया को पुकारा, ''बेटी, तुम्हें एक बात बताना तो भूल ही गई। कल गाँव से मेरी बचपन की एक सहेली आई थी, उन्होंने बतलाया कि कल तुम्हारे नाना-नानी आनेवाले हैं।'' झुनझुनिया यह सुनकर बहुत खुश हो गई। माँ ने कहा, ''तुम उनका इंतजार करना। मैं नाश्ता लेकर शाम तक वापस आ जाऊँगी। ठीक है माँ।'' झुनझुनिया अपने घोंसले के अंदर चली गई और माँ चिड़िया काम पर। झुनझुनिया आज बहुत खुश थी। वह घोंसले को साफ करने लगी, क्योंकि नाना-नानी को सफाई बहुत पसंद है। झुनझुनिया का आज सोने का मन नहीं कर रहा था और डर भी था कि नाना-नानी आए और कहीं मेरी नींद लग गई तो वे परेशान होंगे। ऐसा सोचकर झुनझुनिया सोई नहीं। थोड़ी-थोड़ी देर में बाहर झाँककर देख लेती। अब वह चुपचाप बैठ गई थी। बाहर से आवाज आई। झुनझुनिया जल्दी बाहर निकली और नानी से लिपट गई, ''आइए, मैं आप लोगों का कब से इंतजार कर रही थी!'' ''चलो, तुम्हारी माँ कहाँ है?'' झुनझुनिया बोली, ''माँ आपके नाश्ते का इंतजाम करने गई है। आप लोग आराम कर लीजिए, माँ आती ही होंगी।''

नाना-नानी आराम करने लगे। वे सो गए, इतने में माँ भी आ गई। ''झुनझुन'' माँ ने प्यार से नाम पुकारा, ''क्या तुम्हारे नाना-नानी आ गए?''

''हाँ माँ, वे सो रहे हैं।'' माँ बोली, ''ठीक है, वे थक गए होंगे।'' माँ की आवाज सुनकर नानी-नाना जाग गए। माँ ने कहा, ''उठिए, आप लोग नाश्ता कर लीजिए। खुशबूवाले चावल लेकर आई हूँ।'' माँ ने नाना-नानी को चावल परोस दिए। ''आज तो बहुत स्वादिष्ट खाना है।'' झुनझुनिया जाकर नानी की गोद में जा बैठी। नानी ने उसको भी खाना खिलाना चाहा, पर झुनझुनिया ने अपना पेट नानी को दिखलाया। नानी हँसने लगी, नाना को भी हँसी आ गई। नानी ने चिड़िया माँ से कहा, ''बेटा, तुम थक जाती होगी। अब शहर का जीवन बहुत कठिन होता जा रहा है। इसीलिए मैं गाँव में रहना पसंद करती हूँ। उधर अभी भी खाने की कोई कमी नहीं।''

चिड़िया ने कहा, ''हाँ माँ, शहर का जीवन थोड़ा कठिन तो है, इधर बच्चे भी पता नहीं खाने में क्या पसंद करने लगे हैं। मैगी, पिज्जा।'' नानी ने कहा, ''इसीलिए तो मैं तुमसे कह रही हूँ कि अब इस बार गाँव चलो।''

जानी-मानी कवयित्री-कथाकार। 'बुंदेली लोकगीत संग्रह', 'बुंदेली लोककथा' एवं पत्र-पत्रिकाओं में लघुकथा एवं अन्य रचनाएँ प्रकाशित।

झुनझुनिया बोली, ''नानी, आप हमें पुराने जमाने की बात सुनाइए।'' नानी ने कहा, ''ठीक है, मैं आज तुम्हें अपने जमाने की बात सुनाती हूँ। तुम विश्वास करोगी न झुनझुन। मेरे जमाने में लोग सुबह से ही अपने आँगन और छत में कच्चे चावल डाल देते थे। पीने का पानी रखते थे। हम लोग सुबह निकलते, नाश्ता करते और वापस घर आ जाते। इतना ही नहीं, दोपहर में जाते। पका-पकाया चावल कटोरी में भरकर रखा हुआ मिलता।'' झुनझुनिया ने नानी से कहा, ''आप लोगों के तो मजे थे। हम लोगों के जमाने में ऐसा क्यों नहीं?'' नानी बोली, ''अब तरह-तरह का खाना जो चल गया है। बच्चे दाल-चावल खाना पसंद नहीं करते।'' झुनझुनिया बीच में बोल पड़ी, ''हाँ नानी, आप ठीक कह रही हैं। माँ भी यही कहती है। इसीलिए माँ को आज समझाऊँगी। शहर में रहकर इतनी परेशानी क्यों उठा रही हैं? गाँव चलें, उधर अभी भी इनसान पक्षियों का ध्यान रखते हैं।'' चिड़िया की माँ ने झुनझुनिया से पूछा, ''तुम्हारा क्या मन है बेटी?'' झुनझुनिया फौरन तैयार हो गई, ''नानी ठीक कह रही है माँ, गाँव चलते हैं। अच्छा लगेगा। नाना-नानी की सेवा भी हम लोग करेंगे। माँ, तुम्हारी बचपन की सहेलियाँ मिल जाएँगी। मुझे भी नए-नए दोस्त खेलने को मिलेंगे।'' माँ ने कहा, ''ठीक है।'' माँ अब तैयारी करने लगी। हम लोग सुबह उठकर गाँव की ओर रवाना हुए। जैसे ही गाँव आया, नानी बोली, ''देखो, बच्चे कितना खुश हो रहे हैं। तुम्हारे लिए दाना-पानी भी रखा है।'' ''क्या कारण है कि शहर के बच्चे हम पक्षियों का ध्यान नहीं रखते?'' चिड़िया माँ बोली, ''उनसे जब उनके घर के बड़े लोग कहेंगे, तभी वे करेंगे।''

''आप जैसा मुझे सिखलाती हैं, क्या उन बच्चों के मम्मी-पापा उनको नहीं सिखलाते होंगे कि तुम लोग पक्षियों का ध्यान रखा करो।'' झुनझुनिया बोली, ''हाँ झुनझुनियाँ, मेरी प्यारी बेटी, तुम कितनी समझदार हो गई हो। अब तुम नाना-नानी की सेवा करना। मैं दाने का इंतजाम करूँगी।'' गाँव में सब लोग खुशी से रहने लगे। साअ

७, राजेंद्र नगर, सतना (म.प्र.)
दूरभाष : ०९३०३३१०६४

चलो चलें स्कूल भाइयो

● होड़िल सिंह 'मधुर'

बाल-गीत

२ जनवरी, १९५२ में जन्म। सुपरिचित लेखक एवं बाल रचनाकार। शिक्षण कार्य से सेवा-निवृत्त हो लेखन कार्य में रत। आध्यात्मिक तथा बाल-साहित्य लेखन में विशेष दक्षता।

पल्स पोलियो उन्मूलन

चलो चलें स्कूल भाइयो,
पियो दवा सब बहन-भाइयो!

अपने बच्चे सभी पढ़ाओ,
पल्स पोलियो दवा पिलाओ।
छुट्टी है कल दवा पिएँगे,
पल्स पोलियो सफल बनाओ।
करो न कोई भूल भाइयो,
पियो दवा सब बहन-भाइयो।

पल्स पोलियो भूला होगा,
वो ही लँगड़ा-लूला होगा।
दवा पिएँगे स्वस्थ रहेंगे,
खुशियों से मन फूला होगा।
समझो शिशु को फूल भाइयो,
पियो दवा सब बहन-भाइयो।

विद्यालय पर बूथ लगेगा,
हर बालक वहाँ दवा पिएगा।
पाँच वर्ष तक के बच्चों को,
दवा पिलाएँ भाग्य जगेगा।
यह सरकारी रूल भाइयो,
पियो दवा सब बहन-भाइयो।

जागो तुम्हें जगाने आए,
अच्छी बात बनाते आए।
हो न कोई दिव्यांग कहीं पर,
शुभ संदेश सुनाने आए।
रोगों का यह मूल भाइयो,
पियो दवा सब बहन-भाइयो।

पेड़

पेड़ हमें क्या-क्या नहीं देते,
बदले में हमसे क्या लेते?
छोटे पौधे सुंदरता से,
खुशियों से मन को भर देते।

रंग-बिरंगे पुष्प गहाकर,
सुमन सुरभि में 'मधुर' नहाकर।
चार चाँद हस्ती में लगाते,
रख देते हैं हमें सजाकर।

तरुओं से फल-पत्ते पाकर,
जीते सारे प्राणी खाकर।
सदा बचाते मेह-घाम से,
सबके ऊपर छप्पर छाकर।

वायु प्रदूषण दूर हटाते,
ओषधि देकर रोग भगाते।
भूमि कटाव न होने देते,
उपजाऊ सब भूमि बनाते।

कुरसी, मेज, बेड बनवाते,
इमारतों में द्वार लगाते।
बिना स्वार्थ के लकड़ी देकर,
घर-घर में चूल्हा जलवाते।

पेड़ महा उपयोगी होते,
जीवों के हित जीवन खोते।
काटो मत, अब हमको समझो,
काश! 'मधुर' कोई तरु बोते।

घर

घर देता सबको आराम,
घर ही लौटें करके काम।
कच्चा-पक्का कैसा भी हो,
लगने देता कभी न घाम।

घर रहता है याद वहाँ भी,
निकट रहें या दूर जहाँ भी।
टूटा-फूटा घास-फूस का,
गाँव, नगर या विपिन कहीं भी।
सुबह को निकल लौटते शाम,
घर देता सबको आराम।

कच्चा-पक्का और दुमहला,
गाँव, नगर हो चाहे सहला।
और का घर चाहे जैसा हो,
घर लगता अपना हो रुपहला।
वर्षा-सर्दी लगे न घाम,
घर देता सबको आराम।

और का घर हो थूक का डर,
सदा बनाओ अपना घर।
चाहे हम मजदूर दीन हों,
साथ निभाता अपना घर।
कुटिया में वनवासी राम,
घर देता सबको आराम।

घर चाहे पक्का हो कच्चा,
स्वच्छ रखो तो लगता अच्छा
लेकिन अच्छा और लगे जब,
घर में हो बस एक ही बच्चा।
भीड़ से होता जाम का झाम,
घर देता सबको आराम।

कबूतर

भोला-भाला 'मधुर' कबूतर,
गुटरूँ-गूँ नित करे कबूतर।
कई रंग का धारी वाला,
काला, भूरा, श्वेत कबूतर।

घर-आँगन में रहे कबूतर,
छत के ऊपर रहे कबूतर।
आसमान में ऊँचा उड़कर,
कला दिखाए खूब कबूतर।

जीव-जंतु खाता न कबूतर,
करता शाकाहार कबूतर।
पत्थर को भी खा जाता है,
हिंसा करता नहीं कबूतर।

मृदुभाषी प्रिय मीत कबूतर,
पाला जाता नित्य कबूतर।
प्रीतम को संदेश भेजने,
ले जाता है डाक कबूतर।

मानव का हित करे कबूतर,
दुःख में देता साथ कबूतर।
अपने प्राणों की बलि देकर,
करता है आतिथ्य कबूतर।

टेलीफोन

ट्रिंग-ट्रिंग आवाज लगाता,
हमको अपने पास बुलाता।
आओ मैं कुछ खबर सुनाऊँ,
सही-सही बातें बतलाऊँ।

मुझे अनसुना यदि कर दोगे,
ना मेरा तुम कुछ कर लोगे।
रूठ जाऊँगा ना फिर बोलूँ,
बोलूँगा जब पैसे दोगे।

बटन दबाओ बातें कर लो,
खुशखबरी सुन सब घर भर लो।
रुपया-पैसा समय बचाकर,
चाहे कोई खूब खबर लो।

हलो-हलो! भाई आप कौन हैं?
बोलो-बोलो छोड़ मौन है।
राजनीति, व्यवसाय, पढ़ाई,
बैंक से लेना अगर लोन है।

सब कार्यों में हाथ बँटाता,
कठिन काम को सरल बनाता।
मोबाइल बिन तार खबर दे,
टेलीफोन तार लगवाता।

गाँव-मुहम्मदपुर, डाकघर-ढोलना
जनपद-कासगंज (उ.प्र.)

टावर और मानव की नन्हीं अपेक्षाएँ

मूल : **ई.पी. ज्योति**

अनुवाद : **निपुणा एस. धरन**

मलयालम लेखिका श्रीमती ई.पी. ज्योति आधुनिक मलयालम साहित्य के क्षेत्र में अपने लिए एक विशिष्ट स्थान बना चुकी हैं। वर्तमान काल की हर सामाजिक बुराई को उन्होंने अपनी कहानियों द्वारा उजागर करने का प्रयास किया है। अतः उनके 'आत्मा के कुछ सवाल' कहानी-संग्रह में से एक कहानी हम यहाँ दे रहे हैं।

आकाश में बादलों का नामोनिशान तक नहीं था। आसमानी, नीला···खिला-खिला आसमान।

बारिश और हवा भी अब थम रही थी। धरती मानो अपनी प्यास बुझाकर शांत हो गई हो।

मानूटी को ऐसे आनंद की अनुभूति पहले कभी नहीं हुई। साथ-ही-साथ मन में कोई अनजाना सा उन्माद हिचकोले ले रहा था। बार-बार अलमारी में कागज में लिपटे नोटों की गड्डियों को गिनता, चूमता और फिर कपड़ों के नीचे सहेजता। अलमारी बंद करके चाबी अपनी कमर में दबाकर दबंग से घूमता। फिर भी जरूरतों के नाम पर हाथों से फिसलते नोटों का मानूटी को भी अंदाजा नहीं था।

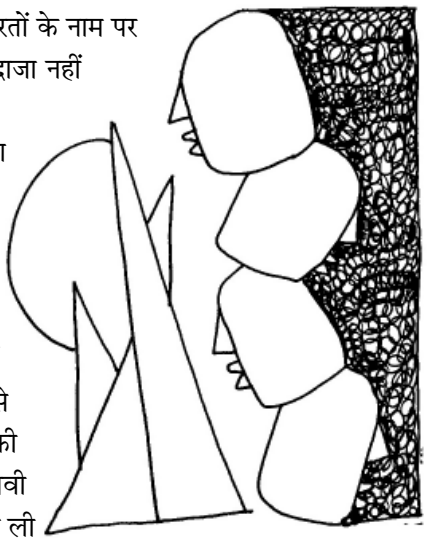

'तुम ऐसे तैश मत खाओ। तुम्हारे रंग-ढंग से ही पूरे मोहल्ले को पता चल जाएगा। वैसे भी चोर-उचक्को का जमाना है। किसी पर भी विश्वास नहीं कर सकते।' ओलिप्र ने चेतावनी दी। घास-फूस की उस छोटी सी झोंपड़ी में मानूटी बीवी ओलिप्र व दो बेटियों के साथ रहता था। ६५ साल का मानूटी दमा से परेशान रहता था, परंतु उसे अपनी बीमारी की कतई परवाह नहीं थी। परवाह थी तो अपनी बीवी की, जिसने लकवे की वजह से खटिया पकड़ ली थी। दहेज और सुंदरता की कसौटी पर बिखरे रिश्तों से हताश बड़ी बेटी रेणुका। बारहवीं कक्षा की छात्रा छोटी बेटी पार्वती। तकदीर से रोज खींचा-तानी करते मानूटी के जीवन में एक ठंडक का एहसास लेकर आया था···यह सौभाग्य। निजी मोबाइल कंपनी का आदमी पूरे लाख रुपए थमा गया था। अड़ोस-पड़ोस की काफी सारी जमीनें देखने के बावजूद, थोड़ी ऊँचाई पर सिर उठाकर खड़ी मानूटी की साफ-सपाट जमीन ही कंपनी के मन को भाई। ज्यादा सिर खपाए बिना कंपनी की दी रकम खुशी-खुशी ले ली थी मानूटी ने।

अंदर खटिया पर शिथिल पड़ी ओलिप्र के चेहरे को धीरे से सहलाया। गुजरते समय की गवाह उस शोषित झुर्रीदार चेहरे की पलकें धीमे से झपकीं। 'ओलिप्र तू भी खुश है न, कितनी चाह थी तेरी कि शहर जाकर बड़े डॉक्टर को दिखाने की।' ओलिप्र शायद कुछ बोलना चाह रही थी। उसके बुदबुदाते होंठों पर दीमक लगे छप्पर से एक तिनका गिरा। मानूटी ने उसे धीरे से पोंछा। दयनीय नजरों से छत को निहारा। एक पक्के घर का सपना सालों से अँगड़ाई ले रहा था उसके मन में। 'ओलिप्र, हमने अपनी पूरी जिंदगी में क्या इतना पैसा कभी देखा है।' मानूटी मानो रुकने का नाम ही नहीं ले रहा था।

होंठों पर मंद मुसकान के साथ सुनती रही ओलिप्र।

अगले दिन भोर होते ही चार-पाँच पड़ोसी आ धमके।

''अरे भाई मानूटी, सुना है, तेरे घर मोबाइल का टावर आ रहा है। गाँव में हर किसी के मुँह पर तेरी ही बात है।'' नारियल तोड़नेवाले वेणु ने लंबी हाँकी।

''कंपनीवाले कह तो रहे हैं कि जगह उसके लिए एकदम सही है।'' मानूटी ने दबी आवाज में उत्तर दिया।

''एक मोटी रकम भी तो दी होगी न···'' आँख मारते हुए वेणु ने बात आगे बढ़ाई।

''हूँ···हाँ एक मोटी रकम दी तो है।''

''हाँ भई, खर्चा तो करना ही पड़ेगा। एक पूरी बोतल मिलेगी तो काम चला लेंगे चोर कहीं के।'' मानूटी की तोंद पर चूँटी काटते हुए दामोधर बोला!

मानूटी मुसकराकर रह गया।

अपनी शामों को रंगीन बनाने जिस चौराहे पर मानूटी रोज शाम को दोस्तों से मिला करता था, वहाँ आज कुछ ज्यादा ही भीड़ थी। उसके पास पहुँचते ही खुसर-फुसर बंद हो गई। यह मानूटी के मन में काँटे सी चुभ गई।

''मानूटी आज तो थैला भर-भरकर सामान ले जा रहे हो।'' भीड़ से निकले कटाक्ष ने मानूटी के मन को और लहुलूहान कर दिया।

भीड़ में से किसी ने मानूटी के कंधे पर हाथ रखा।

''मानूटी, ऐसा नहीं है कि तुझे चार पैसे मिलने की बात पर हम जलते हैं। तेरा कुछ भला हो तो हमें भी इस बात की खुशी है, पर हमारे कान, नाक, सिर, फेफड़े आदि सही-सलामत हों तो तुझे भी तो यह सोचना चाहिए न...।'' मुड़कर देखा तो समाज-सेवी...बीरान कोया। मानूटी ने चुप्पी साध ली और थैला उठाकर घर को निकल गया।

दिन गुजरते गए। टावर कंपनीवाले अपना सारा सामान उतार चुके थे।

मानूटी के घर में तो जैसे लोगों का ताँता लग गया।

एक शाम घर आए पड़ोसी ने तैश में आकर कहा, ''दोस्ती अपनी जगह है, हम भी इनसान हैं। हमारे भी बीवी-बच्चे हैं। बच्चे क्या नन्हीं सी जान, उन्हें कुछ हो गया तो क्या कंपनी भरपाई करेगी?'' कल तक इकट्ठे बैठकर खानेवालों के मुँह से यह बात सुनकर मानूटी की आँख भर आई। मन विचलित हो उठा। 'क्या होगा मेरे सपनों का।'

जिगरी दोस्त भी आँखें चुराने लगे। उसकी उपेक्षा करके उसकी पीठ पीछे मुलाकातें, गाँव की सरकारी पाठशाला के हेड मास्टर द्वारा मोबाइल टावर के आने से लोगों पर आनेवाली विपदाओं से संबंधित कक्षाएँ, रेडिएशन के परिणाम पर रोज होती संगोष्ठियाँ जोर पकड़ती गईं।

''मानूटी, तुझे चार पैसे मिलने की बात किसी को पच नहीं रही।'' चरवाहे हस्सन कोया ने आश्वस्त करना चाहा। इसके अलावा एक और पक्की खबर भी हस्सन कोया ने दी कि चौराहे के जमावड़े में टावर लगाने से कंपनी को कैसे रोका जाए, इस बात पर जोर-शोर से चर्चा हो रही है। गाँववालों और पड़ोसियों का विरोध बढ़ता ही गया।

''हाय-हाय विदेशी कंपनियाँ वापस जाओ! इजारेधारियों को मार भगाओ!'' ऐसे बोर्ड गाँव में जगह-जगह दिखने लगे। हस्ताक्षर इकट्ठे किए जाने लगे। कचहरी तक मामला ले जाने की बात हो रही थी। मानूटी के मन में डर घर कर गया। 'यदि कंपनी अपने वादे से मुकर गई तो...नहीं...नहीं', ऐसा सोच भी नहीं सकता, पर मानूटी की सोच के विपरीत ही हुआ।

कंपनी ऐसी धमकियों से डरनेवाली नहीं और इतना ही नहीं, यदि मानूटी गाँववालों की बातों में आकर पीछे हटा तो उसे कंपनी द्वारा दी गई पूरी रकम वापस करनी होगी और कंपनी अपने हिसाब से उसके खिलाफ उपयुक्त कारर्वाई भी करेगी। ऐसा नोटिस भी मानूटी को दिया गया।

अंदर-ही-अंदर यह खौफ उसे खाए जा रहा था कि कंपनी टावर का निर्माण करती है, तो उसे अपने दोस्ताने रिश्तों से हाथ धोना पड़ेगा। दूसरी ओर यदि वे अपने वादे से मुकरे तो कंपनी उसके खिलाफ कारर्वाई करेगी। ऊपर से उसकी खाली हथेली से फिसले नोट तो हिसाब चुकता करने आएँगे नहीं।

''मनूटी, टावर बनने पर उसे देख चाय की चुस्की लेने की बात तो तू सोच भी मत और यह भी पक्का है कि गाँववालों की नफरत मोल लेकर तू जी नहीं सकता।'' गाँव के नेता नारायणजी की बात उसे अंदर तक छलनी कर गई।

उधर कंपनी के आदमी ने धैर्य बँधाया, ''देखो मानूटी, घबराने की कोई बात नहीं है, हर मुसीबत में कंपनी तुम्हारा साथ देगी।''

''हमारे नाक-कान खराब होंगे तो क्या कंपनी हमारा इलाज करेगी?'' नारियल तोड़नेवाले गोपाल भैया की टीका-टिप्पणी का भी उसने जवाब नहीं दिया।

कंपनी के लोग एक ओर और दूसरी ओर उसका परिवार। एक भयंकर प्रश्न के सामने मानूटी निरुत्तर सा खड़ा रहा।

सारा जहाँ नींद के आगोश में समा गया, परंतु सर्दी की उस ठिठुरती रात में भी आँखें खोले वह बैठा रहा—अपलक सोचता रहा।

श्रीपादम, पोस्ट तलकुलत्तूर
पालक्काड

इस अंक की चित्रकार

अनुप्रिया

सुपरिचित रचनाकार एवं चित्रकार। राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में कविताएँ तथा बाल साहित्य की पत्रिकाओं में बाल कविताएँ प्रकाशित। इसके अलावा 'संवदिया', 'विपाशा', 'ये उदास चेहरे', 'अंजुरी भर अक्षर', 'हाशिये की आवाज' आदि पत्रिकाओं में रेखाचित्र प्रकाशित।

संपर्क : श्री चैतन्य योग, गली नं. २७, फ्लैट नं. ८१७
चौथी मंजिल, डी.डी.ए. फ्लैट्स
मदनगीर, नई दिल्ली-११००६२
दूरभाष : ९८७१९७३८८८

बाल-कहानी

कच्ची मिट्टी

● कविता त्यागी

दिन के उजले वातावरण को धीरे-धीरे रात का स्याह अँधेरा निगल रहा था। तन्वी रसोईघर में रात के भोजन की व्यवस्था कर रही थी। उसने अपनी सहायता के लिए बेटी मायरा को पुकारा, लेकिन मायरा ने भाई की ओर संकेत करते हुए कहा, ''मम्मीजी, भाई से करा लो। मैं सौम्या से अपने नोट्स लेने के लिए उसके घर जा रही हूँ।''

''नहीं, अब अँधेरा हो चुका है। तू इस समय घर से बाहर नहीं जाएगी।'' तन्वी ने कठोर लहजे में कहा।

''मम्मीजी, आज हर क्षेत्र में लड़कियाँ लड़कों से आगे आकर अपनी प्रतिभा का झंडा गाड़ रही हैं, फिर मुझ पर यह प्रतिबंध क्यों? आप भाई को तो कभी कहीं जाने से नहीं रोकती हैं!'' मायरा ने उलाहने की शैली में कहा था, परंतु तन्वी को आज उसके शब्दों में लिंग-भेद पर आधारित भेदभाव को लेकर एक चिर-परिचित से असंतोष का अनुभव हुआ था। कुछ क्षणों के पश्चात् उसकी यह अनुभूति विचित्र प्रकार की व्याकुलता में परिवर्तित होने लगी और अपने बचपन तथा किशोरावस्था के विशृंखलित स्मृति-चित्र उसकी आँखों में तैरने लगे—

नवोदित लेखिका। अब तक 'अमृतलाल नागर सर्जना पुरस्कार', 'कथा भूषण सम्मान', 'स्वर्गीय सरस्वती सिंह सम्मान' प्राप्त।

तीनों बहन-भाइयों में वह सबसे छोटी थी। सबसे बड़ी दामिनी, उससे तीन वर्ष छोटा भाई महेश तथा महेश से दो वर्ष छोटी बहन तन्वी; सभी के प्रेम की अधिकारिणी थी। उसको सभी की डाँट भी पड़ती थी, परंतु कभी किसी की डाँट खाकर उसे दुःख नहीं हुआ था, क्योंकि उस डाँट में प्रेम छिपा रहता था। किंतु अनेक ऐसे घटना-चित्र उसकी स्मृति में जीवंत रूप में आज भी अपना स्थान बना हुए हैं, जिनसे छोटी-सी आयु में उसके हृदय पर कुठाराघात हुआ था। ऐसा ही एक वृत्तचित्र तन्वी की स्मृति में उस समय का अंकित है, जब वह सात-आठ वर्ष की रही होगी। पिताजी बाजार से मिठाई लाए थे। बड़ी बहन दामिनी ने अपने छोटे भाई महेश के बराबर मिठाई ली थी तो माँ उसको समझाते हुए डाँट रही थी, 'दामिनी, महेश तेरा भाई है, कुछ तो खयाल किया कर। भैया को अपने से अधिक दे दिया कर।' दामिनी पर माँ की बातों का कोई सकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ा।

'माँ, यह भैया है, तो हम बहन हैं! मैं महेश से तीन वर्ष बड़ी हूँ, फिर उसको अधिक चीज क्यों मिलेगी?'

माँ का मृदु व्यवहार कठोर मुद्रा में परिवर्तित हो गया, 'बेहया, एक बार की कही हुई बात समझ में नहीं आती! तुझे कौन सा कोल्हू में चलना है, भाई से ज्यादा मिठाई खा के। लड़कों के सिर पर जिम्मेदारी का कितना बड़ा बोझ होता है, यह कभी सोचा है तूने!' दामिनी को माँ की यह दलील भी रास नहीं आई।

'माँ, मुझे कोल्हू में नहीं चलना है तो महेश भी कोल्हू में नहीं चलता है, न ही कभी कोल्हू में चलेगा! रही बात काम की और जिम्मेदारी की, तो वह भी मैं महेश से अधिक करती हूँ, इसलिए मैं कोई भी चीज उससे कम नहीं लूँगी!' दामिनी बोल ही रही थी कि तभी पिताजी आ गए। वह माँ की शिकायत करते हुए पिताजी सें लिपट गई और अपना पक्ष रखते हुए बोली, 'पिताजी, मैं महेश से बड़ी हूँ, मैं उससे कम चीज क्यों लूँ? माँ कहती है, यह भैया है। किसी चीज के बँटवारे का आधार भैया-बहन होना होता है या छोटा-बड़ा होना?'

पिताजी ने दामिनी को शांत करते हुए कहा, 'बिल्कुल ठीक है। किसी चीज को बाँटने का आधार भैया-बहन नहीं होना चाहिए। तुम दोनों को बराबर चीज मिलेगी, क्योंकि बड़े होकर तुम दोनों को ही बड़े-बड़े और महत्त्वपूर्ण दायित्व सँभालने हैं, एक को घर का और एक को बाहर का।' उनके विचार में घर का दायित्व किसी प्रकार भी कम नहीं था, बल्कि अपेक्षाकृत अधिक था। वे कहते थे कि गृहिणी को अपने परिवार का आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक आदि सभी स्थितियों को ध्यान में रखते हुए गृहस्थी की गाड़ी को सुचारू रूप से चलाना होता है, वह परिवार के प्रत्येक सदस्य के शारीरिक-मानसिक स्वास्थ्य का ध्यान रखती है। यदि बेटी का अपना स्वास्थ्य ठीक नहीं होगा तो वह अपने परिवार का ध्यान कैसे रख पाएगी? दामिनी पिताजी के तर्क का संबल पाकर प्रसन्न हो गई। तन्वी को भी उनका तर्क दमदार लगा था, पर वह माँ की दलील और पिता के तर्क में विरोधाभास को लेकर परेशान थी। वह कई दिनों तक इसी उधेड़बुन में रही कि आखिर आज तक पिताजी की इतनी सी बात माँ की समझ में क्यों नहीं आई? क्यों उन्हें वह बात ठीक नहीं लगती, जिसमें समानता का भाव होता है? तन्वी आयु में छोटी होने पर भी इस बात पर गंभीरता से चिंतन कर रही थी कि माँ बेटा-बेटी में भेदभाव क्यों करती है? वह इस विषय पर माँ से विस्तारपूर्वक बात करना चाहती थी।

एक दिन अनुकूल समय पाकर उसने उसने कहा, 'माँ, मैं तो भैया से छोटी हूँ, इसलिए कम चीजें लेकर संतुष्ट रहती हूँ, किंतु दामिनी दीदी तो भैया से बड़ी हैं, फिर भी आप सदैव उन्हें भैया से कम चीजें लेने के लिए क्यों बाध्य करती हैं? केवल खाने-खिलाने के लिए ही नहीं, पढ़ने के लिए भी। आप भैया को अधिक पढ़ाना चाहती हैं; उन्हें इस शहर से दूर

दूसरे शहर भेजने के लिए भी तैयार हैं और दामिनी दीदी की पढ़ाई दसवीं से ही बंद कराने के लिए कहती हैं। माँ, आप लड़के-लड़की में इतना भेदभाव क्यों करती हैं?'

माँ को तन्वी द्वारा लगाया हुआ यह आरोप अच्छा नहीं लगा। उन्होंने सफाई देते हुए कहा, 'मैं कहाँ भेदभाव करती हूँ, बेटी। मैं तो बस यह कहती हूँ, मरदों पर काम का बोझ ज्यादा रहता है। उन्हें बाहर-भीतर के काम करने पड़ते हैं, इसलिए उन्हें···! अब मैं तुम्हारे पिताजी की बराबरी करूँ, तो ठीक है?'

'हाँ, ठीक है। माँ, इसमें गलत क्या है? कुछ भी तो गलत नहीं है। आप पिताजी से कम क्यों समझती हैं अपने आप को?'

तन्वी की बातें सुनकर माँ मौन हो गई और गंभीर विचार-सागर में डूबने लगी। वह समझ नहीं पा रही थी कि तन्वी से क्या कहे? कुछ क्षण पश्चात् माँ ने गहरी उदासी भरे स्वर में कहा, 'बेटी, तुमने भेदभाव देखा ही कहाँ है। मैं तो भेदभाव करती ही नहीं हूँ। कभी कुछ ऐसा हो भी जाता है तो तुम्हारे पिताजी खाने-खेलने, पढ़ने-लिखने में कहीं भी तुम्हें महेश से कम नहीं रखते हैं।'

'माँ, क्या नानाजी भी आपको इतना ही स्नेह करते थे, जितना हमें हमारे पिताजी करते हैं?'

'हाँ!'

'और नानीजी?'

बेटी का प्रश्न सुनकर माँ की आँखें नम हो गईं। लंबी साँस छोड़ते हुए माँ ने कहा, 'मुझे आज भी याद है, उस समय गेहूँ की कम पैदावार होती थी। हमारी माँ भैया-पिताजी को सदैव गेहूँ की रोटियाँ खिलाती थीं और हम बेझड़, ज्वार-बाजरा, चना आदि मोटे अनाज के आटे की रोटियाँ खाया करते थे। मैं भी गेहूँ के आटे की रोटी माँगती थी, लेकिन···एक दिन पिताजी को इस बात का पता चल गया। उन्होंने माँ को सख्त हिदायत दी कि वे मेरे साथ भेदभाव का व्यवहार न करें। उन्होंने मुझसे भी कहा कि यदि फिर वे मेरे साथ कभी भी इस प्रकार का भेदभाव करें तो मैं उन्हें बताऊँ! किंतु माँ के व्यवहार में कोई परिवर्तन नहीं आया। उन्होंने उल्टा मुझे ही समझाया, मर्द होते ही ऐसे हैं। यह तो स्त्रियों का कर्तव्य है कि वह घर के पुरुषों का ध्यान रखे। उन्हें अपने से अच्छा, पेट भर तथा समय पर खिलाए-पिलाए, चाहे स्वयं भूखे-पेट ही क्यों न सोना पड़े।

'बेटी, हमसे हमारी माँ जो कुछ भी कहती थी, हम तो उसी को वेदवाक्य मानते थे। मेरी माँ की आज्ञा से जुड़ी मेरे जीवन की एक घटना का जिक्र मैंने आज तक कसी के समक्ष नहीं किया। उस घटना की स्मृति मुझे आज तक अंदर तक हिला देती है, तुम्हारे नानाजी स्वतंत्रता सेनानी थे, इसलिए अकसर गाँव से बाहर जाते रहते थे। उस दिन भी वे घर पर नहीं थे, जब यह घटना घटित हुई।

'हमारे घर के बाहर सामने ही एक कुआँ था, जिस पर सुबह चार बजे से पानी भरना शुरू हो जाता था। उस समय मेरी उम्र लगभग इतनी ही रही होगी, जितनी तुम्हारी है। उस दिन माँ बहुत दु:खी थी। शायद वे रोती रही थीं, इसलिए उनकी आँखें लाल हो रही थीं। रात के समय उन्होंने मुझसे चिंता की मुद्रा में कहा कि तेरे पिताजी को तो देश की आजादी के अतिरिक्त कोई चिंता नहीं है। तू बिना बोए-सींचे हुए बबूल की तरह बढ़ती जा रही है! माँ की बात सुनकर मेरी भय-मिश्रित वेदना का पारावार उफनने लगा। मैंने सशंकित स्वर में माँ से बस इतना ही कहा कि माँ मैं इसमें क्या कर सकती हूँ।

'मेरे प्रश्न को सुनकर माँ ने अपनी पूर्वनियोजत योजना का उद्घाटन करते हुए कहा कि अरी, तू ही तो सारे दु:खों की जड़ है। तू नहीं रहेगी तो कोई समस्या भी नहीं रहेगी।

'माँ की बात सुनकर मेरे पैरों के नीचे से धरती खिसकती जा रही थी। मुझे मेरे कानों पर विश्वास नहीं हो रहा था। किंतु माँ के चेहरे पर कोई भाव अंकित नहीं था। वह अपनी बात कहती जा रही थी कि तू सवेरे जल्दी उठकर पानी भरने के लिए कुएँ पर मेरे साथ चलना और वहाँ कुएँ में कूद जाना। मैं सबको कह दूँगी, अँधेरे में पैर फिसल गया और गिर गई।···तुझे ऐसा ही करना पड़ेगा!

'माँ ने अपनी योजना के अनुसार मुझे सुबह चार बजे से पहले जगा दिया और नेंजू-डौल लेकर मुझे अपने साथ कुएँ पर ले गई। वहाँ जाकर मैं कुएँ की जगत पर जाकर खड़ी हो गई, किंतु उस गहरे कुएँ में कूदने का मुझे साहस न हुआ। तभी माँ ने मुझे धक्का दे दिया और मैं कुएँ में गिर पड़ी। पता नहीं, मेरा सौभाग्य था या दुर्भाग्य कि कुएँ में गिरकर भी मुझे मौत नहीं आई। कुछ समय पश्चात् वहाँ पानी भरनेवालों की भीड़ होने लगी, तब लोगों द्वारा मुझे कुएँ से बाहर निकाला गया। बाहर आकर मैंने देखा कि माँ का रो-रोकर बुरा हाल हो रहा था। वह रोते हुए चिल्ला-चिल्लाकर कह रही थी—मनहूस घड़ी थी, जब उसकी बुद्धि ने उसका साथ नहीं दिया और बेटी को अकेले ही अँधेरे कुँए पर भेज दिया, वरना आज से पहले तो कभी दिन में उसने दिन में भी बेटी को कुएँ पर नहीं भेजा था।

'रोती-पीटती हुई माँ मुझे वहाँ से घर ले आई। घर आने के पश्चात् भी माँ तब तक रोती रही, जब तक वहाँ आने-जानेवाले पड़ोसी स्त्री-पुरुषों का ताँता लगा रहा। जब उनका आना-जाना कम हो गया, तब माँ ने मुझे समझाया कि मैं उस घटना की सच्चाई किसी को न बताऊँ। पिताजी के आने पर उन्हें भी सत्य से अवगत न कराऊँ कि जो दुर्घटना हुई, वह माँ की योजना का ही परिणाम थी। मैंने माँ की आज्ञा का अक्षरश: पालन किया, पर माँ फिर भी दु:खी थी। अनेक बार मैंने माँ के दुख का कारण जानना चाहा, पर माँ ने हर बार बस यही कहा कि तू बहुत छोटी है, एक औरत के टूटने की पीड़ा को अभी नहीं समझ सकेगी!

तन्वी अपनी माँ के मुख से उनके बचपन की दर्दनाक घटना को

सुनकर चेतनाशून्य सी हो गई। उसमें मानो सोचने-समझने की शक्ति समाप्त हो गई थी। माँ की दर्द भरी दास्तान सुनकर तन्वी को अनुभव हुआ था कि वास्तव में माँ उनके बीच कोई भेदभाव नहीं करती है। माँ के हृदय में अपने तीनों बच्चों के लिए अगाध-प्रेम है, किंतु वह अपनी उसी प्रकृति को श्रेष्ठ मानती है, जिसमें उन्हें बचपन में ढाला गया था, जिसे नानी ने सींचा था। यह प्रकृति उन्हें उनके परिवेश सें उस समय मिली थी, जब वह कच्ची मिट्टी थीं।

कुछ क्षणोपरांत उसके कानों में माँ का स्वर सुनाई दिया। वे कह रही थीं, यह बात उन्होंने तब से अब तक अपने दिल में दफन करके रखी थी। उस समय वह छोटी थीं। अपनी माँ की कही सारी बातों का अर्थ नहीं समझती थीं, पर अब वे उन बातों का केवल अर्थ ही नहीं समझती हैं, टूटने की उस पीड़ा को हर-पल कदम-कदम पर अनुभव भी करती हैं। टूटने के जिस भय और पीड़ा को माँ भोगती है, बेटी उसको नहीं समझ सकती, क्योंकि उस समय वह अबोध अपने पिता के स्नेह से अभिभूत रहती है। प्राय: सभी पिता अपनी बेटी को स्नेह करते हैं, शायद उतना ही, जितना बेटे को। पर पिता के ऐसे प्यार का बेटी के जीवन में कोई महत्त्व नहीं रह जाता है, जो अंत में अपनी सारी शक्ति बेटे को हस्तांतरित करके बेटी को दूसरों पर आश्रित छोड़ दे! पेट की भूख मिटाने के लिए पराश्रित व्यक्ति अपने स्वाभिमान की रक्षा करते-करते टूट जाता है। कोई भी माँ यह नहीं चाहती कि उसकी बेटी जिंदगी के किसी भी पड़ाव पर टूट जाए, इसलिए माँ उसको मानसिक रूप से इतना लचीला बना देती है कि वह हर प्रकार की परिस्थिति में अपने अस्तित्व को बचा सके।

बाल्यकाल की स्मृतियों से निकलकर तन्वी वर्तमान के बारे में सोचने लगी, 'माँ के बाल्यकाल से मेरे बाल्यकाल तक हमारे परिवेश और परिस्थितियों में बहुत परिवर्तन आ चुका था, किंतु तब तक भी हमारा परिवेश पूर्णरूपेण स्वस्थ नहीं हो पाया है। उस समय भी हमारा सामाजिक परिवेश ऐसा था कि बिना किसी भेदभाव के स्वतंत्र-रूप से व्यक्ति की प्रच्छन्न प्रतिभा को विकसित होने का अवसर नहीं मिल पा रहा था। आज जब विज्ञान और तकनीकी का अभूतपूर्व विकास हो चुका है; सूचना प्रौद्योगिकी ने संपूर्ण ब्रह्मांड की सूचनाओं को एक चिप में सुरक्षित करने की सुविधा दी है और सूचनाओं को दुनिया के किसी भी कोने में इंटरनेट के माध्यम से अत्यंत कम समय में भेजा जा सकता है, तब इस आधुनिक युग में भी हमारा समाज स्त्री की उस स्वतंत्रता में अवरोध क्यों उत्पन्न करता है, जो उसको प्रकृति ने दी है? कब तक हमारा पुरुष समाज स्त्री को अपने भोग की एक वस्तु के रूप में देखता रहेगा? कब तक एक माँ को अपनी बेटी की सुरक्षा का भय सताता रहेगा?

१०/३५, सेक्टर-३, राजेंद्र नगर, साहिबाबाद,
गाजियाबाद-२०१००५ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०९९९९७५२४५७

कविता

आसमान में उड़ता होता

● नरेंद्र कुमार चावला

अगर मैं बन का तोता होता

अगर मैं बन का तोता होता,
इतना बड़ा न बस्ता ढोता!
न ये सारी पुस्तक पढ़ता,
न ही इन रूपों को रटता
इन कष्टों से वंचित होकर,
आसमान में उड़ता होता!
बागों में आमों को खाता
मन को ऐसे न तड़पाता
और पेड़ों पर मजे से सोता!
जहाँ चाहता बैठ मैं जाता
और जहाँ चाहता उड़ जाता
आम, लीची, सेव, संतरे
खुश हो-होकर खाता होता!
हरे-हरे जब पंख वो होते
रोज न वस्त्र बदलने पड़ते
शमा समझकर कोकिल स्वर को,
परवाना रूप बना में होता,
अगर मैं बन का तोता होता!

जिस से चाहो शिक्षा ले लो

चाहो तो तुम शिक्षा ले लो, जंतु, कीट-पतंगों से।
जीयो और जीने दो सबको, दूर रहो सब दंगों से॥
चींटी से पंक्तिबद्ध रहना, वजन उठा खुद से भी भारी।
खुशी-खुशी से चलते रहना, शिक्षा देती कितनी प्यारी॥
मधुमक्खी से कर्तव्य निभाना, परहित सेवा कर मर जाना।
स्वामिभक्ति कुत्तों से सीखो, चौकीदारी का फर्ज निभाना॥
प्रात:काल में पक्षी सारे, चहक-चहककर हमें जगाते।
कोकिल के मृदु स्वर भी हमको, कू-कू करके हैं रिझाते॥

किसी का हक ये नहीं छीनते, अपना-अपना दाना बीनते।
शाकाहारी हैं शाकाहारी, मांसाहारी हैं मांसाहारी॥
अपनी धुन में मस्त हैं रहते, खुशी-खुशी से दु:ख भी सहते।

मनुष्य की सदा अधूरी आसा, इक-दूजे के खून का प्यासा।
गाय-भैंसे अति लाभदायक, दूध पिलाती शक्तिदायक।
परोपकार की भावना से ही, कहलाओगे बच्चो लायक॥

सी-८/१३, आर्डी सिटी,
सेक्टर-५२, गुड़गाँव-१२२००१
दूरभाष : ०९९६८३१५२०२

नहीं लगातीं मम्मी डाँट

बाल-कविता

● संजीव ठाकुर

दूध-मलाई खाकर आई

दूध-मलाई खाकर आई बिल्ली रानी
पूछा बिल्ले ने, बोलो था कितना पानी?
बिल्ली बोली, क्या बतलाऊँ? कितना घटिया दूध था?
सुबह-सुबह ही ऑफ हो गया, कितना बढ़िया मूड था!
पापी ग्वाला दूध बेचता या पानी ही पानी?
धरम-करम की इस दुनिया में बची न एक कहानी!
ऐसा सबक सिखाऊँगी कि याद रखेगा ग्वाला
तुम भी साथ चलोगे न? जल्दी बोलो लाला!
दुम उठाकर बिल्ला बिल्ली के पीछे भागा,
उछल-कूदकर मटका फोड़ा और जल्दी से भागा ।
लगा सोचने आकर ग्वाला, कैसे फूटा मटका?
देख वहीं कोने में बिल्ली माथा उसका ठनका!
एक लात खाकर तो बिल्ली भागी घर से बाहर
सिर पर रखकर हाथ बेचारा ग्वाला बैठा अंदर!

सुपरिचित कवि-कथाकार तथा बाल साहित्यकार। प्रमुख कृतियाँ हैं–'नौटंकी जा रही है', 'फ्रीलांस जिंदगी', 'अब आप अली अनवर से···' *(कहानी-संग्रह)*, 'झौआ बैहार' *(लघु उपन्यास)* तथा 'इस साज पर गाया नहीं जाता' *(कविता-संग्रह)*। 'बड़ों का बचपन' तथा 'चुन्नू-मुन्नू का स्कूल' बाल साहित्य की चर्चित कृतियाँ हैं।

ऐसा हो काश!

नानाजी तो पंख लगाकर
चले गए आकाश में,
नानी मेरी अभी भी लेकिन
रहती मेरे पास में!

नानी के घर में रहने से
नहीं लगातीं मम्मी डाँट,
जो कुछ भी लेकर वह आतीं
नानी से लेती मैं बाँट!

और पिताजी की न पूछो
शरमाए रहते चुपचाप,
चाहे कितनी करूँ गलतियाँ
नहीं लगाते मुझको थाप!

कितना अच्छा होता नानी
रहतीं सब दिन मेरे पास,
नाना जैसे पंख लगाकर
न जाएँ, ऐसा हो काश!

दीपों का त्योहार

दीपों का त्योहार दीवाली
रात हो गई कैसी काली,
आसमान में छाई धुंध
जैसे हो बारूद की जाली।

इतने जले पटाखे,
बिजली इतनी बरबाद हुई,
हवा आज प्रदूषित होकर
घर-घर में आबाद हुई!

पढ़े-लिखे लोगों को आखिर
हुआ आज क्या पता नहीं?
जले आज कागज के नोट
फिर भी कोई खता नहीं!

कितनी जगहों पर आग लगी
कितने लोगों की आँख जली,
कितने लोगों को आज पटाखों
और दीप की कमी खली!

मस्ती के आलम में झूमे
फिर भी पागल हिंदुस्तानी,
पर्यावरण प्रदूषित करने
की लिख दी फिर एक कहानी।

बहुत मजा आता है

जाड़े की गुनगुनी धूप में
पैर पसारे लेटे,
या फिर खाते मूँगफली के
दाने बैठे-बैठे।
बहुत मजा आता है भाई ,
बहुत मजा आता है!

मक्के की रोटी पर थोड़ा
साग सरसों का लेकर,
या फिर गजक करारे वाले
थोड़ा-थोड़ा खाकर,
बहुत मजा आता है भाई,
बहुत मजा आता है!

औ अलाव के चारों ओर
बैठे गप-शप करते,
बुद्धन काका के किस्से
लंबे-लंबे सुनते,
बहुत मजा आता है भाई,
बहुत मजा आता है!

एस.एफ. २२, सिद्ध विनायक अपार्टमेंट,
अभय खंड ३, इंदिरापुरम,
गाजियाबाद-२०१०१०
दूरभाष : ०१२०-४११६७१८

अभागा कृपण

मूल : **केस्पर फ्रेडरिक गोट्सचलक**
अनुवाद : **भद्रसैन पुरी**

तीस वर्षीय युद्ध के दौरान पहाड़ में रहनेवाले पड़ोसियों ने शीघ्रता से अपनी धन-संपत्ति क्वेटिनबर्ग के किले में पहुँचा दी, ताकि सेना के उत्पात और लूट से उसकी रक्षा हो सके। कहा जाता है कि यह सारा संचित धन अब भी भूमिगत गृहों में, शराब खींचनेवाली तांबे की डेगों में छिपा पड़ा है और किले के भूत सावधानी से उसकी चौकसी कर रहे हैं।

ऐसा हुआ कि एक रविवार को वहाँ का एक निवासी गँवार की तरह सोचता हुआ, ऊपर लटके खंडहरों और इर्दगिर्द के स्थानों को खोजता हुआ पुराने किले की ओर आया, जो क्रम से पृथ्वी की ओर से नीचे की ओर जाता प्रतीत होता था। उसने उग्रगंध की घास और झाड़ियों में रास्ता बनाया और निरंतर आगे तब तक चलता रहा, जब तक एक अँधेरे रास्ते के द्वार तक नहीं पहुँच गया। उसके कौतूहल ने उसे और आगे बढ़ाया। अब वह भूमिगत था। उसने जमीन पर एक गोल छिद्र देखा जहाँ रोशनी की एक पतली रेखा पड़ रही थी। जैसे ही वह एक तरफ खड़ा हुआ उसे बड़ी ओढ़नी लपेटे एक भूत दिखाई दिया। वह जगह एकाएक प्रकाशमय हो गई और भयभीत गँवार ने अपने सामने सोने के चमकते टुकड़ों से भरे प्रसिद्ध शराब खींचनेवाली डेगों को देखा, जिनकी बाबत उसने अपनी परदादी से सुन रखा था।

वह सोचने लगा कि क्या करे? घर लौट जाए या सोने का टुकड़ा उठा ले! तभी भूत बोला—''तुम एक टुकड़ा ले सकते हो और प्रतिदिन पुन: एक लेने के लिए भी आ सकते हो, परंतु एक समय में एक ही लेना, अधिक नहीं।''

यह कहकर भूत लुप्त हो गया और आदमी ने सोने के टुकड़े पर हाथ रख दिया। उसने उस स्थान पर निशान लगा दिया तथा धड़कते दिल के साथ, आधा प्रसन्न और आधा डरा हुआ, वह शीघ्रता से वापस लौटने लगा। भूत के उपहार को हजार बार टकटकी लगाकर देखता हुआ वह अपने घर चला गया।

अगले दिन उसने उस सुखकर प्रयोग को दोहराया। वास्तव में भूत तो वहाँ नहीं था, परंतु सोने से भरी शराब खींचनेवाली तांबे की डेग वहाँ थी। उसने दूसरा टुकड़ा लिया और अपने रास्ते चल दिया। इसी तरह दूसरे, तीसरे और चौथे दिन—प्रतिदिन सोने के टुकड़ों का उपहार लाते हुए इस क्रम को एक वर्ष बीत गया।

एक गँवार, दरिद्र का जर्जर घर इस क्रम से एक आलीशान मकान में बदल गया; कई एकड़ भूमि उसमें मिलाई गई; पशुओं के झुंड उसकी भूमि पर चरते नजर आते थे। गाँव का कोई गँवार वह सबकुछ नहीं कर सकता था जो इसने किया, परंतु संपत्ति बढ़ने के साथ ही यह गँवार उतना ही उत्तेजित होने लगा—'मैं किसके लिए परिश्रम करूँ? मैं बैठकर आराम कर सकता हूँ।'

इस विचार के आते ही उसने अपनी भूमि में बोने के लिए नौकरों और नौकरानियों को रख लिया और स्वयं नई बाँहदार कुरसी पर बैठने लगा। अपनी अनाज की फसलों, जिनको पहले वह स्वयं बोया करता था, को देखने के लिए वह सुंदर टट्टू की सवारी से जाता था। वास्तव में शराब खींचनेवाली तांबे की महान् डेग का दैनिक साक्षात्कार ही उसका मुख्य उद्यम था। लक्ष्मी प्रतिक्षण उसकी आत्मा पर बुरी तरह छा रही थी। उसका अहंकार उसके लोभ की बराबरी करने लगा, चाहे सोने का एक टुकड़ा बीस डॉलर के बराबर ही था। उसके मन में यह भी विचार आया कि सोने के एक टुकड़े के लिए प्रतिदिन ढलुवाँ पहाड़ी पर चढ़ने का काम कुछ ज्यादा है और मन-ही-मन उसने निश्चय किया कि अगली बार वह दो टुकड़े लाएगा।

उसने ऐसा ही किया और इस क्रम को एक महीने से भी अधिक समय तक जारी रखा। फिर भी इससे उसे संतोष नहीं हुआ। उसने अपने आपसे कहा—

'हे ईश्वर, सोने के चंद टुकड़ों के लिए यह प्रतिदिन का परिश्रम कितना कष्टदायक है! यह स्पष्ट हो गया है कि सारा खजाना मेरे लिए ही है; मैं इसे एक ही बार में ले आऊँ अथवा इस प्रकार टुकड़ों में—दोनों तरीकों का परिणाम एक ही है। अत: मैं जाऊँगा और यदि ईश्वर ने चाहा तो इस बार शराब खींचनेवाली तांबे की सुंदर डेग को एक ही झटके में खाली कर दूँगा और इस तरह भविष्य में बार-बार आने-जाने का कष्ट

सहना नहीं पड़ेगा।'

तदनुसार उसने कई थैले उठाए और उनके बोझ से हाँफता हुआ पहाड़ पर गया। अच्छे रहन-सहन ने उसपर चरबी चढ़ाकर उसे मोटा बना दिया था। इसलिए वह लक्षित द्वार तक पहुँचते-पहुँचते थक गया। वह थोड़ा आराम करने के लिए बैठ गया और सोचकर प्रसन्न हुआ कि ये दु:खदायी यात्राएँ अब समाप्त हो जाएँगी। उसने एक कल्पना करनी भी शुरू कर दी कि जब वह अच्छी तरह भरे थैलों को अपने घर में खड़ा देखेगा तो फिर क्या करेगा! वह जागीरदार बनेगा या नाईट! पहले चार घोड़ोंवाली बग्घी बनाएगा, कैसी शानदार मेज रखेगा, कैसे-कैसे प्रतिष्ठित अथिति उसके आगे-पीछे होंगे और निकटवर्ती किफोसेन किले के नाईट और अपने संबंधियों के बावजूद, वह उनके साथ शराब पीएगा!

यह सब सोचते हुए वह सीधा खड़ा हो गया। अपने थैले उठाकर अँधेरे रास्ते में लुप्त हो गया। फिर वह शराब खींचनेवाली डेगों के निकट गया, जो क्रम से उसके घटाने के बावजूद, सिरे तक सोने से नई-नई भरी हुई दिखाई दे रहे थीं। वह पहले थैले के साथ एक तरफ को झुका, दोनों हाथ सोने में डाले और थैले को पहला घूँट पिलाने ही वाला था कि एकाएक सारे-का-सारा पात्र उसके हाथ से भयानक ध्वनि के साथ गिर गया तथा नीचे···और नीचे भूमिगत होता गया; उसके इर्दगिर्द लुआठी और गंधक जलने लगे और अत्यधिक निराशा में वह मूर्च्छित हो गिर गया।

उसके चमकीले स्वप्नों और हवाई किलों के साथ सारा संचित धन उससे दूर हो गया। शराब खींचनेवाली तांबे की डेग फिर नजर नहीं आई, भले ही उसका लोभ पहले की तरह बना हुआ था। उसको सोने का एक टुकड़ा प्रतिदिन संतुष्ट कर सकता था, यदि वह जानता कि संतोष कैसे किया जाता है!

इस तरह लोभ अपने पुजारियों से बदला लेता है!

खुशियों का पासपोर्ट

लघुकथा

● सत्य शुचि

पासपोर्ट धारक मैं ही था। फिलहाल पासपोर्ट से संबंधित दस्तावेज मुझे ही तैयार करने-करवाने थे। सो, खुद के आलसपने को मैंने तिलांजलि दी थी।

इसी दौरान सबसे पहले दो राजपत्रित अधिकारियों से मैंने चरित्र प्रमाण-पत्र भी बनवाए थे। चरित्र प्रमाण-पत्र के बाबत उन दोनों ने मुझसे फीस-राशि वसूली थी। लगा, फोकट में यहाँ इस तरह के काम नहीं होंगे। कुल जमा, मुझे अपने काम से मतलब था और आज के समय में रुपए क्या मायने रखते हैं।

हकीकत में जिस वार्ड क्षेत्र में मेरा निवास था, उसका पार्षद मेरे ज्यादा करीब था। लुब्बलुआब यह है कि वार्ड मैंबर के चुनावों के वक्त मेरे परिवार ने उसके पक्ष में मतदान किया था, परंतु हरामजादे इस शख्स की नजर मेरी मचलती जेब पर टिकी रही। गौरतलब है कि बिन पुलिस महकमे के सत्यापन के मेरा पासपोर्ट अधूरा सा था और अब पुलिस द्वारा मेरे निवास, चरित्र तथा परिवार की पृष्ठभूमि की जाँच-पड़ताल होनी थी। देखते-देखते, मेरे फोन पर पुलिस विभाग का एक अर्दली मेरे ड्राइंग रूम में मौजूद था और फटाक से वह सरसरी निगाहों से मेरे दस्तावेजों का अवलोकन कर चुका था।

''···तो मैं चलूँ!'' लगभग उठते-उठाते वह उतावले से हो गए।''

''हूँ··· !'' मैंने हुंकार भरी।''

''पुलिस विभाग आपके इन संबंधित दस्तावेजों को जल्द-से-जल्द आगे भिजवा देगा। आप बेफिक्र रहिएगा।'' उन्होंने मुझे आश्वस्त करने की कोशिश की।

''हाँ, सर··· ।'' मैं एक क्षण रुका, ''लीजिए ये।'' एक बंद लिफाफा मैंने उनकी तरफ सरकाया था।

''क्या है यह।'' भौचक्के से वह मुझे निहारते रहे।

''कुछ नहीं है, सिर्फ स्टाफ के चाय-नाश्ते के लिए।''

''अरे! आप तो काफी समझदार लगते हैं।'' और वह हँसते-मुसकराते जीप में जा बैठे थे।

मैं वापस पलटा और चट से एक अहसास तीव्रता से मेरे नेत्रों में कौंध उठा कि नि:संशय, लोकतंत्र के स्थायी स्तंभों के साथ ही भ्रष्टाचार को भी यदि एक स्तंभ के रूप में स्वीकार कर लिया जाए तो मुझे कतई हर्ज नहीं होगा।

तभी सोचते-विचारते मुझे एक झुरझुरी सी छूट गई और इतने पर भी एक संदिग्ध लाभ की आशा में पासपोर्ट को लेकर मैं बेहद उत्साही था तथा अंदर-ही-अंदर मुदित भी।

साकेत नगर, ब्यावर-३०५९०१ (राजस्थान)
दूरभाष : ०९४१३६८५८२०

व्यंग्य

बकरी पर इल्जाम

● सुरजीत सिंह

जैसा कि छत्तीसगढ़ में एक बकरी पर इल्जाम लगा है। चरने का हर इल्जाम बकरी पर ही आता है। उसे जेल भेज दिया गया। बकरी का अपराध यह था कि वह मजिस्ट्रेट के बँगले में फूल-पत्तियाँ चरने चली गई। यह अक्षम्य अपराध था। बकरी होकर बँगले में घुसने का दुस्साहस किया। फौरन बकरी को जंजीर से बाँधकर अदालत लाया गया। बकरी कठघरे में खड़ी थी। मालिक हाथ बाँधे खड़ा था। अदालत लगी थी। जज साहब कुरसी पर विराजमान थे। सामने वकील खड़े थे। जिरह जारी थी। कानून अपना काम कर रहा था।

बकरी गरदन झुकाए खामोश खड़ी थी।

जज साहब ने बकरी से मुखातिब होकर पूछा, ''पता है, तुम्हें यहाँ क्यों लाया गया है?''

बकरी ने कातर निगाहों से जज साहब की ओर देखा।

''तुम पर एक नहीं, कई आरोप हैं। मजिस्ट्रेट के बँगले में घुसने की अनधिकृत चेष्टा, बार-बार घुसना, घास, फूल-पत्तियाँ चरना, सरकारी संपत्ति को नुकसान पहुँचाना, न्याय की सुरक्षा को खतरे में डालना।'' जज ने शृंखलाबद्ध आरोप सुनाए।

निरीह प्राणी! नन्ही सी जान! इतने सारे आरोप सुनकर दिल धड़क उठा। घबरा गई बकरी। प्रत्युत्तर में मिमिया ही सकती थी, जज साहब की ओर देखकर मिमियाई।

यदि मिमियाना ही दलील मानी जाती तो यहाँ किसी को सजा नहीं मिलती। कठघरे में खड़े होकर हर कोई मिमियाता है। आखिर अदालत भी कानून की जंजीर से बँधी है, जिसके सामने सबूत डालने पड़ते हैं। वह सिर्फ सबूत चरता है, तब जाकर न्याय की मेंगनी करता है।

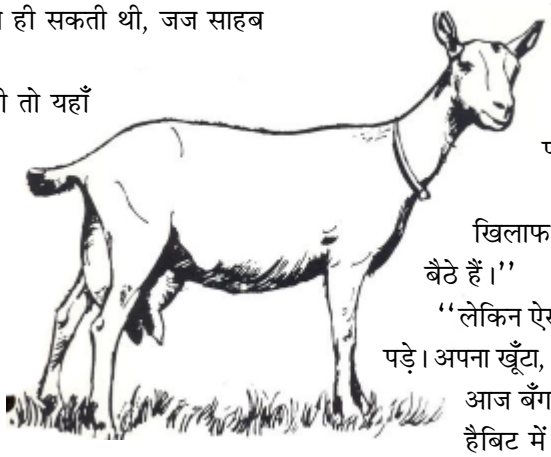

यह सुन, अपनी परेशानी भूलकर बकरी का हँसने का मन हुआ कि जंजीर से तो हम बकरियाँ बँधी हैं, फिर कानून और बकरी में क्या फर्क हुआ! लेकिन जज साहब की ओर देखते हुए मरियल-सी आवाज में बोली, ''हुजूर, मैं निर्दोष हूँ, यही मेरे पास सबूत है। अदालत को यह भी देखना चाहिए कि मैं बकरी हूँ, जिसे गांधीजी ने 'गरीब की गाय' कहा है, उससे किसी को क्या खतरा हो सकता है भला।''

''तुम्हें गांधीजी ने इतनी बड़ी उपमा दी है, कम-से-कम बँगले में घुसने से पहले तुम्हें गांधीजी का ही खयाल करना चाहिए था!''

''गांधीजी का खयाल रखने का जिम्मा सिर्फ गरीब और बकरियों के हवाले है, बाकी लोगों का काम तो उन्हें दुहना भर है। दुह लेते हैं, छोड़ देते हैं।'' बकरी एकाएक भूल गई कि वह कठघरे में खड़ी है। ''कोई भी चारे के दो तिनके दिखाता है, हमारा दूध उतर आता है, फिर दुह लेता है। कहीं चरने जाती हूँ तो कोई भी पकड़ लेता है और दुहना शुरू कर देता है। आज देश की बकरियाँ ऐसे ही दूसरों द्वारा दुही जा रही हैं। हर आदमी बकरियों की ताक में है, एक हाथ में बरतन छुपा है, एक हाथ दुहने का अभ्यास कर रहा है। हमारी फरियाद कहीं नहीं सुनी जाती।''

जज साहब बकरी का मुँह ताकने लगे। उन्होंने पहली बार किसी बकरी को यों बोलते सुना था। बकरी को सजा सुनाने के लिए यह छुपा इरादा ही काफी था। फिर ध्यान आया, वे जज हैं, ताकना उन्हें शोभा नहीं देता, कड़ककर बोले, ''इसके लिए तुमने कहीं फरियाद की?''

''साहब, किसके यहाँ फरियाद करें? जिनके खिलाफ फरियाद करें, वे तो हर जगह फरियाद सुनने बैठे हैं।''

''लेकिन ऐसी नौबत आए ही क्यों कि तुम्हें फरियाद करनी पड़े। अपना खूँटा, अपना चारागाह, अपनी हद याद रखनी चाहिए। आज बँगले में घुसी, कल फूल-पत्तियाँ चरी, परसों यह हैबिट में बदल सकती है। मंसूबे तो खतरनाक मालूम होते हैं।''

''हुजूर, काय के मंसूबे, बकरियाँ हैं, भूखे पेट चरने में मशगूल होकर कभी-कभार इधर-उधर निकल जाती हैं। फिर एक भूल तो क्षम्य हो ही सकती है।''

''बेशक क्षम्य होती है, लेकिन सरकार ने बकरियों के लिए चारागाह विकसित कर रखे हैं। समय-समय पर उनमें घास उगाने की सरकारी

नवोदित व्यंग्यकार। अब तक विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में व्यंग्य, आलेख, लघुकथाएँ प्रकाशित। सैकड़ों व्यंग्य, आलेख प्रकाशित। दस साल तक राजस्थान पत्रिका में पत्रकार एवं तीन साल तक 'लोकदशा' में फीचर संपादक रहने के बाद वर्तमान में जयपुर में रहकर स्वतंत्र लेखन कर रहे हैं।

योजनाएँ भी लॉञ्च की जाती हैं, अनुदान दिए जाते हैं। तुम्हारे लिए चरने के विशेष प्रबंध हैं, फिर भी तुम बँगले में चरने का लोभ सँवरण नहीं कर पाईं, कानून की तीक्ष्ण नजरों में तुम्हारे छुपे इरादों की गंध आ रही है?''

''हुजूर, हमारे इरादे तो जुगाली तक सीमित हैं! झूठ नहीं बोलूँगी, चारागाह हैं, उनमें घास भी उगाई जाती है, चारागाहों के बाहर बोर्ड भी लगे हैं कि बकरियों के लिए आरक्षित। किंतु चारागाहों की रक्षा में खतरनाक कुत्ते तैनात हैं, जो पास भी नहीं फटकने देते। हम बकरियाँ चरने चली भी जाएँ तो खदेड़ देते हैं या फिर कोई पहले ही चर जाता है। उधर सरकार ऐलान करती है कि बकरियों को घास मुहैया कराने का लक्ष्य अर्जित किया जा चुका है। बताइए, किसका लक्ष्य अर्जित हुआ?''

बकरी के मुँह में घास की जुगाली ही अच्छी लगती है, जब वह शब्दों की जुगाली करने लगती है तो ऐसे विद्रोही तेवर कितने बुरे लगते हैं, देखकर जज साहब एकाएक उखड़ गए, ''इन सबसे अदालत को क्या मतलब! यह तुम्हारे और सरकार के बीच का मसला है। इसीलिए तो न्याय की देवी की आँखों पर पट्टी बँधी है, ताकि वह कुछ ऐसा-वैसा न देख सके, सिर्फ सबूतों की खनक सुनकर फैसला सुना सके।''

एकाएक बकरी के मन में खयाल आया कि कह दे, सबूतों की नहीं, कोई और खनक सुनाई देती है। फिर यह सोचकर सहम गई कि कहीं फिर सबूत माँग लिया तो कहाँ से पेश करती फिरेगी। उल्टे अदालत की अवमानना का एक केस और लग जाएगा। यही भाव अच्छी-अच्छी गरदनों को झुकने पर मजबूर कर देता है। शब्द भरे मुँह सिल जाते हैं। उसने भी सिल लिया।

जज साहब ने हाथ बाँधे खड़े काँपते मालिक को घूरते हुए कहा, ''क्यों बे बकरी के मालिक, बकरियों को ऐसे खुला छोड़ा जाने लगा तो बँगलों का क्या होगा? क्यों न तुम्हें भी इस अपराध में बराबर का भागीदार माना जाए?''

''साहब, माफ कर दो, खूँटा पुराना था, जंजीर को जंग लग चुकी थी, तुड़ाकर न जाने कब निकल गई कमबख्त। कहो, तो अभी सुंताई करके सुधार दूँ!''

''यह अदालत तय करेगी, किसकी सुंताई, किसकी रिहाई। वैसे तुम्हें तो खूँटे और जंजीर की खरीद के लिए सब्सिडी भी मिलती होगी न। सरकार को बड़ी फिक्र है तुम गरीबों की। गरीब और गरीबी उन्मूलन के लिए ही तो सरकारें अब तक हैं, वरना उनके होने का औचित्य तो कब का समाप्त हो चुका।''

''मिलती है साहब!'' अपराध-बोध से दबे आदमी ने झट से स्वीकार कर लिया। अब यह कैसे बताता कि खूँटे को दीमक खा चुकी थी। जंजीर रस्सी से भी कमजोर निकली। एक झटके में जंजीर और बकरी दोनों जाती रहीं।

मालिक को निरुत्तर देख बकरी फिर मिमियाई, ''साहब, इसकी हालत तो मेरे से भी गई-गुजरी है। इसका सारा जोर मुझ पर है। आज गरीब की हालत उस बकरी की तरह ही है, बल्कि देश में गरीब है ही इसलिए, ताकि बाकी लोग अमीर हो सकें। उसका हर पाँच साल में वोट दुह लिया जाता है, छोड़ दिया जाता है। जिसके सहारे कई लोग देश को दुह रहे हैं।''

इतने में लंच का समय हो गया। जज ने कहा, ''फैसला खाने-पीने के बाद सुनाया जाएगा।''

कानून घास चरने चला गया।

बकरी जेल जाने की तैयारी करने लगी।

३६, रूपनगर प्रथम, हरियाणा मैरिज लॉन के पीछे,
महेश नगर, जयपुर-३०२०१५
दूरभाष : ०९६८०४०९२४६

यों हुआ वृक्षारोपण

लघुकथा

● रुद्रदत्त चतुर्वेदी

उत्तर प्रदेश के एक राजकीय महाविद्यालय में एक प्राचार्य थे। जुलाई-अगस्त में जब अखबारों में वृक्षारोपण की बाढ़ आई हुई थी तो उन्होंने भी इस हेतु एक सूचना प्रसारित कर दी। इसी बीच शिक्षा निदेशक की भी तीसरे दिन महाविद्यालय पहुँचने की सूचना मिली।

चतुर प्राचार्य ने निदेशक के आने के एक दिन पूर्व तीस गड्ढे खुदवाए और पूर्व रात्रि में पेड़ों की डालियाँ कटवाकर गड्ढों में खुरसवा दीं। निदेशक ने इस कार्य की सराहना की। इसी बीच एक चतुर सुजान प्राध्यापक ने निदेशक के पैर छूकर उठते समय कान में मंत्र फूँक दिया।

कॉलेज का राउंड लेते समय बॉटनी के प्रोफेसर रहे निदेशक ने पेड़ों को देखना चाहा और आखिरी पेड़ के पास पहुँचकर कथित वृक्ष की शाखा को उखाड़ दिया। फिर यू टर्न लेकर वृक्षारोपण की शल्य क्रिया हुई। प्राचार्य को प्रतिकूल प्रविष्टि मिली और वे कभी पदोन्नत न हुए।

अपने देश में जुलाई-अगस्त में हर वर्ष वृक्षारोपण की लहर चलती है और हम फोटो खिंचवाकर सबकुछ भूल जाते हैं।

सी-२१, देवरतन अपार्टमेंट
महानगर-लखनऊ
दूरभाष : ०९४५०९२७६७१

बाल-कथा

वैभवमणि

● कल्पनाथ सिंह

रामगढ़ रियासत में दो तरफ से जंगलों से घिरी बनजारों की एक छोटी सी बस्ती थी। बस्ती का नाम सुमेरपुर था। रामधन उसी बस्ती का रहनेवाला था। रामधन जब छोटा था, तभी उसका बाप मर गया था। परिवार में दो छोटी बहनें तथा उसकी माँ थी। माँ जंगल से सूखी लकड़ियाँ लाती, बाजार में बेचती, उसी से पूरे परिवार का खर्चा चलता था।

रामधन अपनी दुबली-पतली पाँच गाय-बछियों को लेकर दिनभर जंगल में चराता। जो जंगली फल-फूल मिल जाते तो जंगल में खाकर अपनी भूख मिटाता और कुछ फल-फूल बच जाते तो शाम को घर ले आता। उसे जंगली पशु-पक्षियों से बहुत प्रेम था। किसी भी घायल या बीमार पड़े छोटे-मोटे पशु या पक्षी को देखता तो घर उठा लाता। खूब सेवा, दवा व इलाज करता। ठीक हो जाने पर फिर उसे जंगल में छोड़ देता। इस काम में उसे बहुत आनंद मिलता था।

एक दिन शाम को वह एक टीले पर बैठा खेल रहा था। इतने में एक उल्लू उड़ता हुआ आया। एक मोटा-तगड़ा बाज उस पर झपटा। उल्लू भयभीत और घायल होकर जमीन पर गिर गया। बाज उस पर झपटा, तब तक रामधन दौड़ पड़ा। रामधन को देखकर बाज भाग गया। उल्लू बहुत घायल हो गया था। लगा कि बचेगा नहीं।

बेचारा घायल उल्लू रामधन को टुकर-टुकर ताकने लगा। दयालु रामधन ने घायल उल्लू को सहलाया। पास के झरने पर ले जाकर उसका घाव धोया। उसे चुल्लू से पानी पिलाया। फिर अपना अँगोछा बिछाकर घायल उल्लू को उससे ढक दिया। बेचारे उल्लू को काफी राहत मिली।

शाम को रामधन अपने जानवरों तथा घायल उल्लू को लेकर घर आया। माँ-बेटा ने उसको दूध पिलाया और कुछ जंगली जड़ी-बूटी पीसकर उसके घाव पर लगाई। दूसरे दिन उल्लू काफी ठीक हो गया। तीन-चार दिन की देखभाल के बाद उल्लू बिल्कुल ठीक हो गया तो माँ से पूछकर रामधन ने उल्लू को ले जाकर जंगल में छोड़ दिया।

वह उल्लू लक्ष्मी माँ की सवारी था। लक्ष्मी माँ उसको 'सेवक' कहकर पुकारती थीं। शाम को जब सेवक लक्ष्मी माँ के पास पहुँचता तो लक्ष्मी माँ आसन बनाकर उसपर बैठतीं। सेवक उल्लू फुदकता चूँ-चूँ करता लक्ष्मी माँ के पास पहुँचा तो लक्ष्मी माँ अनजान बनकर उससे पूछ बैठी, ''सेवक, चार-पाँच दिन से तुम कहाँ थे?''

''माँ, मैं घायल हो गया था। एक बाज ने मुझे बहुत घायल कर दिया था।''

अपने भोले-भाले सेवक की बात सुनकर लक्ष्मी माँ मुसकराकर बोलीं, ''तो रामधन और उसकी माँ ने तुम्हारी बड़ी सेवा की। तुम तो पहले से भी कुछ अधिक मोटे हो गए हो। रामधन और उसकी माँ ने तुमको क्या खिलाया-पिलाया था?''

''माँ, वो तो बहुत ही गरीब हैं। क्या खिलाते-पिलाते?''

''लेकिन मुझसे हर समय अपनी गाय का दूध जरूर पिलाते थे। बहुत सेवा करते थे मेरी।''

''जब तुम वहाँ से चलने लगे तो इतनी सेवा, दवा-इलाज करनेवाले रामधन को क्या दिया?''

''माँ, मेरे पास क्या है कि मैं उनको देता? तुम तो सबकुछ जानती हो माँ, तो मुझसे क्यों पूछती हो?'' सेवक की भोली-भाली बात सुनकर लक्ष्मी माँ हल्के से मुसकराकर बोलीं, ''तो तुम रामधन को कुछ देना चाहते हो?''

''हाँ माँ, वे बहुत गरीब हैं और बहुत ही भले भी। तुम जो भी दोगी माँ, मैं उसे ले जाकर रामधन को जरूर दे दूँगा। माँ, चाहो तो तुम खुद चलकर उसकी हालत देख सकती हो।''

''मैं सब जानती हूँ सेवक, फिर भी तुम कहते हो तो चलो, आज रात में उसी के घर चलूँगी।''

लक्ष्मी माँ की इतनी बात सुनकर सेवक खुश हो उठा। एक मिनट के लिए भी वह लक्ष्मी माँ से अलग नहीं हुआ कि कहीं माँ और जगह जाने के लिए न कह दें, क्योंकि वह आज ही लक्ष्मी माँ को लेकर रामधन की झोंपड़ी दिखाना चाहता था, लक्ष्मी माँ भी सेवक की भावना समझकर मन-ही-मन मुसकराती रही।

ठीक बारह बजे जब रात्रि का सन्नाटा गहरा गया तो लक्ष्मी माँ को लेकर सेवक रामधन की झोंपड़ी पर पहुँच गया। जीर्ण-शीर्ण झोंपड़ी के आगे जमीन पर कथरी बिछाए, दिनभर के थके-माँदे रामधन, उसकी माँ तथा दोनों बहनें गहरी नींद में सो रही थीं। उनकी दीन-हीन हालत देखकर लक्ष्मी माँ का भी कलेजा पिघल गया। सेवक ने तुरंत उन्हें जगाना चाहा, लेकिन लक्ष्मीजी ने इशारे से मना कर दिया।

पलभर के लिए रामधन की झोंपड़ी के अंदर लक्ष्मी माँ गईं और वैभवमणि उसकी झोंपड़ी में रखकर सेवक से बोलीं, ''सेवक, चलो अब चलें।'' चुपके से सुरदुर्लभ वैभवमणि रखते लक्ष्मी माँ को देखकर सेवक का कलेजा उछल पड़ा। मारे खुशी के पंख फड़फड़ाकर लक्ष्मी माँ को लेकर सेवक अंतर्धान हो गया।

उधर वैभवमणि के इंद्रधनुषी प्रकाश तथा बेला की मधुर गंध से रामधन की झोंपड़ी पल भर में नंदन-कानन की सुगंध बिखेरने लगी। मनमोहक सुगंध से अचानक रामधन की माँ की नींद जो खुली तो झोंपड़ी से उगनेवाली सुगंध और इंद्रधनुषी प्रकाश देखकर उसका कलेजा धक-धक करने लगा।

चुपके-चुपके बच्चों को जगाया। झोंपड़ी का प्रकाश और सुगंध देखकर बच्चे भी भौंचक रह गए। अब किसी की आँखों में नींद कहाँ!

सुबह होते ही बनजारों की बस्ती में खुसर-फुसर होने लगी। कोई कुछ कहता, कोई कुछ। बनजारे दिनभर भय के मारे अपनी-अपनी झोंपड़ी से बाहर नहीं निकले। रामधन और उसकी माँ की हालत तो और भी बुरी हो गई थी। सबने विचार किया कि रामधन और उसकी माँ इसे तत्काल ले जाकर देवगढ़ के महाराजा बीरभद्र सिंह को सौंपकर उनसे माफी माँग ले, तभी जान बचेगी। वरना पूरी बस्ती के लोग जेल जाएँगे। यह सामान रियासत से चुराकर कोई बनजारों को तबाह करने के लिए इस झोंपड़ी में रख गया है।

हिलते-काँपते रामधन और उसकी माँ उस वैभवमणि को साफ कपड़े में लपेटकर देवगढ़ पहुँचे तो दिन डूबनेवाला था। महाराजा बीरभद्र सिंह महारानी सुनयना के साथ राज-उद्यान में टहल रहे थे। टहलते बीरभद्र सिंह की नाक में वैभवमणि की सुगंध पड़ी तो वे चकित होकर इधर-उधर देखने लगे।

उसी समय रामधन और उसकी माँ पर उनकी नजर पड़ी तो एक सिपाही भेजकर उन दोनों को बुलवाया। रामधन की बगल में गठरी बँधी वैभवमणि की सात परत से छनकर आनेवाली इंद्रधनुषी रोशनी तथा उसकी सुगंध से महाराज चकित होकर पूछ बैठे, ''कहो, तुम लोग कैसे आए हो? और इस पोटली में क्या है?'' महाराज की बात सुनकर रामधन थर-थर काँप उठा, फिर पोटली खोली तो वैभवमणि की रोशनी और उसकी सुगंध से महाराज और महारानी दोनों आत्मविभोर हो उठे। तभी रामधन की माँ हाथ जोड़कर बोली, ''महाराज, यह कोई चोर-डाकू हमारी झोंपड़ी में रख गया था। सरकार, हम लोग बेगुनाह हैं। माफी चाहते हैं, रियासत का सामान रियासत को वापस देना चाहते हैं।''

रामधन की माँ ने यह कहते हुए पोटली खोलकर जब महाराज एवं महारानी के सामने वैभवमणि रखी तो उससे निकलने वाली इंद्रधनुषी आभा और मुग्धकारी सुगंध से महाराज और महारानी अभिभूत हो उठे। मुफ्त में मिली इस मणि को लपककर लेते हुए महाराज बोल पड़े, ''ठीक है, तुम लोग बेगुनाह हो। बेफ्रिक होकर अपने घर जाओ। तुम लोगों को कोई कुछ नहीं कहेगा।''

महाराज से अभयदान पाकर रामधन और उसकी माँ भगवान् को लाख-लाख धन्यवाद देते अपने घर को चल दिए।

उधर वैभवमणि को लेकर महाराज और महारानी खुश हो रहे थे कि इतने में दोनों के सामने अचानक दिव्य ज्योतिवाला एक साधु प्रकट हो गया और बोल पड़ा, ''राजन, यह दुर्लभ वैभवमणि प्रजा से दान लेकर आपने राजधर्म के विपरीत काम किया है। ऐसा आपने क्यों किया?''

''महाराज, मैंने दान नहीं लिया है, वह औरत तो स्वयं यह कहकर यह मणि दे गई है कि कोई चोर-डाकू उसकी झोंपड़ी में रख गया था।''

''तो क्या आपके राजमहल में या आपके राज्य में वह मणि किसी के पास थी?''

''नहीं महाराज?''

''तो फिर आपने बिना सोचे-समझे उसे क्यों ले लिया? आप तो राजा हैं। आपको तो कोई भी निर्णय सोच-समझकर लेना चाहिए।''

साधु की बात सुनकर महाराजा बीरभद्र सिंह के पाँव की जमीन हिल गई। वे उस साधु के सामने हाथ जोड़कर बोल पड़े, ''तो अब मुझे क्या करना चाहिए? गलती तो हो गई। मुझे कोई सुझाव दीजिए कि मैं क्या करूँ?''

महाराज बीरभद्र की गलती स्वीकार करने के बाद साधु भेषधारी महाराज कुबेर बोल पड़े, ''राजन, यह वैभवमणि माँ लक्ष्मीजी ने स्वयं रामधन और उसकी माँ को उनकी निस्स्वार्थ सेवा से प्रसन्न होकर दी थी। यह मणि, जिसके लिए देवता भी तरसते हैं, जहाँ रहती है, ऋद्धि-सिद्धियाँ स्वयं चक्कर लगाया करती हैं, ऐसी सुरदुर्लभ निधि आपके पास स्वयं आ गई है, इसलिए आप स्वयं उनके पास जाकर रामधन और उसकी माँ की सारी इच्छाएँ पूर्ण करिए और उनको भरोसा दिलाएँ कि भविष्य में भी जीवनपर्यंत उनकी सारी इच्छाएँ पूर्ण की जाती रहेंगी। राजन, यह भी याद रखिएगा कि जिस दिन आप उनकी इच्छाएँ पूर्ण करने में असफल होंगे, उसी दिन यह मणि अदृश्य हो जाएगी।''

साधु की बात सुनकर महाराज बीरभद्र सिंह अवाक् रह गए। तुरंत एक सुसज्जित रथ पर सवार होकर राजगुरु और कुछ सैनिकों के साथ स्वयं उस बनजारों की बस्ती सुमेरपुर में जब पहुँचे तो सारे बनजारे बस्ती छोड़कर भाग गए। रामधन और उसकी माँ तो थर-थर काँपते हुए, हाथ जोड़कर महाराज के सामने आए भी तो उनके बोल नहीं निकलते थे। राजगुरु तथा महाराज बीरभद्र सिंह के आदर-सम्मान और प्यार भरी बातों से उनको कुछ विश्वास हुआ। राजा के सेवक उन दोनों को ले जाकर नहला-धुलाकर रेशमी वस्त्र और रत्नाभूषण को पहनाकर लाए। अब तो रामधन और उसकी माँ के हर्ष का ठिकाना नहीं रहा।

रामधन और उसकी माँ से पूछकर पूरे बनजारों की बस्ती और बनजारों की दशा बदल दी गई। सारी बस्ती राजधानी की तरह सजा दी गई। धन-दौलत से न केवल रामधन का घर भर दिया गया बल्कि पूरी बस्ती को सुख-सुविधाओं से संपन्न कर दिया गया।

इस तरह रामधन और उसकी माँ की निस्स्वार्थ सेवाओं के कारण सब बनजारों का भाग्य बदल गया। उधर उस वैभवमणि के प्रभाव से महाराज बीरभद्र भी दिन दूना रात चौगुना बढ़ने लगे।

सी-६४५, श्रीनगर,
देवा रोड, बाराबंकी-२२५००१ (उ.प्र.)

भूल-सुधार

खेद है कि अक्तूबर-२०१६ अंक में पृष्ठ ३० पर प्रकाशित आलेख 'राष्ट्रीय चेतना के उद्घोषक उदय प्रताप सिंह' में फोटो गलत छप गया। संप्रति श्री उदय प्रताप सिंह उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान के अध्यक्ष हैं। उनका मूल फोटो यह है–

भारत का सबसे संपन्न मंदिर : वेंकटेश्वर बालाजी

● अनामिका प्रकाश श्रीवास्तव

आंध्र प्रदेश के चित्तूर जिले में दक्षिण भारत का प्रमुख तीर्थ तिरुपति है। तिरुपति तमिल भाषा का शब्द है। तमिल में 'तिरु' का तात्पर्य श्री एवं 'पति' का अर्थ प्रभु है। अत: तिरुपति का अर्थ श्री पति यानी कि श्री विष्णु हुआ। इसी प्रकार तिरुमलै का अर्थ 'श्री पर्वत' है, जिस पर लक्ष्मी के साथ स्वयं भगवान् विष्णु विराजमान हैं। तिरुपति इसी पर्वत के नीचे बसा हुआ है। भारत में भगवान् विष्णु के आठ विग्रह हैं, जो स्वयं प्रकट हुए हैं, उनमें यह तीसरा है।

सुपरिचित लेखिका। देश की पत्र-पत्रिकाओं में ज्वलंत विषयों पर आलेख, तीर्थाटन-यात्रा पर कुछ रचनाएँ प्रकाशित।

दक्षिण मध्य रेलवे (ब्रॉड गेज) के तिरुपति पूर्व-रेणिगुंटा गुडूर रेल मार्ग पर गुडूर से ८४ कि.मी. दूर एवं दक्षिण रेलवे (मीटर गेज) के काठपाडि-रेणिगुंटा रेलमार्ग पर रेणिगुंटा से दस किलोमीटर पहले तिरुपति पूर्व स्टेशन है। स्टेशन के समीप ही तिरुपति नगर है। यहाँ से तिरुमलै पर्वत पर जाने के लिए दो मार्ग हैं—एक पैदल जानेवालों के लिए तथा दूसरा मोटर बसों से जानेवालों के लिए पक्का मार्ग है। पैदल जाने में मंदिर लगभग ग्यारह किलोमीटर पड़ता है, जिसमें आठ कि.मी. की पर्वत पर कठिन चढ़ाई है। मोटर-बसों से जाने में मंदिर लगभग बाईस किलोमीटर दूर पड़ता है।

पैदल जानेवाले श्रद्धालुओं को मार्ग में 'कपिल तीर्थ' नामक एक सरोवर मिलता है, जिसमें पक्की सीढ़ियाँ बनी हैं। इसमें हमेशा जलधारा गिरती रहती है। आमतौर पर श्रद्धालुगण इस सरोवर में स्नान करते हैं। सरोवर के तट पर एक शिव मंदिर है। उसी के समीप गोपुरम् है। पैदल मार्ग में श्रद्धालुओं को कई मंदिर एवं गोपुरम् मिलते हैं।

भगवान् वेंकटेश्वर को ही उत्तर भारतीय 'बालाजी' कहते हैं। भगवान् के मुख्य दर्शन तीन बार होते हैं। पहला दर्शन 'विश्वरूप दर्शन' कहलाता है। यह प्रात:काल में होता है। दूसरा दर्शन मध्याह्न में तथा तीसरा दर्शन रात में होता है। इन सामूहिक दर्शनों के अतिरिक्त अन्य दर्शन भी हो सकते हैं, जिनके लिए विभिन्न शुल्क निश्चित हैं, इन तीन दर्शनों में कोई शुल्क नहीं लगता, इसलिए इनमें श्रद्धालुओं की भीड़ अधिक होती है। शिव व विष्णु के गुणोन्वित इस वेंकटेश्वर मंदिर की पूजा-अर्चना ग्यारहवीं शताब्दी के रामानुजाचार्य द्वारा निर्देशित विधि से ही होती है। अतीत में राजा-महाराजाओं के दान से इसका अक्षय भंडार बढ़ता ही गया और आज यह भारत का सबसे अधिक संपदा वाला मंदिर है। इसकी संपत्ति की कहानियाँ आज विश्वविख्यात हैं। देवता के मुकुट के निर्माण में लगभग पाँच करोड़ रुपए की लागत आई है। यह मुकुट बारह किलो सोने का है, जिसमें बहुमूल्य हीरों व मुक्ताओं के नौ हजार से भी अधिक टुकड़े जड़े हुए हैं। यहाँ तक कि देवता के धन से विभिन्न समाज सेवा के काम तथा विश्वविद्यालय का भी संचालन होता है।

वेंकटेश्वर मंदिर मेरु पर्वत के सप्तशिखरों पर बना हुआ है। पौराणिक कथानुसार ये शिखर भगवान् आदिशेष शेषनाग का प्रतिनिधित्व करते हैं। वेंकटेश्वर की मूर्ति कब स्थापित की गई थी, यह बताना कठिन है। कहा जाता है कि यह मूर्ति जमीन से प्रकट हुई थी, तब से श्रद्धालुगण इसके दर्शनार्थ यहाँ की यात्रा करते हैं। यह मूर्ति एक सात फुट के सीधे पत्थर से निर्मित है। मूर्ति के चार हाथ हैं, जो महाविष्णु का प्रतिनिधित्व करते हैं। भगवान् की मूर्ति श्यामवर्ण है, वे हाथों में शंख, चक्र, गदा, पद्म लिये खड़े हैं। भगवान् को कपूर का तिलक लगाया जाता है। भगवान् के तिलक से उतरा यह कपूर यहाँ प्रसाद रूप में बिकता है।

वेंकटेश्वर मंदिर का गोपुरम् २४७ फीट ऊँचा द्रविण स्थापत्य शैली की उत्कृष्टता का अनुपम नमूना है, जिसके ऊपर विमान सोने से मढ़ा हुआ है। इसका नाम 'आनंद निलयम' है। मंदिर में स्वर्ण मंडित ध्वज-स्तंभ भी है। मंदिर की नक्काशी काफी आकर्षक है। इस मंदिर में विभिन्न राजाओं-महाराजाओं की भी मूर्तियाँ हैं। वेंकटेश्वर मंदिर के समीप ही स्वामिपुष्करिणी नाम का एक विस्तृत सरोवर है, जिसके मध्य में एक

मंडप बना है, इसमें दशावतारों की मूर्तियाँ हैं। कहा जाता है कि भगवान् वराह के स्नान के लिए गरुड़जी इस सरोवर को बैकुंठ से लाए थे। इस सरोवर में स्नान करने का विधान है। सरोवर के पश्चिम की ओर भगवान् वराह का एक अन्य मंदिर है, जिसके पास ही श्रीकृष्ण का नवीन मंदिर है। वेंकटेश्वर मंदिर के दर्शन हेतु प्रतिदिन हजारों श्रद्धालु आते हैं, जो दर्शन के लिए घंटों प्रतीक्षा करते देखे जा सकते हैं। यहीं तीस रुपए या उससे अधिक का टिकट कटाकर देव-दर्शन की विशेष व्यवस्था भी है। जो यात्री टिकट ले लेते हैं, उन्हें लंबी लाइन से मुक्ति मिल जाती है।

वेंकटेश्वर मंदिर के समीप 'कल्याण कर' नामक स्थान है, जहाँ पर लोग मुंडन कराते हैं। इस क्षेत्र में मुंडन-संस्कार करना प्रधान कृत्य माना जाता है। सौभाग्यवती स्त्रियाँ भी यहाँ मुंडन कराती अथवा लट कटवाती हैं। सितंबर माह में आयोजित वार्षिक अनुष्ठान में भाग लेने के लिए दूर-दराज के श्रद्धालुगण आते हैं।

वेंकटेश्वर मंदिर से लगभग छह कि.मी. की दूरी पर 'आकाशगंगा' नाम का एक प्रपात है, जिसका जल एक कुंड में गिरता है। इसी जल से भगवान् को स्नान कराया जाता है एवं मंदिर के अन्य उपयोग में भी इसे लाया जाता है। यहाँ से लगभग दो कि.मी. की दूरी पर पापनाशन तीर्थ है, जहाँ दो पर्वतों के मध्य एक कुंड और एक जलस्रोत है। इसी तीर्थ के मार्ग में हाथीराम बाबा की समाधि और राधा-कृष्ण मंदिर, बैकुंठ तीर्थ, पांडवतीर्थ, जाबालि तीर्थ दर्शनीय हैं। ये तीर्थ वेंकटेश्वर मंदिर से लगभग दो-तीन किलोमीटर की दूरी पर स्थित हैं।

तिरुपति नगर में स्थित गोविंदराज मंदिर में अनंत शय्या पर शायी भगवान् नारायण की श्रीमूर्ति है, जिसकी प्रतिष्ठा स्वामी रामानुजाचार्य ने की थी। श्री रामानुजाचार्य के आठ प्रधान पीठों में से यह एक पीठ है, तिरुपति नगर के उत्तर की ओर कोदंडराम मंदिर भी दर्शनीय है। इसमें श्रीराम, लक्ष्मण और जानकी के श्रीविग्रह स्थापित हैं।

तिरुपति नगर से लगभग पाँच किलोमीटर दूर तिरुच्चानूर में पद्मावती का मंदिर भी दर्शनीय है। यहाँ 'पद्मेश्वर' नामक एक विस्तृत सरोवर है, जिसके समीप ही यह मंदिर है। स्थानीय भाषा में इस देवी को 'अलवेलुमंगम्मा' कहते हैं। इन देवी को लक्ष्मी-स्वरूपा मानते हैं। लोगों की ऐसी धारणा है कि वेंकटेश्वर के दर्शन के पश्चात् पद्मावती देवी के दर्शन न करने से बालाजी की यात्रा अपूर्ण रह जाती है।

श्री वेंकटेश्वर मंदिर में ठहरने हेतु कई धर्मशालाएँ, लॉज एवं गेस्ट हाउस उपलब्ध हैं।

जी-९, सूर्यपुरम्, नंदनपुरा, झांसी-२८४०००३
दूरभाष : ०९४१५०५५६५५

चहकू व महकू

● श्यामसखा श्याम

बाल-कथा

भौंरे व महकू गुलाब में बड़ी गहरी मित्रता थी। चहकू जब देखो महकू के चारों ओर मँडराता रहता था। कभी महकू के फूलों से मीठा रस पीता तो कभी उसके फूलों के पराग कण लेकर दूर महकू के दोस्त गुलाब तक पहुँचा देता। अगर चहकू कभी दूर उड़ जाता तो महकू अपने फूलों की सुगंध से चहकू को बुला भेजता। दोनों के दिन बहुत अच्छे गुजर रहे थे। एक दिन अचानक बाग के माली ने महकू की टहनियाँ काटनी शुरू कर दीं। चहकू भौंरें को यह देखकर बहुत गुस्सा आया। उसने आव देखा न ताव माली के कान के पास जाकर काट लिया। माली तिलमिला उठा। उसका हाथ चहकू को मसलने को बढ़ा ही था कि महकू गुलाब ने हवा में झूलकर अपना तेज काँटा माली की बाँह में चुभो दिया। महकू जान बचाकर दूर उड़ गया। माली महकू की काँट-छाँटकर चला गया। माली के जाने के बाद चहकू लौटा तो महकू की हालत देखकर दु:ख प्रगट करने लगा। इस पर महकू हँसकर बोला, ''चहकू दोस्त, तुम्हारा शुक्रिया तुमने मुझे कटने से बचाने के लिए प्रयत्न किया और मैंने भी काँटा चुभोकर तुम्हारी जान बचाई। परंतु माली हमारा शत्रु नहीं है, वह देखो, उसने मेरी टहनियों की कलमें बनाकर वहाँ क्यारियों में बो दी है। कुछ दिनों बाद ये कलमें फूटेंगी और अनेक महकू वहाँ लहलहा उठेंगे। जिस तरह तुम मेरे पराग कणों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाकर प्रकृति के काम में सहयोग करते हो, वैसे ही माली भी हम पौधों के संरक्षण व प्रसार में सहायता करता है। महकू की बात सुनकर चहकू ने फिर कभी माली को न काटने का वायदा किया।

७०३, जी.एच.एस., ८८ पल्लवी
सेक्टर-२०, पंचकुला-१३४११०
दूरभाष : ०९४१६३५९०१९

ईश्वर से ही आस कर...

● बसंता

सुपरिचित कवि एवं रचनाकार। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। संप्रति अंग्रेजी विभाग के प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, सरदार वल्लभभाई पटेल महाविद्यालय, कैमूर (बिहार)।

जाग मुसाफिर जाग

मानव जीवन है सदा, सुख-दुःख के आधीन।
मन को प्रभु के चरणों में, रखो सदा तल्लीन॥

जितना भोगा देहसुख, देना होगा ब्याज।
इंद्रिय सुख मिथ्या सभी, तन की केवल खाज॥

क्या लाया, क्या खो दिया, सब प्रभु की सौगात।
ईश्वर तो सब जानता, तेरे मन की बात॥

नदिया जल लेकर चली, मुदित होत इठलात।
सागर में जब मिल गई, भूल गई औकात॥

ईश्वर से ही आस कर, छोड़ और की आस।
दूजे की आशा करे, मिलता केवल त्रास॥

आँख से जो कुछ दीखता, सब विनाश के ग्रास।
आज नहीं तो कल अवश्य, सबका होगा नाश॥

यह आत्मा नित अमर है, ईश्वर का अवदान।
एकमात्र अंशी वही, सच्चिदानंद भगवान॥

दास बनो उस ईश के वही हरेगा पीर।
एकमात्र दाता वही, तुम प्यासे वह नीर॥

जो कुछ है प्रारब्ध में, वही तेरी तकदीर।
तेरा तुझको मिलेगा, मन से रहना धीर॥

रसना तो यह सर्पिणी, खोजे इंद्रिय भोग।
ईश भजन में यदि लगे, बने दिव्य संयोग॥

समय बड़ा बलवान है, मत कर तू उपहास।
उसके चंगुल में सभी, राजा हो या दास॥

आँखों से नित देख तू, प्रभु का दिव्य वितान।
अद्‌भुत रचनाकार है, जगदीश्वर भगवान।

तुम पर तेरे ईश ने, किया परम उपकार।
उस ईश्वर को भूलकर, मत बन तू बेकार॥

याद करो तो ईश को, भूलो तो संसार।
हर कण में तो ईश का, है अनंत विस्तार॥

कब तक सोते रहोगे, जाग मुसाफिर जाग।
तेरे चारों तरफ तो, लगी हुई है आग॥

पुष्प पराग

धैर्य और साहस मिल जाए, जीवन की हर राह सुगम हो।
तृषित धूप में छाँव मिले तो, तने की विकल वेदना कम हो॥
प्यासे पथिक को नीर मिले, तो उसकी यात्रा अधिक सरल हो।
माँ का आँचल मिले शिशु को, अमृत की वर्षा अविरल हो॥

भिक्षुक को यदि मिले रोटियाँ, जीवन उसका मंगलमय हो।
नारी को सम्मान मिले तो, हर घर में सौभाग्य उदय हो॥
जीवन सुरभित हो जाए यदि नीर-क्षीर-विवेक उदय हो।
नदियाँ सदा चाहती हैं, सागर में उनका नित्य विलय हो॥

मोर चाहता बादल बरसे हरे-भरे उपवन हों।
पशु-पक्षी नित यही चाहते सुंदर आकर्षक गिरि वन हों॥
धरा चाहती सत्य धर्म सुंदरता का उद्‌दाम सृजन हो।
उसका प्रियतम उसे निहारे ऊपर नीलगगन हो॥

नाव चाहती उसका माँझी बहुत ही दक्ष-कुशल हो।
मीन चाहती है शरीर के ऊपर-नीचे जल हो॥
भक्त चाहते नित ईश्वर का पल हर पल अवलंबन हो।
ईश्वर सदा चाहता है भक्तों का निर्मल मन हो॥

देशभक्त हर वक्त चाहता सर्वोत्कृष्ट वतन हो।
त्याग और बलिदान भाव से प्रेरित सबका मन हो॥
देश के खातिर बच्चा-बच्चा मरने को तत्पर हो।
देशवासियों के मन में नित राष्ट्रधर्म सबसे ऊपर हो॥

उस देश को कौन मिटा सकता जहाँ त्याग का भाव प्रबल हो।
उस धरा को कौन मिटा सकता जहाँ गंगा नीर धवल हो॥
वह व्यक्ति महामानव होता जिसका चरित्र उज्ज्वल हो॥
लक्ष्य अवश्य उसे मिलता जो लक्ष्य के प्रति विकल हो॥

सरदार वल्लभभाई पटेल महाविद्यालय, भभुआ,
कैमूर, बिहार-८२११०१
दूरभाष : ०९४३०५८१२४६

वर्ग पहेली (१३४)

अगस्त २००५ अंक से हमने **'वर्ग पहेली'** प्रारंभ की, जिसे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं ज्ञान–विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३० नवंबर, २०१६ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें दो सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम–पते जनवरी २०१७ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर **'वर्ग पहेली', साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली–२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (१३२) का शुद्ध हल

१ गो	कु	२ ल	■	३ दे	४ ह	चु	५ रा	६ ना
ब	■	७ दा	८ न	शी	ल	■	९ म	द
१० र	११ घु	व	र	■	१२ ध	१३ न	दा	■
१४ ग	न्ना	■	१५ क	१६ म	र	क	स	१७ ना
णे	■	१८ अ	■	यू	■	ल	■	नी
१९ श	२० र	म	२१ र	ख	२२ ना	■	२३ दा	म
■	२४ स	र	स	■	२५ रा	२६ ज	गी	र
२७ दा	दा	■	२८ रा	२९ ह	ज	न	■	जा
३० द	र	गु	ज	र	■	३१ क	ल्प	ना

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **श्री मोहन जगराले**
९७–ए, वृंदावन धाम
निकट महामृत्युंजय द्वार
उज्जैन–४५६००१ (म.प्र.)

२. **श्रीमती संतोष शर्मा**
८/२३३, सेक्टर–३,
राजेंद्र नगर, साहिबाबाद,
गाजियाबाद–२०१००५
(उ.प्र.)

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई !

वर्ग–पहेली १३२ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री ब्रह्मानंद 'खिच्ची' (महेंद्रगढ़), फकीरचंद ढुल (कैथल), सी.आर. नाहड़िया (नारनौल), विजयपाल सेहलंगिया (सेहलंग), निर्मला गुजराती, शिखा जैन (दिल्ली), विनीता सहल, शालिग्राम एस. तिवारी (मुंबई), गिरधारी लाल अग्रवाल (यवतमाल), शिवशरण दुबे (कटनी), मोहन उपाध्याय (अजमेर), एम.मोईनुद्दीन (समस्तीपुर), राजेश्वर प्रसाद मिश्र (इलाहाबाद), प्रभात कुमार गुप्ता (मोहाली), भूपसिंह (हरिद्वार), रामप्रकाश राय (गोरखपुर), विनीत उप्रेती (चमौली)।

बाएँ से दाएँ—

१. व्यवसाय (४)
४. धूर्त (४)
७. रुपया–पैसा (२)
८. नीचे का (३)
१०. प्राण (२)
११. छोटी–छोटी कहानियाँ (२)
१२. गला हुआ सोना (५)
१४. विशेषता (२)
१५. रोआँ; बाल (२)
१६. निरंतर (४)
१८. कभी–कभी (४)
२०. बराबर (२)
२१. धुन (२)
२२. कागजात (३–२)
२५. अपने माता–पिता से उत्पन्न दूसरा व्यक्ति (२)
२६. हया (२)
२७. तिगुना (३)
२९. मूर्च्छा (२)
३१. गहरी चाह से भरा हुआ (४)
३२. आवश्यकता (४)

ऊपर से नीचे—

१. रुकावट (२)
२. देश के निवासियों की होनेवाली गिनती (५)
३. अनुरक्त (२)
४. वह कागज, जिसमें किसी के लिए भेजी हुई वस्तु का विवरण हो (३)
५. हाट (३)
६. भीड़; मजमा (६)
९. धन की राशि (३)
१३. एक कँटीला झाड़, जिसके फल छोटे और खट्टे होते हैं (३)
१४. गरीब पर गुणी (३,१,२)
१५. नमक (२)
१७. मेज का वह हिस्सा, जो बाहर खींचा जा सकता है (३)
१८. मृत्यु का देवता (२)
१९. कलई करनेवाला (४)
२०. दस और सात (३)
२३. उर्दू में शृंगार रस की कविता (३)
२४. नीति भ्रष्ट (३)
२८. रहस्य (२)
३०. सौ (२)

वर्ग पहेली (१३३) का हल अगले अंक में।

वर्ग पहेली (१३४)

१	२		३	■	४		५	६
७		■	८	९		■	१०	
■	११		■	१२		१३		
१४		■	१५		■		■	
१६		१७		■	१८		१९	
	■		■	२०		■	२१	
२२	२३		२४		■	२५		■
२६		■	२७		२८	■	२९	३०
३१				■	३२			

प्रेषक का नाम : .....

पता : .....

.....

.....

'दीनदयाल उपाध्याय संपूर्ण वाङ्मय' लोकार्पित

९ अक्तूबर को नई दिल्ली के विज्ञान भवन में पं. दीनदयाल उपाध्याय जन्म शताब्दी के अवसर पर एकात्म मानवदर्शन अनुसंधान एवं विकास प्रतिष्ठान के अध्यक्ष श्री महेश चंद्र शर्मा द्वारा संपादित एवं प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित 'दीनदयाल उपाध्याय संपूर्ण वाङ्मय' के पंद्रह खंडों का लोकार्पण भारत के प्रधानमंत्री मान. श्री नरेंद्रभाई मोदी, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरकार्यवाह मान. श्री सुरेश (भय्याजी) जोशी व भारतीय जनता पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष मान. श्री अमितभाई शाह के करकमलों से संपन्न हुआ।

कार्यक्रम का शुभारंभ माननीय अतिथियों द्वारा पं. दीनदयाल उपाध्याय की प्रतिमा पर माल्यार्पण के साथ हुआ। पं. दीनदयाल उपाध्याय के जीवन पर केंद्रित वृत्तचित्र दिखाया गया। एकात्म मानवदर्शन अनुसंधान एवं विकास प्रतिष्ठान के अध्यक्ष डॉ. महेश चंद्र शर्मा ने दीनदयाल उपाध्याय संपूर्ण वाङ्मय के प्रकाशन की पूरी परिकल्पना रखी और दृश्य-श्रव्य के माध्यम से प्रत्येक खंड में किस-किस काल खंड का क्या कलेवर है, इसकी भूमिका, प्रस्तावना तथा 'वह काल' किसने लिखा है, यह भी बताया गया।

इस अवसर पर विशिष्ट अतिथि और भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री अमित शाह ने अपने उद्बोधन में कहा कि पंडित दीनदयाल उपाध्याय का जीवन समाज-जीवन में काम करनेवाले समस्य कार्यकर्ताओं के लिए आदर्श उदाहरण है कि जल-कमलवत् रहते हुए कैसे समाज कार्य किया जाता है। मेरा सौभाग्य है कि आज मैं उस पार्टी का अध्यक्ष हूँ, जिस पौधे को पं. दीनदयालजी ने अपने मार्गदर्शन में पाला-पोसा और आज वह वटवृक्ष बन गया है। दीनदयालजी के अंत्योदय के विचार को लेकर मोदी सरकार आगे बढ़ रही है।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरकार्यवाह मान. श्री सुरेश (भय्याजी) जोशी ने अपने उद्बोधन में कहा कि भारत की अपनी पहचान चिंतन के आधार पर है। यहाँ हम नए विचारों का सृजन करते हैं। पं. दीनदयालजी के माध्यम से उन्होंने कहा कि सरकार को क्या करना चाहिए, और किन बिंदुओं पर ध्यान देने की जरूरत है। उन्होंने यह भी कहा कि छोटे-छोटे देश अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रहे हैं, वे चाहते हैं कि भारत उनका नेतृत्व करे।

मान. नरेंद्रभाईजी ने अपने उद्बोधन में कहा कि यह वाङ्मय पंडितजी की जीवन-यात्रा, विचार-यात्रा और संकल्प-यात्रा की त्रिवेणी है। यह दिन इस त्रिवेणी का प्रसाद लेने का दिन है। उन्होंने कहा कि इस बार की विजयादशमी का विशेष महत्त्व है। उन्होंने कहा कि हम अपनी सेहत के लिए, शरीर की मजबूती के लिए अपने घर पर कसरत कर रहे हैं, तो इससे पड़ोसी को क्यों डरना चाहिए। हम वेद से विवेकानंद तक सुनते आए हैं; चक्र सुदर्शनधारी से चरखाधारी मोहन तक को सुनते आए हैं। पंडितजी का कहना था कि भारत की जड़ों से जुड़ी संस्कृति ही भारत का भाग्य बदलने की सामर्थ्य रखती है, हमें अपने आपको समर्थ बनाना है। पंडितजी ने सप्तगंगा, यानी सात आदर्श—एकरसता, कर्मठता, समानता, संपन्नता, ज्ञान, सुख एवं शांति—हमारे सामने रखे। यह देश विविधताओं से भरा है, यह इसकी खूबसूरती भी है। विजय का विश्वास और तपस्या में कमी नहीं, चरैवेति-चरैवेति यही मंत्र पंडितजी ने हमें दिया।

वंदे मातरम् गायन के साथ कार्यक्रम का समापन हुआ। मंच पर संपादक मंडल के प्रतिनिधि के रूप में वरिष्ठ संपादक सर्वश्री रामबहादुर राय, जवाहरलाल कौल एवं अच्युतानंद मिश्र भी विराजे थे। संचालन दीनदयाल शोध संस्थान के प्रधान सचिव श्री अतुल जैन ने किया। इस भव्य समारोह में केंद्रीय मंत्री, राज्यपाल, मुख्यमंत्री, राष्ट्रीय स्वयंसेवक के वरिष्ठ अधिकारी, साहित्यकार, पत्रकार, लेखक और समाज के विभिन्न वर्गों के प्रबुद्धजन बड़ी संख्या में उपस्थित थे। ☐

'एसिड वाली लड़की' कृति लोकार्पित

७ अक्तूबर को नई दिल्ली के कॉन्स्टीट्यूशन क्लब के डिप्टी स्पीकर हॉल में मणिपुर की राज्यपाल मान. डॉ. नजमा हेपतुल्ला की अध्यक्षता में वरिष्ठ पत्रकार सुश्री प्रतिभा ज्योति की प्रभात प्रकाशन द्वारा नव प्रकाशित पुस्तक 'एसिड वाली लड़की' का लोकार्पण केंद्रीय महिला एवं बाल विकास मंत्री मान. श्रीमती मेनका गांधी के करकमलों से संपन्न हुआ। मुख्य वक्ता सुप्रसिद्ध प्लास्टिक सर्जन पद्मश्री डॉ. अशोक गुप्ता थे। संचालन प्रसिद्ध टी.वी. एंकर श्री सईद अंसारी ने किया। ☐

'महाव्रती कर्मयोगी प्रचारक सोहन सिंह' कृति लोकार्पित

१८ अक्तूबर को नई दिल्ली के विष्णु दिगंबर मार्ग, हिंदी भवन सभागार में मान. सोहन सिंह की स्मृति में श्री गोपाल शर्मा द्वारा संपादित एवं प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'महाव्रती कर्मयोगी प्रचारक सोहन सिंह' का लोकार्पण परम पूज्य. सरसंघचालक मान. श्री मोहनराव भागवत के करकमलों से संपन्न हुआ। ☐

'अँधेरे से उजाले की ओर' कृति लोकार्पित

२० अक्तूबर को नई दिल्ली के भारतीय जनता पार्टी मुख्यालय के सभागार में केंद्रीय वित्त व कॉरपोरेट कार्य मंत्री मान. श्री अरुण जेटली की प्रभात प्रकाशन द्वारा सद्य:प्रकाशित पुस्तक 'अँधेरे से उजाले की ओर' का लोकार्पण भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष मान. श्री अमित शाह के करकमलों से संपन्न हुआ। विशिष्ट अतिथि वरिष्ठ पत्रकार एवं राज्यसभा सांसद मान. श्री स्वपन दासगुप्ता थे। ☐

'१०० कवि' एवं 'निर्भया' कृतियाँ लोकार्पित

१० सितंबर को लखीमपुर की नगरपालिका सभागार में डॉ. इरा श्रीवास्तव द्वारा युवा कवि श्री सुरेश सौरभ की दो कृतियों '१०० कवि' एवं 'निर्भया' का लोकार्पण किया गया। विशिष्ट अतिथि डॉ. वीना रानी गुप्ता व श्री जोगिंदर सिंह चावला थे। सर्वश्री श्याम किशोर बेचैन, मृदुला शुक्ला शिवा, ओ.पी. श्रीवास्तव ने काव्य पाठ किया। संचालन श्री अजय जायसवाल ने तथा आभार श्री सत्य प्रकाश शिक्षक ने व्यक्त किया। ☐

'साढ़े तीन मिनट का भाषण' कृति लोकार्पित

३ सितंबर को मुंबई में हिंदुस्तानी प्रचार सभा के तत्त्वावधान में मुंबई

के चर्चित व्यंग्यकार श्री संजीव निगम के सद्य:प्रकाशित व्यंग्य संग्रह 'साढ़े तीन मिनट का भाषण' का लोकार्पण श्री फिरोज पैच तथा सुप्रसिद्ध साहित्यकार डॉ. सूर्यबाला तथा डॉ. प्रेम जनमेजय द्वारा किया गया। ☐

'झूठ के होलसेलर' कृति लोकार्पित

२ अक्तूबर को हिमाचल प्रदेश भाषा एवं संस्कृति विभाग के सोलन स्थित सभागार में उपायुक्त श्री राकेश कँवर द्वारा प्रसिद्ध व्यंग्यकार श्री अशोक गौतम के पाँचवें व्यंग्य-संग्रह 'झूठ के होलसेलर' का लोकार्पण किया गया, जिसमें सर्वश्री हेमराज कौशिक, रामगोपाल शर्मा, बलदेव सिंह ठाकुर, राजेंद्र वर्मा ने अपने विचार व्यक्त किए। ☐

'शांति की तलाश में जिंदगी' कृति लोकार्पित

१४ सितंबर को देहरादून के राजभवन में श्री शंभूनाथ शुक्ल के विशिष्ट आतिथ्य में उत्तराखंड के राज्यपाल डॉ. के.के. पॉल ने प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित डॉ. राधिका नागरथ की पुस्तक 'शांति की तलाश में जिंदगी' का लोकार्पण किया, जिसमें सर्वश्री मुनि चिदानंद, प्रणव पंड्या, स्वामी सत्यमित्रानंद, राधिका नागरथ सुनील दत्त पांडेय ने अपने विचार व्यक्त किए। ☐

लोकार्पण समारोह संपन्न

१७ सितंबर को नई दिल्ली के हिंदी भवन में 'गूँज' के तत्त्वावधान में श्री मुकेश कुमार सिन्हा और सुश्री अंजु चौधरी की संपादन-शृंखला की छठी कड़ी के रूप में सौ रचनाकारों के साझा काव्य-संग्रह '१०० कदम' का लोकार्पण किया गया। साथ ही सुश्री प्रीति अज्ञात के काव्य-संग्रह 'मध्यांतर' का भी विमोचन हुआ। सर्वश्री शुभ्रा कुमारी, नंदा पांडेय, विवेक कवीश्वर, आभा खरे, आभा चौधरी, शेफालिका वर्मा, मंजू मिश्रा, स्मिता सिन्हा, राखी शर्मा, भावना शेखर, अमिता श्रीवास्तव, ज्योति खरे, जयश्री रॉय, अपर्णा भागवत, अर्चना चक्रवर्ती, भावना सिन्हा, पूनम भार्गव, अपराजिता, राहुल, अंशु त्रिपाठी, नितीश मिश्रा, रेणु मिश्रा, दर्शवीर संधू ने काव्य-पाठ किया। संचालन सुश्री रेनू आहूजा ने किया। ☐

परिचर्चा आयोजित

१४ सिंतबर को नई दिल्ली में इंटरटेनमेंट इंटरप्राइजेज लि. के संयुक्त तत्त्वावधान में साहित्य अकादेमी में 'हिंदी की वर्तमान स्थिति : चुनौतियाँ एवं समाधान' विषय पर परिचर्चा का आयोजन किया गया, जिसमें मुख्य अतिथि श्री बल्देव भाई शर्मा, डॉ. सुभाष चंद्रा, प्रो. अशोक चक्रधर ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर डॉ. सुभाष चंद्रा की आत्मकथा के हिंदी अनुवाद का लोकार्पण नोबल शांति पुरस्कार विजेता श्री कैलाश सत्यार्थी द्वारा किया गया। संचालन डॉ. देवेंद्र कुमार देवेश ने किया। ☐

त्रिदिवसीय साहित्य महोत्सव संपन्न

२५-२७ सितंबर को मैनपाट में छत्तीसगढ़ मित्र पत्रिका एवं छत्तीसगढ़ पर्यटन मंडल के तत्त्वावधान में डॉ. राजेंद्र मिश्र की अध्यक्षता, डॉ. प्रेम जनमेजय के मुख्य आतिथ्य एवं सर्वश्री हरिसुमन बिष्ट, लालित्य ललित, श्रीराम परिहार, प्रत्यूष गुलेरी व सुधाकर पाठक के विशिष्ट आतिथ्य में वरिष्ठ साहित्यकार डॉ. माणिक विश्वकर्मा नवरंग की कृति 'नवरंग की कुंडलियाँ' कृति का विमोचन किया गया। संचालन डॉ. सुधीर शर्मा ने तथा धन्यवाद श्री सौरभ वर्मा ने किया। ☐

हिंदी दिवस मनाया गया

२७ सितंबर को इंदिरापुरम (गाजियाबाद) में संस्कार वैभव द्वारा श्रीमती रंजना सिंह के विशिष्ट आतिथ्य में हिंदी पर्व का आयोजन किया गया, जिसमें हिंदी साहित्य के इतिहास को दरशाती 'गाथा हिंदी भाषा की' को संगीत रूप में विभिन्न साहित्यकारों द्वारा प्रस्तुत किया गया। संचालन सुश्री मीना जैन ने तथा धन्यवाद सुश्री सुमन बिष्ट ने ज्ञापित किया। ☐

हिंदी दिवस पर कार्यक्रम संपन्न

१७ सितंबर को चित्र विहार, दिल्ली में डॉ. हेम भटनागर के आवास पर संस्कार द्वारा डॉ. विमलेश कांति वर्मा व श्रीमती धीरा वर्मा के मुख्य आतिथ्य में हिंदी दिवस कार्यक्रम आयोजित किया गया, जिसमें 'हरसिंगार ने महका दिए कुछ पल' विषय पर संस्मरण प्रस्तुत किए गए। इस अवसर पर सुश्री मधुलिका अग्रवाल को 'संगच्छध्वं प्रकाशन पुरस्कार', दीप्ति प्रसाद को 'संगच्छध्वं हिंदी सेवा सम्मान' एवं ऋतु जैन को 'संस्कार सहयोगी पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। संचालन सुश्री मीना जैन व निधि वर्मा ने किया। धन्यवाद डॉ. हेम भटनागर ने ज्ञापित किया। ☐

साहित्यिक परिचर्चा संपन्न

९ सिंतबर को भोपाल के स्वराज भवन में डॉ. देवेंद्र दीपक की अध्यक्षता एवं श्री युगेश शर्मा के मुख्य आतिथ्य में पुस्तक लोकार्पण, व्यंग्य विधा एवं रचना-पाठ का आयोजन किया गया। प्रथम चरण में डॉ. मोहन तिवारी 'आनंद' ने अपने विचार व्यक्त किए। द्वितीय चरण में उनकी कृति 'चौपाल की कहावतें' एवं श्री विश्वनाथ शर्मा 'विमल' की कृति 'यादें अपने गाँव की' का लोकार्पण किया गया। तृतीय चरण में श्री युगेश शर्मा ने व्यंग्य विधा पर अपने विचार व्यक्त किए। रचना-पाठ के क्रम में श्री विश्वनाथ शर्मा 'विमल' एवं श्री नवल जायसवाल ने रचना-पाठ किया। इस अवसर पर सर्वश्री जितेंद्र तिवारी, वर्मा राम भरोसे, श्याम बिहारी सक्सेना, श्रीनिवास झा ने अपने विचार व्यक्त किए। ☐

परिसंवाद आयोजित

३० सितंबर को नई दिल्ली में साहित्य अकादेमी द्वारा अंतरराष्ट्रीय अनुवाद दिवस पर 'अनुवाद एवं बहुसांस्कृतिक चुनौतियाँ' विषय पर परिसंवाद का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री अवधेश कुमार सिंह, के. श्रीनिवासराव, सुकांत चौधुरी व विश्वनाथ प्रसाद तिवारी ने अपने विचार व्यक्त किए। द्वितीय सत्र में श्री एच.एस. शिवप्रकाश की अध्यक्षता में 'बहुभाषी समाज में अनुवाद : चुनौतियाँ एवं संभावनाएँ' विषय पर श्री एन. कल्याण रमन तथा श्री शाफे किदवई ने अपने विचार व्यक्त किए। द्वितीय चरण में श्री मालाश्री लाल की अध्यक्षता में 'संस्कृति का अनुवाद' विषय पर सर्वश्री जतींद्र के. नायक, देवेंद्र चौबे व चंद्रकांत पाटील ने अपने विचार व्यक्त किए। ☐

स्मृति समारोह संपन्न

२४ सितंबर को नई दिल्ली में साहित्य अकादेमी द्वारा श्री प्रभाकर

श्रोत्रिय की स्मृति में शोकसभा आयोजित की गई, जिसमें सर्वश्री विश्वनाथ त्रिपाठी, वेदप्रताप वैदिक, मृदुला गर्ग, विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, विष्णु नागर, माधव कौशिक, शीन काफ निजाम, रीतारानी पालीवाल, कमल कुमार, सत्यव्रत, यशोधरा मिश्र, बलराम, रामचंद्र गौतम, देवेंद्र कुमार ने अपने विचार व्यक्त किए तथा डॉ. के. श्रीनिवासराव ने शोक संदेश पढ़ा। □

कवि श्री नरेंद्र दीपक सम्मानित

विगत दिनों भोपाल के हिंदी भवन में प्रो. रामेश्वर मिश्र 'पंकज' की अध्यक्षता में तथा श्री कैलाशचंद्र पंत व डॉ. देवेंद्र दीपक के विशिष्ट आतिथ्य में हिंदी के वरिष्ठ कवि श्री नरेंद्र दीपक को दोहरी साहित्यिक उपलब्धि प्राप्त होने पर साहित्यिक बिरादरी द्वारा सम्मानस्वरूप शॉल, श्रीफल एवं पुष्पमाला भेंट की गई। साथ ही मध्य प्रदेश शासन की साहित्य अकादमी ने उन्हें गजल-संग्रह 'देर रात तक' के लिए वर्ष २०१४ के 'अ.भा. भवानीप्रसाद मिश्र पुरस्कार' प्रदान करने का निर्णय लिया गया। संचालन श्री युगेश शर्मा ने किया। □

हिंदी पखवाड़े का सफल आयोजन

विगत दिनों नई दिल्ली में पुराना सचिवालय भवन के राष्ट्रीय कैडेट कोर निदेशालय में मेजर जनरल सुनील कुमार की उपस्थिति में अनेक कार्यक्रम तथा हिंदी प्रतियोगिताएँ की गईं, जिसमें हिंदी टिप्पण एवं आलेखन प्रतियोगिता के लिए प्रथम पुरस्कार श्री सुनील कुमार व श्री पीतांबर सिंह को, द्वितीय पुरस्कार श्रीमती रत्ना पोहानी व श्री अमकेश कुमार को, तृतीय पुरस्कार श्री अजय कुमार व श्री लालता प्रसाद को एवं प्रोत्साहन पुरस्कार श्रीमती दयावती को; निबंध प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार श्रीमती मोहिनी मालकोटी को, द्वितीय पुरस्कार श्री सुनील कुमार को, तृतीय पुरस्कार श्री अजय कुमार को एवं प्रोत्साहन पुरस्कार श्रीमती रत्ना पोहानी को; भाषण प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार श्रीमती प्रियंका तँवर को, द्वितीय पुरस्कार श्रीमती बीना शर्मा को, तृतीय पुरस्कार श्रीमती रत्ना पोहानी को एवं प्रोत्साहन पुरस्कार श्री लालता प्रसाद को दिया गया। सभी प्रतिभागियों को मेजर जनरल सुनील कुमार द्वारा पुरस्कार व प्रमाण-पत्र प्रदान किए गए। संचालन सुश्री रेनू सैनी ने किया। □

गोष्ठी संपन्न

२६ सितंबर को वाराणसी की नागरी प्रचारिणी सभा में व्यंग्यकार श्री हरि जोशी के सम्मान में गोष्ठी आयोजित की गई, जिसमें उन्होंने अपनी तीन व्यंग्य रचनाओं का पाठ किया। साथ ही प्रो. श्रद्धानंद व श्री नरेंद्र नाथ मिश्र ने भी विचार व्यक्त किए। संचालन श्री जितेंद्र नाथ मिश्र ने तथा धन्यवाद श्री अमरनाथ चौबे ने ज्ञापित किया। □

श्रीमती पद्मा सचदेव सम्मानित

२९ अगस्त को नई दिल्ली में उपराज्यपाल श्री नजीब जंग द्वारा भारतीय भाषा में लिखी उत्कृष्ट साहित्यिक कृति 'चित-चेते' के लिए के.के. बिड़ला फाउंडेशन द्वारा प्रतिवर्ष दिए जानेवाले प्रतिष्ठित २५वें 'सरस्वती सम्मान' से वरिष्ठ साहित्यकार श्रीमती पद्मा सचदेव को सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें १५ लाख रुपए की राशि एवं प्रशस्ति-पत्र भेंट किया गया। □

म.प्र. लेखक संघ के साहित्यिक सम्मान घोषित

२६ सितंबर को भोपाल में डॉ. रामवल्लभ आचार्य की अध्यक्षता में आयोजित कार्य समिति बैठक में वर्ष २०१६ के लिए डॉ. पुष्पारानी गर्ग को 'अक्षर साहित्य सम्मान', श्री मन्नूलाल चौरसिया को 'सारस्वत सम्मान', डॉ. रुखसाना सिद्दीकी को 'पुष्कर जोशी स्मृति साहित्य सम्मान', श्री रामबरन शर्मा को 'देवकीनंदन माहेश्वरी स्मृति युवा साहित्यकार सम्मान', डॉ. पुष्पा चौरसिया को 'काशीबाई मेहता स्मृति लेखिका सम्मान', डॉ. राज गोस्वामी को 'कस्तूरी देवी चतुर्वेदी स्मृति लोकभाषा सम्मान', डॉ. अरुण वर्मा को 'डॉ. संतोष कुमार तिवारी स्मृति समीक्षा सम्मान', श्री कृष्ण मोहन अंभोज को 'हरिओम शरण चौबे स्मृति गीतकार सम्मान', डॉ. राजेश रावल 'सुशील' को 'हरीश निगम स्मृति मालवी भाषा सम्मान', डॉ. शैलेंद्र चौकड़े को 'अमित रमेश शर्मा स्मृति हास्य-व्यंग्य मंच कवि सम्मान', डॉ. सलमा जमाल को 'डॉ. कमला चौबे स्मृति लेखिका सम्मान', डॉ. रघुवीर गोस्वामी को 'पं. ब्रजवल्लभ आचार्य स्मृति संस्कृतज्ञ सम्मान', श्री अरविंद शर्मा को 'डॉ. मालती बसंत बाल साहित्यकार सम्मान', श्री रहीम होशंगाबादी को 'महमूद जकी स्मृति गजल सम्मान', श्री पंवार राजस्थानी को 'इंजी शिरढोणकर विरहमन स्मृति राष्ट्र प्रेरणा सम्मान' एवं मध्य प्रदेश लेखक संघ की खंडवा इकाई को 'मध्य प्रदेश लेखक संघ उत्कृष्ट इकाई सम्मान' से सम्मानित करने की घोषणा की गई।

इसके साथ ही भोपाल के हिंदी भवन में डॉ. रामवल्लभ आचार्य की अध्यक्षता, श्री बटुक चतुर्वेदी के मुख्य आतिथ्य एवं डॉ. उर्मिला शिरीष के विशिष्ट आतिथ्य में प्रादेशिक गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री रामबरन शर्मा, संतोष परिहार, गोपाल नारायण आवटे, संगीता गुप्ता, कैलाशचंद्र जायसवाल, आनंद कुमार तिवारी, उषा सक्सेना, आशा शर्मा ने कहानी पाठ किया। संचालन श्री युगेश शर्मा ने किया। □

सम्मान समारोह संपन्न

विगत दिनों त्रिवेणी कला संगम, नई दिल्ली में कमला गोयनका फाउंडेशन और 'व्यंग्य-यात्रा' पत्रिका के संयुक्त तत्त्वावधान में त्रिवेणी सभागार में सम्मान समारोह एवं काव्य पाठ का आयोजन किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री कमल किशोर गोयनका, विश्वनाथ प्रसाद तिवारी व कुसुम खेमानी को सम्मानित किया गया। सर्वश्री लालित्य ललित, दीपक सरीन, सुमित मिश्र, शशिकांत सिंह, संपत सरल, प्रियंका सिंह, श्याम गोयनका ने काव्य पाठ किया। संचालन डॉ. प्रेम जनमेजय ने किया।□

श्रीमती मैत्रेयी पुष्पा सम्मानित

विगत दिनों प्रसिद्ध साहित्यकार श्री हिमांशु जोशी की अध्यक्षता में गठित चयन समिति में 'नई धारा' के प्रधान संपादक डॉ. प्रमथ राज सिंह द्वारा वर्ष २०१६ के लिए श्रीमती मैत्रेयी पुष्पा को 'उदयराज सिंह स्मृति सम्मान', जिसके अंतर्गत उन्हें एक लाख रुपए की राशि, सम्मान-पत्र, स्मृति-चिह्न से तथा सर्वश्री विश्वनाथ सचदेव, रीता सिन्हा व अनिरुद्ध को 'नई धारा रचना सम्मान' से सम्मानित करने की घोषणा की गई, जिसके अंतर्गत २५-२५ हजार रुपए की राशि, सम्मान-पत्र व प्रतीक चिह्न दिए

जाएँगे। ये सम्मान १ दिसंबर, २०१६ को दिल्ली में आयोजित समारोह में प्रदान किए जाएँगे। ☐

व्याख्यानमाला आयोजित

१३ अक्तूबर को चित्तौड़गढ़ में संभावना संस्था द्वारा आयोजित 'कविता और जीवन' विषयक व्याख्यान में सर्वश्री श्रीप्रकाश शुक्ल, के.सी. शर्मा, रमेश शर्मा, अब्दुल जब्बार ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. कनक जैन ने तथा आभार सुश्री चारु पारीक ने ज्ञापित किया। इस अवसर पर साहित्यिक पत्रिका 'बनास जन' के विशेष अंक 'फिर से मीरां' का विमोचन किया गया। साथ ही मुख्य वक्ताओं द्वारा सर्वश्री विकास अग्रवाल, गोपाल जाट, संगीता श्रीमाली, पूर्णिमा चारण, मीना तरावत, पूर्णिमा मेहता, विनोद मूंदड़ा, हरीश खत्री, सीताराम जाट को साहित्यिक कृति देकर सम्मानित किया गया। ☐

हिंदी संध्या आयोजित

२२ सितंबर को प्रो. एल्मार रेनर एवं सुश्री लाली परवाना की उपस्थिति में कोपनहेगन यूनिवर्सिटी के क्रॉस कल्चरल एंड रीजनल स्टडीज विभाग में 'हिंदी संध्या' का आयोजन किया गया। इस अवसर पर श्री राजीव शहारे द्वारा सुश्री अर्चना पैन्यूली के उपन्यास 'पॉल की तीर्थयात्रा' का विमोचन किया गया, जिसमें सर्वश्री एल्मार रेनर, रश्मि सिंघला, राज कोहली व रितु कृष्णन ने अपने विचार व्यक्त किए। उसके बाद 'उत्तरी यूरोप में हिंदी की दशा' विषय पर परिचर्चा हुई, जिसमें सर्वश्री राजीव शहारे, राम प्रसाद भट्ट, विवेक शुक्ल, एल्मार रेनर, कटरीना ब्रोंद्स्तेद ने अपने विचार व्यक्त किए। ☐

पुस्तकालय का उद्घाटन

१३ अक्तूबर को हिंदुस्तानी प्रचार सभा द्वारा किए जा रहे उल्लेखनीय कार्यों की शृंखला में डॉ. भूषण कुमार उपाध्याय एवं श्री फिरोज पैच द्वारा गांधी जयंती के अवसर पर पुणे स्थित येरवदा जेल में कैदियों के लिए पुस्तकालय आरंभ किया गया। जेल में मनाए जा रहे 'बंदी दिवस' के अवसर पर आयोजित इस कार्यक्रम में कैदियों द्वारा बड़ा ही मनोरम सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया। ☐

व्याख्यानमाला आयोजित

१६ अक्तूबर को कोलकाता में श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय द्वारा आयोजित स्व. श्री जुगलकिशोर जैथलिया की स्मृति में प. बंगाल के महामहिम राज्यपाल श्री केशरीनाथ त्रिपाठी की अध्यक्षता में 'साहित्य का सामाजिक संदेश' विषय पर व्याख्यानमाला आयोजित की गई। मुख्य अतिथि श्री युनूस खाँ, विशिष्ट अतिथि श्री सज्जन कुमार तुलस्यान एवं मुख्य वक्ता डॉ. शिवओम अंबर ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. तारा दुगड़ ने एवं धन्यवाद श्रीमती दुर्गा व्यास ने ज्ञापित किया। ☐

विमोचन कार्यक्रम संपन्न

२९ सितंबर को हिंदी दिवस के अवसर पर मेरठ विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग द्वारा संगोष्ठी 'हिंदी के प्रयोजनमूलक रूप', 'पुरस्कार वितरण' तथा 'मंथन' पत्रिका का विमोचन प्रो. एन.के. तनेजा की अध्यक्षता में आयोजित किया गया। विशिष्ट अतिथि श्री राजेंद्र उपाध्याय थे। इस अवसर पर सर्वश्री नवीन चंद्र लोहानी, वेदप्रकाश वटुक, ज्ञानेश दत्त हारित, ईश्वर चंद गंभीर, किशन स्वरूप, ज्वाला प्रसाद कौशिक ने अपनी रचनाएँ प्रस्तुत कीं। विद्यार्थियों के लिए आयोजित आशुभाषण प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार कु. स्वाति को, द्वितीय पुरस्कार श्री कपिल कुमार गौतम को, तृतीय सुश्री आँचल चौधरी को, सांत्वना पुरस्कार सुश्री विनिता व कु. ज्योति को एवं काव्य-पाठ प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार सुश्री कीर्ति मलिक को, द्वितीय पुरस्कार सुश्री अंजली त्यागी, तृतीय पुरस्कार सुश्री पारुल गुलाटी, सांत्वना पुरस्कार श्री दिनेश कुमार व श्री नितिन कुमार को प्रो. एन.के. तनेजा द्वारा दिया गया। संचालन डॉ. अंजू ने तथा धन्यवाद प्रो. बीर सिंह ने किया। ☐

सम्मान घोषित

१६ अक्तूबर को राजसमंद में आचार्य निरंजननाथ सेवा संस्थान के सहयोग तथा साहित्यिक पत्रिका 'संबोधन' के माध्यम से दिया जानेवाला अखिल भारतीय 'आचार्य निरंजननाथ सम्मान' हिंदी के प्रतिष्ठित कथाकार श्री सुभाष चंद्र कुशवाहा को उनकी कृति 'लाला हरपाल के जूते' के लिए देने की घोषणा की गई। सम्मानस्वरूप उन्हें इक्यावन हजार रुपए की राशि, शॉल, श्रीफल, प्रशस्ति-पत्र एवं स्मृति चिह्न भेंट किया जाएगा। साथ ही 'आचार्य निरंजननाथ विशिष्ट साहित्यकार सम्मान' राजसमंद के प्रसिद्ध कवि एवं कथाकार श्री अफजल खाँ अफजल को देने की घोषणा की गई। सम्मानस्वरूप उन्हें ग्यारह हजार रुपए की राशि, शॉल, श्रीफल, प्रशस्ति-पत्र एवं स्मृति-चिह्न भेंट किया जाएगा। ☐

राष्ट्रीय संगोष्ठी संपन्न

२४ सितंबर को लखनऊ में दलित साहित्य परिषद् के तत्त्वावधान में यू.पी. प्रेस क्लब के सभागार में पाँचवें दलित साहित्यकार सम्मेलन में 'दलित अस्मिता का सृजनात्मक साहित्य और परंपरावादी दखल' विषय पर श्री माता प्रसाद की अध्यक्षता में राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें मुख्य वक्ता डॉ. एन. सिंह तथा विशिष्ट वक्ता प्रो. श्योराज सिंह 'बेचैन' थे। सर्वश्री टी.पी. राही, सुरेश उजाला, के.के. गौतम, राम स्वरूप शंखवार, पी.आर. पाल, कृष्णाजी श्रीवास्तव, यशवंत वीरोदय, प्रीति सिंह, सोहनलाल 'सुबुद्ध', एस.पी. गौतम, गुलाब चंद, अनिल कुमार दिनकर ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर स्वामी अछूतानंद और डॉ. अँगनेलाल की त्रैमासिक पत्रिका 'दलित संवेग', मासिक 'डिप्रेस्ड एक्सप्रेस' एवं श्री आशाराम जाग्रत के काव्य-संग्रह 'कविता कला विहीन' का लोकार्पण किया गया। दलित साहित्य परिषद् द्वारा स्वामी अछूतानंद की स्मृति में 'काव्यचक्र सम्मान' पुरस्कार रु. १०,०००/- प्रख्यात साहित्यकार डॉ. एन. सिंह को, डॉ. अँगनेवाले की स्मृति में दस हजार रुपए का 'कथाचक्र सम्मान' पुरस्कार प्रो. श्योराज सिंह 'बेचैन' को तथा दो हजार रुपए का 'शोध चक्र सम्मान' पुरस्कार श्री अनिल कुमार दिनकर को प्रशस्ति-पत्र, स्मृति चिह्न और शॉल प्रदान कर सम्मानित किया गया। संचालन डॉ. टी.पी. राही ने तथा धन्यवाद श्री सोहनलाल 'सुबुद्ध' ने किया। ☐